रसकपूर

SAWAI JAGAT SINGH

Sawai Jagat Singh was born on 28 March 1784 A D and ascended the gadi on 2nd August 1803 A D

Krishna Kumari a daughter of Maharana Bhim Singh of Udaipur was betrothed to Maharaja Bhim Singh of Jodhpur who died before the marriage could take place She was then betrothed to Sawai Jagat Singh of Jaipur Maharaja Man Singh the successor of Bhim Singh claimed her as his bride A war ensued between Jaipur and Jodhpur Amir Khan Pathan of Tonk put pressure on the weak Maharana who committed the most heinous crime in the annals of Mewar by poisoning the innocent girl who cheerfully sacrificed her life to save her father from further trouble *This tragedy took place* on 21st July 1810 A D

He had twenty two Ranis several Paswans and **RASKAPOOR**, *the dancing girl was in his* favour

It is said that *the Ranis and the Paswans* thirty eight in all and Virohan *Nazir* ascended the funeral pyre on the demise of Sawai Jagat Singh

जयपुर में जौहरी बाजार स्थित
साँच का दरवाजा
आज भी रसकपूर की याद दिला रहा है।
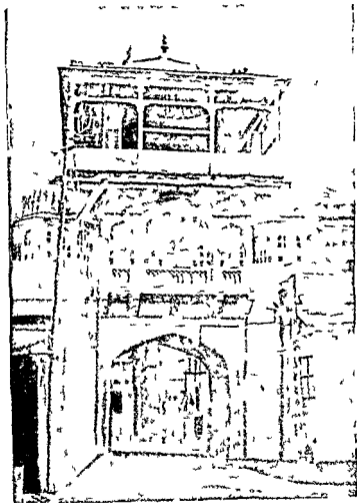
मेरे बचपन का सोन महल! जहां बाल विहगिनी की तरह मुक्त रूप म बिचरती रही। जहा मेरे कदमो ने घुघरू छमका कर गीत को जन्म दिया संगीत की स्वर लहरी पर।

रसकपूर

(एक ऐतिहासिक उपन्यास)

उमेश शास्त्री

देवनागर प्रकाशन,

कृति — रसकपूर

कृतिकार — उमेश शास्त्री

संस्करण — 1980

मूल्य — 40/–

प्रकाशक — देवनागर प्रकाशन
चौड़ा रास्ता जयपुर

मुद्रक — एलोरा प्रिन्टर्स जयपुर

मेरी महत्वाकाक्षाओं का राजप्रासाद

सुदर्शनगढ (नाहरगढ)
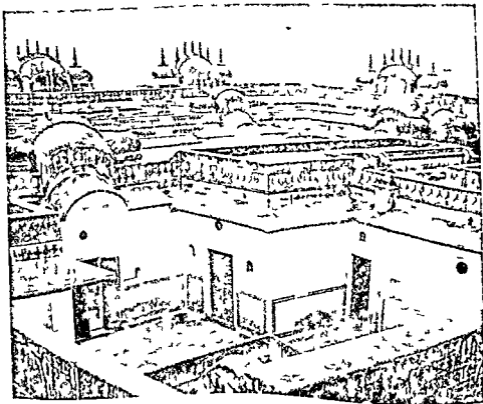
रियासत की अधीश्वरी ने अरावली के शिखर पर यह जीते हुए सुदर्शनगढ़ में शांति के साथ जीवन जीना चाहा था किन्तु हाय रे दुर्भाग्य ! प्रेम का उपहार ! इन्ही दीवारों में जिंदा चुने जाने का पुरस्कार मिला ।

मुद्रक एलोरा प्रिण्टस, जयपुर
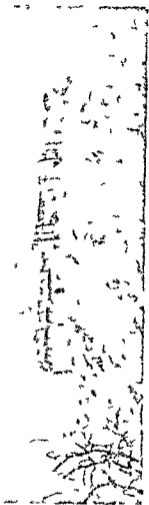
अरावली के इठलाते शिखर पर कछवाहों का वैभव जयपुर के उत्तरी छोर पर सुदर्शनगढ़

मैं इन्ही घाटियों से उतर कर मेरे उनसे मिलने को चली आई भाग आई दीवारें लांघ कर और आज तक भटक रही हूँ मेरी चेतना के अज्ञात अंधकार में

मेरी कहानी मुंह जुबानी है आप लोगों को सुनाकर पीड़ा नहीं बांटना चाहती हूँ सिर्फ उन बहिन बेटियों को आगाह करना चाहती हूँ जो जीवन मे स्वाप्निल क्षण सजाती रहती हैं ।

जन्म भूमि को समर्पित

□ एक

न मैं हिंदू और न मुसलमान हूं महज एक औरत हूं—वह भी सत्रहवीं सदी की। यह सच है कि मेरी जिन्दगी में मजहब कभी बाधक नहीं हुआ।

कुछ लोग ही नहीं इतिहास हर बार दुहराता है कि मैं कौम से मुसलमान थी। लेकिन मैंने कभी अपने आपको मुसलमान नहीं कहा और न इस्लामी आंधी में कभी तिनके की तरह ही उड़ी। कोई नहीं जानता लेकिन मेरी मां का कहना था 'तू हिन्दू है शहर के जाने माने पंडित की औलाद है।" लेकिन मैंने कभी अपने आपको हिंदू भी न कहा और न पंडितों के रूढ़िग्रस्त संस्कार ही मेरे स्वभाव में आये।

मैं मंदिर भी जाती, प्रार्थना दुहराती, दीप जलाती तुलसीदल और चरणामृत भी सहर्ष लेती। मुझे हिंदू धर्म से कभी नफरत न रही अपितु रास लीला को देखकर मैं भी गोकुल की ग्वालिन की तरह प्रेम विभोर हो मन ही मन नाचने लगती।

मैं आयतें भी पढ़ती और परवरदिगार से मिन्नतें भी मांगती। यहां तक कि रोजे भी रखती और बकरीद भी खुशी के साथ मनाती। पैगम्बर मोहम्मद

साहेब के उसूलों से बेहद प्रभावित थी और अलना नालों पर मेरा हमेशा इत्मीनान रहा।

मेरी मां मुसलमान थी और जैसा कि आपको बताया मेरे पिता हिंदू थे और मैं इन दो संस्कृतियों की नाजायज औलाद। मैं भी आम औरतों की तरह औरत हूं लेकिन इतिहास ने मुझे विशिष्ट स्त्री का खिताब दिया। मैं उन नजरों की दुआ चाहती हूं जिनकी कलम ने मुझ नाचीज पर इतनी बड़ी मेहरबानी की। आम आदमी इसे मेरा अहोभाग्य कहेगा लेकिन मैं खुद इस दुर्भाग्य कहती रही हूं। किसी वक्त यह सच भी था कि महारानियां पडदायतें बाईयां बेगम शहर की खूबसूरत सेठानियां एवं जानी मानी तवायफें मेरी किस्मत को सराहती हुई मुझ से नफरत किया करती थीं उनके लिए मेरा नाम जलती हुई ठंडी आग थी जिसमें उनके लिए जीना भी मुश्किल था और मरना भी दुश्वार। मैं राजराजेश्वरी कहलाया करती थी।

यह बात अधिक पुरानी नहीं है कल ही की तो बात है लेकिन कल और आज में कितना बड़ा फर्क है? कल जो मेरी हाजरी में जी हजूरी करते थे आज वे मुझे पहचानने को भी तैयार नहीं हैं। जानकर भी अनजान बन जायें। यह कोई नई बात नहीं है जमाने का रिवाज है वक्त के साथ सब कुछ बदल जाता है।

यह राजराजेश्वरी आज उन मामूली औरतों से भी गई गुजरी बदनाम बदकिस्मत बदचलन औरत है जो भूखी नंगा रह कर भी इज्जत के साथ अपनी जिन्दगी बसर करती है। कल सारा शहर अपना था और आज शहर तो सपना है अपना भी अपना नहीं है। इस समय सिर्फ इतना ही कहना चाहूंगी कि एक अभागिन बदनाम मामूली औरत हूं जिसे इस जमाने ने वेश्या कहा और मुंह पर थूकते हुए दुत्कारा। वह दिन भी मैं नहीं भूल पाई जब मेरे मुख की छवि के दर्शन के लिए हजारों आदमियों की भीड़ त्रिपोलिया द्वार से काचमहल तक सड़क के किनारे खड़ी तड़फती थी। नवाबों की बेगमें थाल में सुनहली गिन्नियां भर कर मेरी जी हजूरी में खड़ी रहती और मेरे हुस्न तथा किस्मत की दाद दिया करती थी यहां तक कि बाईयां और पडदायतें तथा छोटी रानियां भी मुझे खुश रखने के लिए हर घड़ी चिकनी चुपड़ी बातें किया करती थी। आपको ऐतबार न आयेगा लेकिन यह हकीकत है कि मेरी इनायत के बिना पटरानीजी भी उनसे नहीं मिल पाती थी।

मेरे हुजूर मेरी गिरफ्त में थे।

वे रात दिन मेरे ही महल में रहते और मेरे बिना एक घड़ी भी श्वास लेना मुश्किल था। वे अपने हाथों से महकती केतकी का गजरा मेरी वेणी में गूंथते, गुलाब

ग्रोर केवड़ का इत्र मेरी इस देह पर खुद अपने हाथों से लगाते। आज तो सिर्फ यादें हैं स हाईया हैं वह एक दपरणी स्वप्न था जो शीशमहल की तरह टूट कर गिर पड़ा। अब जमाने की नजर में सिर्फ वेश्या हूं नफरत हूं, समाज की गन्दगी हूं। साफ शब्दों में कहा जाय तो एक रंडी हूं।

मुझे भी एक भोले भाले इन्सान ने प्यार किया था लेकिन मैंने उस शरीफ आदमी को मामूली कहा और उसके प्यार को कभी इज्जत न दी। वह निहायत गरीब नेक इन्सान इश्क के रोग में मेरे नाम के साथ इस संसार से विदा हो गया और मैंने उस दो गज जमीं पर कभी एक आंसू भी न गिराया। आज विचारती हूं कि उस इन्सान ने भी मुझे बेवफा औरत कहकर ही पुकारा होगा।

मैंने जिस आदमी को देवता की तरह जिन्दगी भर पूजा, जिसके लिए अपना सब कुछ अर्पित कर दिया। अपना मदिराया यौवन और गदराया बदन व बेदाग सौन्दर्य की मुस्कुराहट एवं मधुर कुटिल दृष्टि में पराया हो गया। जिसे पाकर मैंने अपना अस्तित्व, सुख व आकांक्षाओं को उसी के साथ पूरी तरह सम्पृक्त कर दिया था उसने भी मुझे बदजात बदचलन कह कर कांटे की तरह अपने दिल से ही नहीं शहर से बाहर निकाल फेंका। कल जिसकी श्वास मुझ से गर्वायित थी आज मुझ सुवदन की गंध उसी के लिए विषगंध बन गई और वह मेरे नाम के अक्षरों से भी नफरत करने लगा।

अब मैं रजनीगंधा नहीं हूं, सिर्फ विषगन्धा अथवा नागफणी हूं जिसके नाम से स्वप्न भी टूट कर बिखर जाते हैं। यह जमाना कुछ भी कहे लेकिन मैं आपसे तस्दीक्न बयां करती हूं मैं आज भी बेदाग गुनाह हूं, मेरी गंध अभी भी झूठी नहीं है। मैंने कभी बेवफाई नहीं की। खुदा की कसम! भगवान जानता है कि उन के सिवाय इस गुलाब की पंखुरी पर किसी और अधर के हस्ताक्षर नहीं है। इस नापाक शरीर पर दाग हो सकते हैं लेकिन मन की चादर पर कोई भी कोना गंदा नहीं है। मैं महारानी अथवा रानी का पद नहीं पा सकी और इस पद को पा लेना कोई बड़ी बात भी न था। उनके छत्तीस रानियों की खासी भीड़ थी पड़दायतों और बाईयों की गिनती तो अनगिनत थी। उस भीड़ में मिल जाने की कामना मेरी कभी न रही।

हां, तो मैं आपको कह रही थी कि मैं वेश्या कभी न रही और न रानी ही। राजाओं के यहां ब्याहता स्त्री ही रानी कहलाने योग्य है, चाहे वह राजकुमारी हो या भिखारिन। तभी तो यह कहावत प्रसिद्ध है 'राजा के घर आई और रानी कहलाई।' मेरा न हिन्दू रीति से विवाह हुआ और न शादी ही, निकाह भी न हो सकी।

डोली मे बैठकर अक्सर महल की देहरी उलाघी लेकिन आभूषणो के भार से दबी शर्मीली गूगी दुल्हन की तरह नही अपितु मन के देवता को गुलाबी गध अर्पित करने की लालसा के साथ। यद्यपि इस देह का भी श्रृगार नई नवेली दुल्हन सा ही होता था। हाथो मे मैंहदी के चित्र और पैरो मे महावर की लाली। वेणी मे महकते गजरे और कलाईयो मे गधायित गैंदे की मालायें। जूडे मे गुलाब का ताजा फूल या नर्गिस की कली। सारा बदन केवडे की खुशबू से नहाया हुआ रहता। कसूमल ओढनी मे उभरती यह स्वर्णिम देह, नयनो मे मिलन का उल्लास और हृदय मे वासना का उफनता नीलाभ समुदर उस पर भी सहज भाव मे लाज के गजरे।

हर रात श्रृगार किया जाता डोली सजती फूलो की सेज पर कदम फिसलते जाम छलकते लज्जा के गजरे टूटते चूडियो के रग बिरगे काच खनक कर लुढक जाते, सेजो पर सलवटें भावरे सी पडती मफेद मखमली चादर पर कपूर इलायची के गध से महकता पान का पीक गिरकर हवा के साथ महल की बात गलियारे तक को कह देता। एक नही दो नही हजारों दीपक कभी जलाये जाते और कभी बुझाये जाते लेकिन फिर भी यह सुहागिन कुवारी ही रहती थी।

मैं आज भी अक्षत कुवारी हू। यह सच है कि इस जिन्दगी ने हर रात सुहागरात मनाई हैं। किसी के नाम का अमर कुकुम आज भी मेरी माग मे भरा है। भाल पर चमकती लाल बिंदिया पर जाने पहचाने हाथ के हस्ताक्षर हैं और आखो से गल कर बहता हुआ काजल आज भी उन्माद की कहानी कह रहा है। कोई भी इसे गधर्व विवाह से सत्यापित कर सकता है और मुझे विवाहित स्त्री कह सकता हैं, किन्तु यह जमाना मुझे नर्तकी कहता रहा है और सरकारी चापलूसो द्वारा लिखा गया इतिहास भी शताब्दियो तक इसी नाम को दुहराता रहेगा।

काश मैं महलो का स्वप्न न देखकर किसी गरीबखाने की मलिका होती तो कितना अच्छा होता? किसी टूटी झोंपडी की मालकिन हो साझ के समय सुने प्रकाश के नीचे खडी होकर मेरे उस श्रमजीवी का इन्तजार करती तो उस क्षण कितना आनन्द आता? या किसी फकीर की औरत बन कर भीख की एक रोटी मे से आधी रोटी खा उसकी जघा पर अपना सिर टेककर यह उम्र गुजार देती तो कितना अच्छा होता? किन्तु मैंने तो मुमताजमहल बनना चाहा। मैं यह भूल गई कि इस दुनिया मे शाहजहा सिर्फ एक ही हुआ था और ताजमहल फिर कभी न बन सकेगा। सोने चादी की जगमगाती ढेरी पर बैठकर मैं नूरजहा ही बन कर अपने जहागीर को नजराना कर पाई न मुमताज बन कर उनके लिए यादगार बन सकी और न किसी गरीब की जोरू बन कर उसकी आखो मे समा सकी। न महल की रगीनियो

न धन मिला और न झोंपड़ी में बैठकर सुख की किरण ही देख सकी। जब मैं सगी रसरेजिन को देखती हूं तो मेरा दिल घायल सा तड़फड़ाता है वह काली कलूटी औरत किस चैन के साथ अपनी जिन्दगी जी रहा है? उसका शौहर उस शीशे से कम नहीं समझता है। किसी ने सच ही कहा था— रूप की रोय और करम की खाये। मैं अपने आपको अभागिन मानकर ही मनतोष ले सकती लेकिन यह भी मेरे हाथ न रहा। इतना होने पर भी मैं स्वयं को अनन्त कुंवारी कहूं? यह भी नामुमकिन है! मैं यह विवश हुआ सिन्दूर कहां छिड़ दूं? काजल की कोठरी में बैठकर किवाड़ कब तक बन्द रखूं? ये कजरारी आंखें जिन्दगी के मारे राज चुपके चुपके कह देती हैं। महकते गजरों के मुरझाये फूलों की गंध को कैसे कम कर दूं? पारदर्शी शीशे की उस चमक को कैसे भूल जाऊं जिसमें उनका रूप मेरे बदन पर प्रतिबिम्बित होता रहा है। मैंने अपनी मखमली भुजाओं को किसी कमनीय कण्ठ में हार की तरह पहिना कर सौरभ भरी है जनदपणी चुनरिया पर पान के महकते पत्तों का दाग आज भी मदहोश रातों की दास्ता कह रहा है। इलायची और कपूर की महक उन बीते क्षणों की याद में मुझे पागल कर देती है। मुझे ऐसा भान होता है कि—मेरे सरकार मुझसे दूर नहीं हैं अपितु अपने दोनों हाथों से मेरी आंखें बन्द कर मुझसे आंख मिचौनी खेल रहे हैं। फिर भी मैं अपने-आपको कुंवारी कहती रहूं? यह अन्याय नहीं तो क्या है?

भगवान ने मुझे क्या नहीं दिया? पूर्ण यौवन, मदभरी अंगड़ाईयां, ज्वार सा रूप, साथ ही कला के प्रति अभिरुचि भी। प्रणय भी ऐसा मिला जो पूर्ण रूप से मेरे प्रति समर्पित। फिर भी हूं मैं एक अभागिन। रूप की रानी यौवन की मलिका आज एक भिखारिन की तरह गली गली में दो रोटी के लिए भटक रही है। हर दरवाजा ठोकर मार रहा है हर जुबां गालियां बक रही है, हर नजर मेरे मांस पिण्ड को काग की तरह नोच लेना चाहती है। आम आदमी मेरी अस्मत का गाहक बनना चाहता है। इन मुर्झाये फूलों को अपनी हथेलियों से मसलकर मुझ निगोड़ी को सड़क पर फेंक देना चाहता है। किसी भी नजर में मेरी पीड़ा के प्रति सम्वेदना नहीं है। मेरे फटे हुए आंचल से किसी को सहानुभूति नहीं है। टूटी हुई इस वीणा को छेड़ने के लिए आज अंगुलियां हवा में तैर रही हैं कोई भी खण्डित तारों की गूंगी आवाज को सुनना नहीं चाहता। यह भी गनीमत है कि यह दुनिया पगली समझ कर पत्थर नहीं मार रही है।

मैंने प्रणय किया है मुझे गौरव है अपने निस्वार्थ प्रेम पर जो क्रूर मुझे दण्ड मिला है-उसकी भूमिका में मेरा एक ही अपराध है मेरी निश्छल भावना। प्रेम करने वाले हृदय के टूटने पर रोते नहीं हैं अपितु आग की तरह जलते हैं। मैं

की औलादें कहलाती हैं, लड़कियो की तकदीर के बारे में कुछ कहना भी शर्मनाक बात होगी। उनका जन्म बाजार में बटने के लिए होता है। उन्हें पग-पग पर बाल बाप ही उनके जिस्म को नोचने और अस्मत को लूटने के लिए भेड़िये की तरह ललचाते रहते हैं। मर्दों में जमादार, पहरेदार रसोईदार जलघड़िये और दरबारी द्वारा पैदा की गई औलादें राज सिंहासन या किसी ऊँचे ओहदे पर आसीन होकर जनता पर राज्य करती हैं अथवा सरदार कहे जाते हैं। यहां आकर मैं यही विश्वास करती हूं कि भाग्य के इशारे पर इन्सान नाचता है।

मुझ जैसी औरतों की कहानी तो कुछ अजीब ही है। मैं भी मां बनी और वह भी कुंवारी मां! कुंवारी मां कुन्ती भी थी, किन्तु उसकी और मेरी कहानी में भी रात दिन का अन्तर है! मुझे भी एक बार ही नहीं अपितु इस उम्र में मां बनने का तीन बार अवसर मिला। मैंने भी आम औरत की तरह पीड़ सही किन्तु मेरी पीड़ा का कोई अर्थ नहीं। दो बार मेरी औलाद गिरा दी गई और तीसरी औलाद जो लड़की हुई थी—उसका मुँह अवश्य देखा था। उसके बाद क्या हुआ? वह किस गली में है? मेरी राजकुमारी कहां भटक रही होगी? कुछ नहीं कह सकती हूं। मां बनने पर मुझ से वे बहुत नाराज हुए थे और मैं भी नहीं चाहती थी कि औलाद के कारण मेरे सरदार मुझसे नाराज हो जायें! लेकिन आज इस अभागिन मां का हृदय विदारण हो रहा है अंग-अंग चीख चील्ला रहा है मुझे ऐसा लगता है कि वह नन्ही सी कलि अपनी मां से पूछ रही है क्या मेरा जन्म इसी गन्दगी के लिए किया था? मां का त्याग व बलिदान भी निरर्थक गया। मैं हृदयहीन निष्ठुर मां हूं जिसका दूध भी जहर है मैं सुन्दर पापिन हूं मैंने अपने नापाक हाथों से अपनी सन्तान की हत्या की है अपनी आकांक्षाओं के कारण एक मां ने अपनी बेटी को वेश्या बनाया। आज मैं अपनी बच्ची का मुख देखने के लिए विकल हूं लेकिन कभी न देख सकूंगी। मैं ही क्या? मेरी जैसी हजारों मातायें इस दर्द से विकल हैं और हमारी राजकुमारियां किसी कोठे में बैठकर अपने जन्म देने वालों या भाईयों का जी बहला रही होंगी। मैं विवश हूं मां होकर भी कुंवारी हूं और बेसहारा औरत हूं। इसे भाग्य का खेल कहूं या कर्म फल! कुछ नहीं समझ पा रही हूं।

मैं नहीं चाहती कि मेरे दर्द के साथ किसी को सहानुभूति हो।

न बीते दिनों की बहारें फिर से देखने की तमन्ना है और न इस संक्रमण में जीने की कामना, केवल एक पश्चाताप है कि अपने सपनों का महल कोरा कागजी था। मां मुझे अधिक तालीम दिलाने के पक्ष में न थी लेकिन पंडित जी मुझे विदुषी बनाना चाहते थे। मौलवी जी मुझे फारसी सिखाते और मेरे तथाकथित पिता

मुझे संस्कृत का अध्यापन कराते थे। भर्तृहरि का नीतिशतक, हितोपदेश, कुट्टनीमतम आदि ग्रंथ मैंने बड़े चाव से पढ़े। किताबें हमेशा मेरे साथ रहीं, मेरे हुजूर ने भी मेरे लिए पोथी खाने के दरवाज खोल दिये थे। रियासती इतिहास की मैं पहली औरत हूँ—जिसे पोथी खाने की सुविधा मिली वर्ना औरतों का किताबों से क्या रिश्ता?

औरतों के लिए तो सुनहरी किनारी के जरी या कश्मीरी सिल्क की ओढ़नी कुर्ते कसीदार जगमगाते लहंगे हीरों पन्नों के स्वर्ण आभूषण सोने चांदी के प्याला म छनकती मदिरा व विलासिता के प्रसाधन सुलभ हैं। स्त्रियाँ ऐश्वर्य के लिए जन्मी हैं शरीर ही उनका सर्वस्व है, मन तो पराया है ज्ञान विज्ञान से इनका क्या सम्बन्ध? सब कुछ मिल सकता है लेकिन पढ़ने को किताबें नहीं। पटरानी व रानियों ने पोथी खाने की ओर कभी कदम न रखा किन्तु मैं रियासत के पोथी खाने की भी मलिका रही हूं तभी तो अपने आपको भाग्यवान मानती आई हूं। यह सब मेरे जहांपनाह की मेहरबानी थी उनकी इनायत से मुझे सब कुछ मिला मैं इन्कार नहीं कर सकती हूं। वर्ना गलियों मे जन्मी एक रंडी के लिए पोथीखाना?

आप मे से बहुत लोग तो इस बात से परिचित हैं कि किसी युग मे वेश्याओं के कोठे ही राजकुमारों के लिए नीति के शिक्षा केन्द्र थे। राजा महाराजा व सामन्त अपनी सन्तानों को वाराङ्गनाओं के यहां सहर्ष भेजते थे राज दरबार मे वेश्या कहलाने वाली प्रतिष्ठा की दृष्टि मे देखी जाती थी। एक युग वह भी था—जब वेश्या को नगरवधु कहा जाता था और राजा महाराजा व सामन्तों के रत्नजटित मुकुटों की प्रभा उनके चरण कमलों पर गिर अंगड़ाई जन्म देती थी। आज समय कितना परिवर्तित हो चला, उसी वाराङ्गना को कुत्सित व घृणा की दृष्टि से देखा जाता है तथा उसे समाज की गन्दगी कहा जाता है। —मैंने कभी वेश्या न बनना चाहा था। बचपन के सपने भी निराले ही थे। एक शरीफ खानदानी औरत की तरह जिन्दगी जाने की कामना थी, यह कभी कल्पना भी न की थी कि ऊँची तालीम पाकर भी तवायफ का पेशा करूँगी। मेरी मा मुझे रियासत की राजरानी बनाना कभी नहीं चाहती थी वह ऊंचे घरों के भीतर सड़ रही गन्दगी को जी कर आई थी और उस सडान्ध म न वह दम तोड सकी थी और न ही खुली श्वास ही ले पाई थी वह इस घुटन म न घिरती तो शायद किसी घर की बेगम होती और मैं भी अपने मां-बाप का प्यार पाने का हक रखती। मुझे जन्म देने वाले जिन्हें मैंने कभी पिता नहीं कहा और न उन्होंने ही मुझे खुले आम कभी बेटी के रूप म स्वीकारा। मैं हमेशा उनको पंडित जी ही कहती रही और वे मुझे 'बाईजी'। एक बाप अपनी

ही वेटी को बाईजी कहे ? हृदय फट जाता है और आँखों के आगे अन्धेरा घिर आता है। उनकी इच्छा थी कि मैं रियासत के महाराजा को अपनी नजरों में कैद कर लूँ मेरे ही इशारे पर राजा नाचता रहे यह बहुत मुश्किल था लेकिन उनकी ही इच्छा पूरी हुई।

मैं महारानी भी बन सकती थी। उनसे विवाह कर अपने आपको सुखी बना सकती थी किन्तु यह प्रस्ताव कभी उनके सामने प्रस्तुत न कर सकी। यदि ऐसा हो जाता तो आज यह तवायफ या नर्तकी नहीं अपितु ठकुराइन कहलाती और इज्जत के साथ मैं और मेरी औलादें इस राज्य पर शासन करती ! सच ! इतिहास ही बदल जाता।

लेकिन यह नहीं हो सका और मुझे उस शहर की बाहर दीवारों को भी देखने की आज इजाजत नहीं है।

प्रणय का पुरस्कार मिला प्राणदंड !

वह भी उनके हाथ से नहीं अपितु जल्लादों के हाथ से जिसकी मैंने कभी कल्पना भी न की थी।

आदमी कितना कठोर हो जाता है ? अपनी भृकुटि के तनिक से कुटिल हो जाने पर कण्ठ के हार के मोतियों को पैरों से कुचल देता है। वर्षों का साधना निष्कपट प्रणय निस्वार्थ त्याग का प्रसून अपनी ही गंध में घुट कर रह गया कुछ भी न कह सका उस हवा से जिसकी श्वास को सौरभ लुटाई थी बिना किसी शर्त के। न अनुबन्ध रहा और न सौगन्ध की गन्ध ही।

मुझे गहरी पीड़ा है मुझे प्राणदण्ड मिला इस बात का गम नहीं है। काश ! वे खुद अपने हाथों से मुझे जहर पिलाते तो मैं बिना किसी हिचक के उनके मुख का पीक समझ कर पी लेती और हँसते हँसते उनकी गोद में इन बोझिल श्वासों को छोड़ देती। उस मृत्यु का सुख कितना मधुर व आनन्दप्रद होता ! इस कल्पना से मैं आज भी मधुर स्पन्दनों से आनन्दित हो उठती हूँ। हाय रे दुर्भाग्य !

मैं खुद भी गुनहगार हूँ। मैंने राजा से प्यार किया और प्यार के रेशमी पल्लू में हमेशा सिमेटना चाहा। मुझे उनसे कोई गिला नहीं है उनके लिए रियासत सबसे बड़ी थी और मेरे लिए वे। मैंने उनको कभी महल की चारदीवारी में कैद रखना नहीं चाहा किन्तु वे महल की रेखा तोड़ना ही नहीं चाहते थे। हम दोनों के मध्य यह एक काँटा था जिसका कारण मुझे समझा गया। इसी कारण मुसाहिब

व अन्य सामन्तगण मुझसे अप्रसन्न थे। रानियां पडदायतें, पासवान तो मेरे विरुद्ध थी ही क्योंकि मैं उनकी सौत थी। सौतिया डाह क्या नहीं कर सकती ? इस तरह एक बहुत बड़ा वर्ग मेरा दुश्मन बन गया था। मेरे पक्ष में इने गिने आदमी थे जिन्हें मैं नेक आदमी कह सकती थी किन्तु वे सभी रियासत की नजर में द्रोही थे। मेरे साथ ही उन सभी को ओहदे से उतार दिया गया, घर व धन कुर्क कर लिये गये, सरे आम उनकी नंगी पीठ पर कोड़े बरसाये गये। उनकी स्त्रियों का पर्दा हमेशा के लिए उठ गया। उनके बाल बच्चे आज रोटियों के लिए तरस रहे होंगे। आज व सब मेरे नाम से नफरत करते होंगे लेकिन मैं क्या कर सकती हूं ? किसी ने सच ही तो कहा है—"मर गया जिसका बादशाह रोते हैं उसके वजीर'—उन भले आदमियों ने रियासत का जी जान से सेवा की दिन रात दरबार साहेब को अन्न-दाता कह कर जी हुजूरी में रहे और वक्त-बेवक्त पर युद्ध यात्रायें की तथा वीरता के कारनामे पाये। न उन मेरे वफादार आदमियों का ही कोई अपराध था और न मेरा ही मेरे हुजूर का भी नहीं, सिर्फ वक्त का बदलना था, किसी का कोई कसूर नहीं।

यह सच ही है कि रूप स्त्री का भूषण है तो यह ही उसका शत्रु भी। मैंने कभी रूप नहीं चाहा था और न इतनी नजाकत ही। इसी सौंदर्य ने मुझे सोने की सेवरों के बीच हीरों की ढेरी पर बिठाया और इसी के कारण मुझे अंधी दालान के बीच घुटन में कैद के दिन देखने को मिले—और फिर मिट्टी की दीवार में जिन्दा चुनने का आदेश! मैं उस मौत को नहीं स्वीकार कर सकी। मृत्यु के कुचक्र को तोड़ कर वहां से भाग आई—भागते हुए इतनी दूर आ गई हूँ जहां से मुड़कर पीछे की ओर देखना बहुत मुश्किल है! रियासत में क्या हो रहा है ? मेरे राजाजी कैसे हैं ? मेरी जगह किसी अन्य ने ले ली होगी। सेज सूनी न रह सकी होगी उसकी सलवटों में किसी अन्य कुमारी के बदन की गंध बिखर गई होगी। मेरे सरकार की ऐय्यासी में कोई फर्क नहीं आया होगा—क्योंकि राजा महाराजा का जन्म ही भोग करना है और स्त्रियां तो भोग की साधन हैं। मेरे हुजूर के महल उसी तरह जगमगा रहे होंगे लेकिन मेरे हृदय के घावों में नासूर जन्म लेने लगे हैं फिर भी खामोश हूँ। यह जिन्दगी खामोशी के साथ गुजार देनी होगी। मैं औरत हूँ, और मेरे हिस्से में फकत आंसू आये हैं मेरी क्या हिमाकत कि मैं उनसे कुछ अर्ज करूं ? आज मेरे अफसाना का ब्यां करना पड़ रहा है, इसका मुझे गहरा अफसोस है लेकिन इसलिए इस राज को खोल देना चाहती हूं कि तवारीख में लिखा सिर्फ हम कभी बेपर्द न कर सकेगा और उन पर किसी तरह का कीचड़ न उछाला जाये तथा मेरी जैसी औरत की मजबूरियों को तवायफ की

सना न दी जाये यद्यपि मेरी खामोशी बेजुबानी नही है, रियासतो की ड्योढियो मे और नबावो के हरम मे तथा सामन्तो के रावले मे बहुत शोरगुल व चीख चिल्लाहट है लेकिन उसे कौन सुनता है ? उनके दर्द को सुनने की किस के पास फुर्सत है ?

मैं अपनी तौहीन से जलनफरोश नहीं हूँ या सिर्फ अपने जख्मो के दर्द से घायल नही हूँ आज मेरे सीने म सदियो से गुमनामी की जिन्दगी जी रही उन उदासियों की रूहे चीख रही हैं—जिन्होन कभी आसमान म चढते सूरज और तारों की महफिल म डूबने हुए चाद को नही देखा और न होली दिवाली पर शहर की जगमगाहट ही । उनकी बला स शहर जिन्दा हो या मुर्दा ! वे तो खुद मुर्दानगी जी रही है । उनका कैदखाना ही उनके लिए ससार है जन्नत है और जहन्नुम हैं । जवानी म पहिल उन्होने उस गाव मे कदम रखा था और अर्थी के साथ ही कदम बाहर निकल पायेगें । इमस पहिले देहरी उलाघना सजा ए मौत है और नगी पीठ पर कोडे खाना । ये रुह न खदकशी हो कर सकती हैं और न जिन्दगी ही जी सकती हैं । ये वे पुतलिया है-जिन्हे चमचमाते कपडे और गहनें पहिना कर कोई सूत के धागे से बाध कर इशारे पर नचाता रहे !

सगमरमरी आगन पर इनके स्वप्न बिखर गये हैं दीवारें इनकी नशो मे बहता हुआ खून पी गई हैं—और भर गई है भीतर एक ऐसी दहशत जिसके कारण ये गूगी बुतें पागलों की तरह जिन्दगी जीने को विवश हो चली हैं । इस माहोल मे रहते हुए ये प्रेतात्मायें बन गई हैं और बहुत जोर से चीखना अट्टहास करना, मुक्त कण्ठ से रोना और फिर अपने आपको सुहागिन की तरह सजा कर आदमकद शीशे के सामन खडी होकर एक दूसरी को नोंचना ही इनकी आदत बन गई हैं । शराफत क नाम पर य वहशत भरी जिन्दगी जी रही हैं और उन दीवारो के बाहर देखना कभी पसन्द करती ही नहीं ।

मैंने जिन्दगी जीकर क्या पाया ? कुछ भी तो नही फिर भी बहुत कुछ ! मैं एक वह औरत हूँ जो उन ऊची दीवारो को देख कर आई हू । मरी उन बहिनों बटियों को आगाह कर देना चाहती हू जो उन महलो क बीच स्वर्ग की कल्पना करती हैं । ये सगमरमरी आगन बहुत कठोर हैं और दीवारों के बीच सिर्फ अधेरा है । सोने चादी के ये आभूषण जहरीले साप बिच्छू है । इन महलो के भीतर जहरीली आग की नदी है इस नदी के किनारे जो पहुँच जाती है वह जिन्दा बाहर निकल आये यह नामुमकिन है । विश्वास नहीं तो मेरी तसवीर देख कर अन्दाज करलें ।

□ दो

मेरा जन्म रियासत की पुरानी राजधानी मे हुआ—जो इतिहास मे अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। मुगल सल्तनत ने भी जिसे इज्जत व शीश की और जो अपनी सुन्दरता के लिए ससार में प्रसिद्ध है। अरावली की पहाडी के ऊपर राजमहल और तलहटी मे जनता के घरौंदे। उस शहर के एक छोटे से गन्दे मकान मे इस अभागिन ने जन्म लिया था। उस समय किसी को भी यह आशका नहीं थी कि यह लडकी एक दिन इस रियासत की मलिका होगी वर्ना कोई भी मुझे जिन्दा नहीं छोडता। ज्योतिषियो ने भी भविष्यवाणी नहीं की—वर्ना राजा महाराजा तो नक्षत्रो के इशारो पर ही खेल खेलते हैं।

मेरी माँ रियासत की विख्यात नर्तकी थी और नर्तकी कभी यह नहीं चाहती है कि उसके दिल म ममता जगे। वह माँ बने। उसके स्तनों म दूध जन्म ले। क्योंकि उसके पेशे मे मा बनना अपराध है पाप है और मृत्यु है। स्वय नर्तकी ही नहीं अपितु उसके चहेते भी यह सहन नही कर पाते। ऐसे भी एक नर्तकी की उम्र अधिक नहीं होती है यौवन के ज्वार के उतरते ही वक्त उससे सब कुछ छीन लेता है—रह जाता है जिन्दगी में सिर्फ सूनापन और घुटन के क्षण या एक-दो पल की मीठी यादें जो भी अपनी नहीं पराई। ऐसे नर्तकी जीवन भर

सजा न दी जाये यद्यपि मेरी खामोशी बेजुबानी नही है, रियासतों की ड्योढियों म और नवाबो के हरम में तथा सामन्तो के रावले म बहुत शोरगुल व चीख चिल्लाहट है लेकिन उसे कौन सुनता है ? उनके दद को सुनने की किस के पास फुरसत है ?

मैं अपनी तोहीन से जलनफरोश नही हू या सिफ अपने जख्मों के दद से घायल नही हूँ आज मेरे सीने मे सदियो स गुलामी की जिन्दगी जी रही उन उदासियों की रूहें चीख रही हैं—जिन्होन कभी आसमान मे चलते सूरज और तारों की महफिल म डूबने हुए चाद को नही देखा और न होली दिवाली पर शहर की जगमगाहट ही । उनकी बला स शहर जि दा हो या मुर्दा ! वे तो खुद मुर्दानगी जी रही हैं । उनका जनाना ही उनके लिए ससार है जन्नत है और जहन्नुम हैं । जवानी स पहिले उन्होने उस गाव म कदम रखा था और अर्थी के साथ ही कदम बाहर निकल पायेगे । इसस पहिल देहरी उलाघना सजा ए मौत है और नगी पीठ पर कोडे खाना । ये रूहे न सरकशी ही कर सकती हैं और न जिन्दगी ही जी सकती हैं । ये वे पुतलियां हैं-जिन्हे चमचमाते कपडे और गहने पहिना कर कोई सूत के धागे से बाध कर इशारे पर नचाता रहे !

सगमरमरी आगन पर इनके स्वप्न बिखर गये हैं दीवारें इनकी नसो म बहता हुआ खून पी गई हैं—और भर गई है भीतर एक ऐसी दहशत जिसके कारण ये गू गी बुतें पागलों की तरह जिन्दगी जीने को विवश हो चली हैं। इस माहोल म रहते हुए ये प्रेतात्मायें बन गई हैं और बहुत जोर से चीखना अट्टहास करना, मुक्त कण्ठ स रोना और फिर अपने आपको सुहागिन की तरह सजा कर आदमकद शीशे के सामने खडी होकर एक दूसरी को नोंचना ही इनकी आदत बन गई हैं। शराफत के नाम पर ये बहशत भरी जिन्दगी जी रही हैं और उन दीवारो के बाहर देखना कभी पसन्द करती ही नहीं ।

मैंने जि दगी जीकर क्या पाया ? कुछ भी तो नहीं फिर भी बहुत कुछ ! मैं एक वह औरत हूँ जो उन ऊची दीवारो को देख कर आई हू । मरी उन बहिनों बेटियों को आगाह कर देना चाहती हू जो उन महलो के बीच स्वग की कल्पना करती हैं । ये सगमरमरी आगन बहुत कठोर हैं और दीवारो के बीच सिफ अन्धेरा है । सोने चान्दी के ये आभूषण जहरीले साप बिच्छू हैं । इन महलों के भीतर जह रीली आग की नदी है इस नदी के किनारे जो पहुच जाती है वह जिन्दा बाहर निकल आये यह नामुमकिन है । विश्वास नहीं तो मरी तसवीर देख कर अन्दाज करलें ।

□ दो

मेरा जन्म रियासत की पुरानी राजधानी में हुआ—जो इतिहास में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। मुगल सल्तनत ने भी जिसे इज्जत बख्शीस की और जो अपनी सुन्दरता के लिए संसार में प्रसिद्ध है। अरावली की पहाड़ी के ऊपर राजमहल और तलहटी में जनता के घरौंदे। उस शहर के एक छोटे से गन्दे मकान में इस अभागिन ने जन्म लिया था। उस समय किसी को भी यह आशंका नहीं थी कि यह लड़की एक दिन इस रियासत की मलिका होगी वर्ना कोई भी मुझे जिन्दा नहीं छोड़ता। ज्योतिषियों ने भी भविष्यवाणी नहीं की—वर्ना राजा-महाराजा तो नक्षत्रों के इशारों पर ही खेल खेलते हैं।

मेरी माँ रियासत की विख्यात नर्तकी थी और नर्तकी कभी यह नहीं चाहती है कि उसके दिल में ममता जगे! वह माँ बने! उसके स्तनों में दूध जन्म ले! क्योंकि उसके पेशे में माँ बनना अपराध है पाप है और मृत्यु है। स्वयं नर्तकी ही नहीं अपितु उसके चहेते भी यह सहन नहीं कर पाते! ऐसे भी एक नर्तकी की उम्र अधिक नहीं होती है यौवन के ज्वार के उतरते ही वक्त उससे सब कुछ छीन लेता है—रह जाता है जिन्दगी में सिर्फ सूनापन और घुटन के क्षण या एक-दो दल की मीठी यादें जो भी अपनी नहीं पराई। एक नर्तकी जीवन भर

घुघुरूओं को पीटती रहे लेकिन वक्त के साथ स्वर उखड़ जाते हैं मूल्य घट जाता है और देहरी पर ग्राहक कदम नहीं रखते हैं। कोठे पर आने वाले कला के पुजारी या संगीत के साधक नहीं होते अपितु अंगों की थिरकन पर अपनी धड़कन बेचकर शराफत के खरीददार होते हैं।

मेरे जन्म से मेरी मां को भी बहुत बड़ा नुकसान हुआ। बाजार से उसकी साख गिर गई। दलाल सिर पीट कर रह गये और ग्राहक मन मसोस कर। कुछ लोग तो नाराज होकर गालियां बक गये और कुछ लोगों ने गली में आना ही बन्द कर दिया। मुझे बहुत आश्चर्य होता है कि आम आदमी औलाद न होने पर पत्थर पत्थर पूजता है और जादू टोने व जन्तर मन्तर के जाल में अपनी इज्जत तक खो देता है और औलाद होने पर घर में दीवाली सी खुशी मनाता है वे ही आदमी नर्तकी के औलाद का हाल सुनकर नफरत को जन्म देते हैं—यानी कि अपनी ही औलाद पर पत्थर फैंकते हैं। मुझे जन्म देने वाले पिता तो बेहद दुखी हो गये थे लेकिन मेरे होने से नहीं—अपितु अपनी बदनामी के भय से! वे मुझे अनाम या गुमनाम ही रखने के हामी थे कभी मंजूर नहीं करना चाहते थे कि मैं उनकी औलाद हूं क्योंकि मुझे स्वीकारने पर उनकी साख उठ जाती और उनके राम नाम के दुपट्टे पर गन्दगी के दाग लग जाते बिरादरी से बाहर बैठना होता, शायद वे खुदकशी कर लेते। मेरे जन्म से यदि किसी को खुशी थी तो मेरी मां को।

मेरी मां ने मुझसे एक दिन कहा था—'बन्नो! गर तू न होती तो मैं कभी की इस दुनिया से चली जाती।'

मैं खुद को ही अपमानित और पीड़ा की प्रतिमा कहती हूं। किन्तु जब मैंने मां की कहानी सुनी तो हृदय रोते रोते न थम सका। आज विचारती हूं कि औरत का जन्म क्या समाज की जलालत को जीने के लिए ही होता है? सच! औरत मर्दों का खिलौना है इस अपने कलेजे पर पत्थर रख कर अपने अरमानों का खून देखना है। जैसा कि मैंने आप से अभी अर्ज किया कि मेरी मां तवायफ थी किन्तु मेरी नानी बहुत ही ऊंचे और इज्जतदार घराने की बेगम थी और नाना नवाब उन दोनों के लाड प्यार में पली इकलौती औलाद मेरी मां थी। मैं आपको उसका नाम न बताऊं यही अच्छा है, मैं कुछ भी छिपाना नहीं चाहती हूं लेकिन अपने ही मुंह से गन्दगी उछालते हुए उसका नाम क्यों लूं? फिलहाल मां कहना ही पर्याप्त है वैसे मां दुनिया का सबसे बड़ा पवित्र शब्द है, सबसे बड़ी शक्ति है और भगवान की सही तस्वीर है—इसे भी बदनाम करना बहुत बड़ा पाप है लेकिन हकीकत को कहां छिपाऊं? हां तो मेरी मां भी किसी नवाबी घराने में होती और उसकी

बेटी शाहजादी, लेकिन तकदीर का खेल! मां का क्या दोष? उम्र ही पागल होती है, इन्सान कुछ नहीं विचार पाता है और खयाली नदी में अपनी कागजी नाव लेकर मझधार में डूब जाता है—रह जाते हैं किनारे बहुत दूर! ऐसा ही कुछ मेरी मां के साथ भी हुआ। मेरी मां अपने ही एक रिश्तेदार की मीठी लुभाती बातों के जाल में मछली की तरह फंस गई और भूल गई बाट के तार पर। पूनम से उलांघ बैठी घर की देहरी। देहरी क्या उलांघी? घर आंगन सब कुछ छूट गया, अपना ही गांव वीराना हो चला, सभी चेहरे अनजान हो गये और कदम चल पड़े एक अजानी राह पर।

मां बाप का प्यार सिसकियां लेकर रह गया। बचपन के स्वप्न खंडहर की तरह खड़े रह कर डगमगाने लगे। एक आदमी के मोह ने उम्र भर की गठरी को लुटा दी, रिश्ते चिथड़े-चिथड़े हो गये और अनजान नादान हाथों में अपने आपको सौंप कर आकाशी महल बनाये। आकाशी महल बादल बिजली से टकराकर चकनाचूर हो गये और महलों की रानी गलियों की भिखारिन बन गई। मेरी मां का गुनाह था कि वह दरिया की तरह बह गई और उसने आदमी पर विश्वास किया और इसी विश्वास के तूफान में अपना सब कुछ गंवा बैठी। क्या आदमी विश्वास के योग्य नहीं रहा? प्रकृति और पुरुष के मध्य यह प्रवंचना का अभिनय। क्या शाश्वत काल से चला आ रहा है? अथवा हम ही अभागिन रहीं। मां प्रणय के आवेग में अपने बाबुल का घर छोड़ आई थी—लेकिन न उसे प्रणय ही मिल सका और न बिछुड़ा हुआ बाबुल का आंगन ही। रह गई थी शेष स्मृतियां। औरत का घर से बाहर निकलना सहज है लेकिन लौटकर देहरी के भीतर कदम रखना केवल सपना है। और सपना कभी सच होता नहीं। मां का स्वप्न था कि उसका महबूब उसके साथ शादी रचायेगा और जिन्दगी फूलझड़ी की तरह रोशन होती हुई गुजर जायेगी। आशिक ने वादे तो बहुत किये थे और कागजी महल भी बने थे लेकिन उसके पास अपनी जमीं न थी जिस पर अपनी दीवार खड़ी करता। काश! वह शहर में आकर भी मेरी मां का दामन छोड़ देता तो वह भली औरत मजदूरिन या किसी की दासी बन कर अपना बीमार बरसों गिन लेती लेकिन वह तो छाया की तरह उसके संग साथ रहा।

गांव और शहर की जिन्दगी के बीच हमेशा से एक खाई रही है। शहर गांव को भटकाता रहा है और गांव फिर भी उसे ललचाता रहा है। शहर की विलासी चकाचौंध इन्सान को अंधा कर देती है और भटक जाती हैं इस तरह कई राहें। मेरी मां भी गांव से भाग कर आई थी और शहर की जिन्दगी देख

कर मोरनी की तरह नाच उठी थी। उस वक्त उसे क्या अन्दाज था कि शहर की हवा मे मीठा जहर घुला हुआ है ? ऊँची हवेलियों के भीतर मखमली कालीनो पर इज्जत आबरू के कदम फिसलते हैं हँसी नाजनीन कुमारियों के अस्मत का खून बिखरा हुआ है। गरीबो की इज्जत के रक्तिम धब्बे ही अमीरो की शान शौकत का रहस्य है। ऊची दीवारो के नीचे गरीबो की पेट की भूख का समर्पण है उस समर्पण में क्रुन्दन सोया हुआ है। हर चेहरे पर मुखौटा है और हर आदमी नगा है केवल बाह्य प्रदर्शन है जो निरीह व्यक्तियो के लिए मृत्यु का फन्दा है।

वह अपने हमराही के साथ आई थी। हृदय मे सावनी बादलो सी उमडती घटायें, विचारो मे रेशमी बिजौले हवा मे तरते हुए से दो-तीन ताल उछलती उमगें आखो के काजल को अपने प्रिय का गर्व अधरों पर मौसम के गीत एव बदन म यौवन का ज्वार था। उसे क्या अन्दाज था कि उन सफेद रेशमी पर्दो के पीछे अधेरा भरा हुआ है ? उसका साथी शहर की एक गगनचुम्बी इमारत मे आकर ठहरा। मेरी मां ने कभी इतनी बडी और सुन्दर इमारत नही देखी थी। वह दग रह गई थी। हृदय म अथाह स्पन्दन लिए रेशमी बुर्के मे सिमटी मेरी मा ने हवेली की सगमरमरी दूधिया सीढियों पर कदम रखा तो उसकी दाहिनी आख ने अप शकुन कर उसे चौकन्ना किया लेकिन वह नही समझ सकी और चढती ही गई सीढियो पर। हवेली के नौकर चाकरो ने उसके सामने झुककर सलाम किया तो वह अपना आपका भूल गई और अपनी किस्मत को सराहने लगी। उसे क्या अन्दाज था कि ये नौकर चाकर हर आने वाले को इसी तरह सलाम किया करते हैं। बारादरी स आगे बढकर सामने की ओर चादी के दरवाजों पर दस्तक देते हुए उसके साथी ने कहा सरकार ! भीतर आने की इजाजत है ?

— अरे ! मिया ! आजाओ मद्दत क बाद दिखाई दिये हो —एक अधेड उम्र का स्वर महल में गूज उठा। मेरी मा न बुजुर्गियत का खयाल करत हुए भीतर की ओर कदम न रखा और दरवाजे की ओट म खडी रह कर चादी पर की गई पच्चीकारी को हर्षित आखो से पढने लगी। जब उसक साथी न उस से भीतर चलने की जिद की तो उसने हाथ पर झटका देते हुए कहा कितने बेशम हो ? आखिर तुमको अपनी इज्जत का भी खयाल नही है ? उसने सहज भाव से कह दिया था, उसे क्या पता था कि ऊची हवेलियों की इज्जत सडक पर है या उनकी तिजोरियो म कद।

— अरे करीम मिया ! बाहर ही क्यों खडे हो ? भीतर तसरीफ लाओ ! —फिर से आवाज बिखर गई।

— सरकार ! बेगम साब है बेहद शर्मीली है' —कहते हुए करीम ने भीतर प्रवेश किया ।

मेरी मा वहीं खडी रही और उसने उस रईस की शक्ल न देखना चाहा, वर्ना औरत के दिल मे भी खूबसूरती देखने की तमन्ना होती है । वह झरोखे की जालियों मे उभरे हुए मोर पपीहे को चाव से देख रही थी तभी सहसा वह चौंक पडी । उसके कन्धे पर हाथ टिकाये उसके पास हमउम्र गौरवर्ण वाली युवती खडी हुई उसे देख रही थी । उसके बदन से मोगरे के इत्र की गन्ध हवा म घुल वातावरण को गधिया रही थी । आगन्तुका न मेरी मा की ओर स्मितमुस्कान के साथ देखते हुए कहा—'कितनी खूबसूरत हो ? खुदा ने क्या बेनजीर हुस्न दिया है ?"

मेरी मा ने शरमा कर अपनी आखें झुका लीं ।

— बगम ! आओ, महल के भीतर चलें ।

— व भीतर हैं ? '

— कुछ पल क लिए भी साथ न छोड सकोगी ?'

— लेकिन यह हवेली किसकी है ?'

— यह सब कुछ तुम्हारा ही है इतनी बडी हवेली में जहा चाहो वहां रहो, चिडिया की तरह पख फलाकर फुदको ! लेकिन इस सोन पिजरे से बाहर निकलने की हिम्मत न करना ।"—कहती हुई वह तेज स्वर म हस पडी ।

— गाव की लडकी शहरी भाषा का अर्थ न समझ सकी और उसके साथ उस पिजरे म चली गई । वहा क्या न था ? आलीशान महल, मखमली गद्दे और दूधिया मसनदें । कुछ ही पल म उसके लिए बेश कीमती कपडे और गहनों से भरा चादी का थाल आ पहुचा । वह सब कुछ देखकर मेरी मा ने मुह म अगुली रख ली और कहा— ये सब किसके लिए ?"

— तुम्हारे लिए, नवाब साब की ओर से नजराना !"

— क्या उन्होंने भिजवाया है ?"

— हां ।"

— लेकिन वे कहां हैं ? '

—' इतनी बेताबी भी क्या है ? रात भर है तुम और वे—ये रूप और ये रातें !—कहते हुए उसने गाल पर चिकोटी भरली ।

—'कुवारी लडकी विवाह से पूर्व अनियारी आंखों मे अनेक स्वप्न सजाती है और साकार होने पर नाच उठती है। मेरी मा भी स्वय को स्वग की परी समझने लगी थी। दिन भर उसका बगम की तरह सत्कार होता और साझ ढलते ही उसका शृगार होने लगा। उसके बाद जो कुछ घटा—वह छलना से भरा अध्याय है। कोई भी मा अपनी बेटी से जलालत भरी दास्ता नहीं कह सकती लेकिन मेरी मा ने मुझसे कुछ भी न छिपाया। कहानी कहते हुए उसकी आखें गीली हो उठी–और भय के मारे ललाट पर पसीने आ गये थे-वह रुक रुक कर कहने लगी थी—मेरी बनो! वह साझ मेरे लिए आधी थी आकाश की लाली मेरे अरमानो के खून से रगी हुई थी और बढता हुआ अधेरा हथलियों का गुनाह था। मैं उस दिन मैं नही रही—यानी कि एक औरत की उस रात हत्या हो गई—और उस दिन के बाद मैंने कभी खुद को औरत न समझा अपितु इस समाज की गदगी बन कर रह गइ। उसी औरत ने मेरे तन से दुपट्टा छीन लिया तो मैं हक्की बक्की रह गई। मैंने अपने दोनो हाथो से अपने बदन को ढापते हुए कहा— यह क्या कर रही हो?'

— हमी से शम! –कहती हुई उसन अपने हाथ मे मेरी कुर्ती को इस कदर खचा कि तार तार बिखर गये और मेरा जिस्म बाहर की ओर भाकने लगा। मैंने पीछे हटते हुए कहा— यह क्या बदतमीजी है?

—'उबटन नही करोगी?'

—'लेकिन तुम तो मरे कपड ?

—'नये नहीं पहनोगी?

— मैं खुद पहिन लूंगी।

— ऊह! मेरी गुलाबो! तुम शादी की रस्म नही समझती हो? कई दस्तूर होते हैं, यह काम मेरा है! वह मुझे जबरन नहानघर मे खच ले गई और उबटन लगाकर मेरी देह पर अगुलिया फिसलाने लगी। मैं शम के मारे पानी पानी हुए जा रही थी और वह बेशम जलालतभरी हरकतों से बाज न आ रही थी। मैं उसके सामने निवस्त्र थी—और वह मेरे बदन पर गध उडेल जा रही थी। मेरी बनो! उस समय जो कपडे मुझे पहनने को दिये गये—उन्हे देख कर मैं दग रह गई और बहम पर बहम पदा होने लगा—लेकिन असहाय थी। वह एक ऐसी अधियारी रात थी जो मेरे स्वप्नो की डोली उठा कर ले गई और जिन्दगी मे फिर कभी उसके कहार लौट कर नहीं आये। मेरे स्वप्न खण्डित हो गये। न मैं सुहागिन ही

रही और न कवारी ही। प्रेम के आवेग में इतना बडा विश्वासघात हुआ कि मैं प्रेम नाम ही सदा के लिए भूल बैठी। कहते हुए मां फूट फूट कर रो पड़ी थी और मैं भी अपने आंसुओं को न रोक सकी—सिसकियां फूट ही पड़ी।

कुछ क्षण वह मौन रही और फिर उसने एक मैले डिब्बे में से कुछ रंगीन तस्वीरें फर्श पर फेंकते हुए कहा—ये लोग ही हैं जिन्होंने औरत की जिन्दगी का खून किया है किसी एक का नहीं हजारों के खून से इनके हाथ रंगे हुए हैं—लेकिन धब्बा एक भी नहीं है। ये समाज के उन ठेकेदारों में से हैं जो बाजार में औरतों को लाकर बिठाते हैं। बाजार को जन्म देकर औरत को बेइज्जत करने वाले ये लोग इन्सानियत के सबसे बड़े गुनहगार हैं, लेकिन आम नजर में ये ऊंची हवेली वाले हैं इज्जतदार हैं इन्सानियत के फरिश्ते हैं और घराने के रईस हैं।

मैंने तस्वीरें हाथ में उठाते हुए पूछ ही लिया—'ये कौन हैं ?"

—" क्या बताऊं बन्नो ! तू कहेगी कि तेरी मां कितनी नीच है ? लेकिन बेटी तुझ से क्या छिपाना ? यह कश्मीरी टोपी वाला वह शख्स है—जिस मैंने मोहब्बत दी। इसी मक्कार पर मैने विश्वास किया था और अपना चमन छोड़ आई थी। इसने मुझे जाल में फंसाकर गजब के सितम ढाये हैं। मैंने इससे प्यार किया और इसने मेरे साथ फरेबी की, धोखा किया। यह औरतों का दलाल है। इसने न जाने कितनी कमसिन लड़कियों का सौदा किया होगा, सब्ज बाग दिखा कर उन्हें गलियों में बिठा दिया होगा। यह जलील सौदागर मुझे भी अमीर के हाथों बेच गया—और मुझे खबर तक भी न लगी। प्रेम में सितम ढाना और जुल्म सहना आसान है व बदनामी का बुर्का भी ओढ़ा जा सकता है—लेकिन जब प्यार ही फरेब हो तो न सितम—जुल्म ही सहे जा सकते हैं और न बदनामी ही। मैं उस बूढ़े अमीर की रखैल बना दी गई थी। उस रात—जब मैं नई दुल्हिन सी सजी अपने मान में एंठी उनकी इन्तजार में घड़ियां गिन रही था—तो मेरा नगमा उस क्षण मुझसे कोई छीन कर ले गया। जिनकी इन्तजार थी—व नहीं आये और उनकी जगह एक बूढ़ी खासी मेरी ओर चली आ रही थी। मैं डर के मारे एक कोने में सिमट कर खड़ी हो गई—लेकिन उसकी इठ्ठी आंखें शिकार को गिरफ्त करने में कामयाब हो गई। मैं अपने मुंह को ढांप कर नीची निगाहें किये खड़ी कांपती रही—उस पल मेरे मुख से चीख निकल जाना चाहती थी और मैं बुत बनकर रह गई थी। कसमकश में वह घडी भी आ गई जब यह बेनजीर बेआबरू हो गई। वहां मेरा अपना कोई नहीं था। मेरा रोना चिल्लाना, छीना-झीनी, नोंचना-काटना कुछ भी काम न आया।

—मेरी समझ में सब कुछ आ गया था। प्रेम के आवेग म एक खानदानी लडकी परिस्थितियो के कारण कोठे पर आ बठी थी – अन्यथा मान के साथ किसी गरीब खाने की इज्जत होती। मैं उदास हो चली – यह जमाना अपनी अपवित्र इच्छाओ को पूरा करने के लिए इस समाज की बहू बेटियो के साथ किस कदर दुर्व्यवहार करता है ? पुरुष वभव के मद से अधा होकर वासना के समुद्र म कूद पडता है और अपनी अतप्त इच्छाओ को क्षणिक आनन्द देने के लिए चेतनाओ म अनाचार का खेल खेलता है। इस विध्वंश म उसे सुख की अनुभूति होती है लेकिन न जाने कितनी चेतनाओ के स्वप्न खण्डित हो जाते है और सुखद बस्तिया खडहरो म बदल जाती हैं। आज भी इन ऊंचे घरानों के दमघुटे महलो म बीमार रोशनिया कद हैं जहाँ सिसकियाँ सिसक रही हैं — उनके दरवाजो पर कोई दस्तक तक देने वाला भी नही है। न जाने यह सिलसिला कब टूट सकेगा ? यह व्यभिचार का ग्रथ कब समाप्त होगा ? मेरी उदासी को तोडते हुए मेरी माँ ने फिर कहना आरम्भ किया – बन्नो ! म नापाक हो गई मेरी चुनरिया पर दाग लग चुका था और हर रात मेरी चुनरी पराई होनी थी और आँख म हर रात नया काजल होता था – नई चूडिया होती और नजरान मे गदराये गजरे और महकते पान के बीडे। सौदागर मेरा सौदा करते — उस दुनियाँ म मेरे आँसुओ की कोइ कीमत न होती थी।

मैं उन दीवारो के बीच कद थी। सुनहले चित्राम महल मे मुझ दुल्हिन की तरह सजाये रखा जाता था। फूलो की सेज पर मेरा बदन लुटता रहता और आँखो मे घोर निराशा तथा खुद के प्रति वितृष्णा के भाव। लेकिन वहाँ कौन था ? जो मेरे अधरों की उदासी समझ पाता ? एक कोने म मशाल जलती थी और दूसरे मे मैं। उसका उजाला ही मेरा दुश्मन था – वह मेरे अत्याचारों की गवाह है आधी रात बीते मेरे दरवाजे पर दस्तक होती और देहरी पर किन्ही अजाने कदमो की आहट और मेरे मन मे भय का अधेरा घिर आता। मैं सँभल भी न पाती थी कि इससे पूव ही वातावरण शराब की बदबू से सड जाता और हवा नापाक इरादो की दास्ता मुझे कह जाती। मुझे ऐसा आभास होना कि दीवारें काँप रही हैं लेकिन आने वाले पापी के हाथ नही कापते थे। हर आने वाला शराबी कुत्ता मुझ माँस का लोथडा समझ कर नोंचता और मैं चीखती-चिल्लाती मूर्छित हो जाती – लेकिन कामुकता अधी होती है उस चेतना अथवा मूर्च्छा से क्या ? वह तो तन का व्यापारी होता है – उसे तो नफा चाहिये ! इस तरह हर रात सौदागर मेरी अस्मत का सौदा करते। मैं इकार करती तो मेरी नगी पीठ पर कोडे बरसाये जाते। मैं उस

ज़लालत भरी ज़िन्दगी से मुक्ति चाहती थी किन्तु मौत भी मुझ नापाक का साथ करने को सहमत न थी। मैंने महल से छलांग लगा कर कई दफा खुदकशी के इरादे किये लेकिन हाय री किस्मत! कभी हिम्मत ही न हो सकी — ग्रौर उस अंधेरे में घुटती रही। मेरे महल की सीलन ने मुझे बीमार कर दिया था — बुखार में जलती रहती, श्वांस के साथ खांसी आती रहती और अंग-अंग दुखता रहता लेकिन किसी को भी मेरी सेहत का फिक्र न था — और न मैं उजर ही कर सकती थी। एक दिन अपने हाथों से गले में दुपट्टा कस कर फाँसी के फन्दे पर झूलना ही चाहती थी कि उसी जानी — पहचानी औरत ने मेरी पीठ पर हाथ रखते हुए कहा — मौत इतनी आसान नहीं है, जैसा तुम समझ रही हो। मैं तुम्हारी पीड़ा से व्यथित हूँ, मैं भी तुम्हारी ही तरह इन अंधी-दीवारों के बीच आई थी — और तभी से कैद हूं। मैंने भी तुम्हारी तरह आत्महत्या करना चाहा था लेकिन घोर — यातनाओं के सिवा कुछ भी हाथ न लगा और तभी मैं जिन्दगी को भार समझ कर ढो रही हूं। मैं भी चाहती हूँ कि तुम इस नरक से बाहर निकल जाओ। लेकिन मेरी बहिन जाओगी कहाँ? औरत वह फूल है—जिसे गुलदस्ते में सजाकर कोई भी घर में नहीं सजाना चाहता अपितु हर आदमी अपनी सेज की सलवटों में कुचल देना चाहता है। तुम अपने-आप को बराबर साबित कर सकोगी? यदि तुम्हें कहीं आसरा मिल सकता है और तुम इस जलते हुए समुन्दर से खुद कर सकती हो तो मैं तुम्हारी मदद करूँगी। मेरे धर्म की सौगन्ध! प्राण देकर भी तुम्हें यहाँ से मुक्त कराऊँगी।"

मैं उसके गले से लिपट कर रो पड़ी—और उससे सहायता करने की प्रार्थना की। वह मुझे उन दीवारों से बाहर निकालने में सफल हो गई—मैं जिन्दगी भर उसका एहसान नहीं भुला सकूँगी — जिसने मुझे खुले आकाश के नीचे श्वास लेने का अधिकार दिया।

मेरी बन्नो! मैं उस अंधेरे से निकल कर सड़क पर आ गई थी—लेकिन वहाँ भी अंधेरा ही था — मेरे लिए हर दिशा अंधियारी थी — और पीछे एक डरावना सन्नाटा। पास में कुछ भी न था। पांवों-तन की आग को दबाना भी बहुत मुश्किल था। पैरों में बन्नाओं के घुंघरू—मुझे खूब चौंक रहे थे और आँखों में विवशता के आंसू छाए थे लेकिन मैंने हिम्मत न हारी और सड़क पर कदम बढ़ाती चली। मेरी नज़र जिस ओर उठती — उधर ही ऊँची-ऊँची हवेलियाँ दिखाई देती — और मैं चीख पड़ती थी। गाँव भी लौटना नामुमकिन था — मैंने खुद देहरी लांघी थी और अब मुँह पर कालिख लगवा कर गाँव किस मुँह से जाती? इसी

बीच मेरी जिन्दगी म एक ग्रौर ग्रांधी ग्राई ग्रौर वह मुझे तिनके की तरह उड़ा ले गई। मैं फिर कट हो गई थी लेकिन दीवारों के बीच नहीं ग्रपितु गली के एक कोठे म। मैंने जिस घर म कदम रखा था – वह किसी ग्रमीर का घर न था ग्रपितु शहर की जानी मानी तवायफ चमेली बाई का कोठा था। चमेली वेश्या ग्रवश्य थी लेकिन उसके दिल में ममता थी ग्रौर ग्रांखो मे ग्रासुग्रो को पीने की क्षमता। उसने मेरी पूरी कहानी सुनी ग्रौर स्वयं रोने लग गई। मुझे ग्रपनी छाती से लगाते हुए कहा— बेटी! यह उम्र बहुत पागल होती है पैर फिसल ही जाता है–लेकिन यह ससार ग्रपनी मां बहिन ग्रौर बेटियो को भी तवायफ बनाने म नही चूकता है।

वह मुझे बेटी की तरह समझती ग्रौर हर क्षण मुझे जिन्दगी जीने का विश्वास दिलाती। मेरा भाग्य था–जो मैं उस घर म ग्रा पहुची थी–वर्ना उस गली के ग्रन्य कोठो म गन्दगी का ढेर था – जहां खुजलाये कुत्ते मांस चाटने ग्राते थ – ग्रौर शहर भर की गन्दगी उस गली म उडेल जाते थे। हर दरवाजे पर जर्द–चेहरे टूटी भावनाग्रो के चिथडे छिपाये टके रहते थे – जिस्म प्रदशन ग्रादत सी बन गई थी ग्रौर ग्रादमी का ग्राना जाना ग्राम बात थी। वह बडभागिन कहलाती थी जिसके बदन पर जितने ग्रधिक हस्ताक्षर होते थे। मुझे ग्राश्चय था कि ग्रौरत स्वयं ग्रपने जिस्म का सौदा करते वक्त दाम बताती थी। शम का तो वहां नाम ही न था। दिन भर एक दूसरी को रात की कहानियां सुनाती रहती ग्रौर ग्रादमी के वहशीपन की चर्चा होती किसने किसे किस कदर तक मूल बनाया ग्रौर छकाया–कौन मद था ग्रौर कौन नामद? ग्रौर फिर रात को दूकानें सज जातीं भाव बाले जाते ग्रौर नीलाम हो जाती ग्रौरत की जिन्दगी। बहुत भीड रहती थी लेकिन उस बस्ती मे ग्राने वाला कोई भी इन्सानियत लेकर नही ग्राता था।

चमेली बाई का कोठा ग्रपना पृथक ही ग्रस्तित्व रखता था। एक समय था–जब उसका कोठा शहर का 'रग–विलास' कहा जाता था। इस शहर मे जब चमेली बाई ने ग्रपना घूघट उठाकर नूपुर को थिरकन दी तो समूचे शहर म तहलका मच गया था।

चौक के दूसरे कोठे फीके पड गये ग्रौर वह कोठा खासी भीड से भर गया था। शहर के प्रसिद्ध कलाकार सेठ साहूकार व ग्रमीर लाग तथा ठाकुर सरदार वहां तशरीफ लाते ग्रौर फश पर गिन्नियो की बौछार होती रहती थी। चमेली ने ग्रपने जिस्म का सौदा कभी न किया ग्रौर न कभी बाजार हो लगाया – वह तो नृत्याङ्गना थी—ग्रौर कला के पारखी ही उस देहरी पर ग्राते थे। यौवन के साथ साथ भीड घिर कर ग्राई थी ग्रौर उसी तरह एक दिन भीड बिखर गई थी। जब मैं वहां पहुँची तो चमेली की ग्रांखो म तारे जगमगा उठे ग्रौर उसे मानो कोई

सहारा मिल गया हो। बूढ़े माँ बाप को अपने बेटे का सहारा रहता है लेकिन एक तवायफ को किसी मदमाते गदराए बदन का सहारा चाहिये। लेकिन उसने कभी ज्यादती नहीं की और न साफ शब्दों में आदेश ही दिया। रंग विलास की दीवारें फिर से गुलाबी रंग में पुतवाई गईं नए कालीन फर्श पर बिछे, और नये साजिन्दे साज लेकर आ जमे। तबलों की देह पर फिर सधे हुए हाथ थिरकने लगे सारंगी का मौन टूटा और मधुर स्वर कराहे की जालियों में निकल कर शहर को जगाने लगा। जब मैं तालीम लेकर महफिल में आई और अंगों की भाव मुद्रा के साथ नूपुरों को छेड़ने लगी तो उस क्षण रंग-विलास का स्वर्णिम अतीत फिर से लौट आया। चमेली बाई का कोठा फिर जीवट के साथ जीने लगा और समृद्धि नदी की तरह उमड़ आई। मेरे नृत्य के दर्शक भी आते थे लेकिन रूप के ग्राहक अधिक लेकिन चमेली बाई की कुटिल भृकुटि के आगे कोई कुछ न कहता था—और हर अमीर अपना हृदय थाम कर लौट पड़ता था। कई रजवाड़ों के यहाँ से नजराने और गिन्नियों की थैलियाँ आईं लेकिन चमेली बाई उस ओर देखती भी न थी। वेश्याओं के संसार में भी सिद्धान्त होते हैं हृदय में ममता होती है और प्रतिष्ठा का प्रश्न रहता है।

हर रोज साँझ ढलने के बाद रंग विलास के पैंतालीस बत्तियों वाले झाड़ फानूस में मोमबत्तियाँ जगमगा उठतीं—गलीचे इत्र की खुशबू से मदहोश हो जाते बीड़ों से इलायची का पराग हवा को मादक करता तभी साजिन्दे मूँछों पर हाथ फेरते सरगम सा रा धिन ता का स्वर छेड़ देते। तभी मचकन पर झूलते गजरे लड़खड़ाते कदमों के साथ गलीचे पर लहराते और 'आदाब अर्ज' का स्वर गूँज उठता। फर्श का कालीन हँस देता सुन्दरियाँ हाथ में चाँदी की थाली उठाये हर मेहरबान के आगे झुकतीं और बीड़ा पेश करतीं। खुद चमेली बाई रत्न-जड़ित पान दान साथ लेकर मखमली मसनद का सहारा लिए आ बैठती। महफिल की आँखें मुझे देखने को बेताब रहतीं और मैं दर्पण के सामने खड़ी होकर अपने काजल से बतियाती रहती—फूलों से खेलती अपने आप पर हँसती। तभी मुझे बुलावा आता और मेरे घुंघरू थिरक उठते - थिरकन के साथ ही महफिल की धड़कन बढ़ जाती। मैं अक्सर दर्द के गीत गाती— मेरे हर स्वर पर हवा में गजरे के फूल तिरते और फर्श पर मुहरें बिछ जातीं। आम आदमी के लिए कोठे का दरवाजा खुला हुआ नहीं था। मैं समझती हूँ कि जो लोग यहाँ आते थे—उनमें से अधिकांश ऐसे आदमी थे जिनके सिर पर गुनाह चढ़ कर नाच रहा था। हमारे उस कोठे पर किसी प्रकार का भेद न था—हिन्दू मुस्लिम सभी का स्वागत था। यहाँ राम भी था और रहीम भी। मंदिर मस्जिद में जाकर आदमी का गम हल्का नहीं हो पाता है - लेकिन कोठा सब का दर्द पीता है और

खुशियाँ बाँटता है। वहाँ न कोई सम्प्रदाय न पक्षपात, न घृणा के भाव और न बन्धन के सूत्र ही। वहाँ तो सोन महल में सौन्य देवी है—जिसके कदमों म आने वाला सिर झुकाता है – और मन से पूजने को तयार रहता है। यह बात अलग है कि वाह ी इज्जत को बचाने के लिए घर बठ कर कोठे की बात पर थूकने से नहीं चूकता हो। मेरी बन्नो! कोठे पर नाचने वाली औरत की कहानी भी अजब ही होती है। उसकी जिन्दगी म एक पहर ऐसा आता है—जब उसके आँगन म दिवाली होती है वह नई दुल्हिन का तरह शरमाती बलखाती गलीचे पर आती है और फिर लाज क गजरे तोडती हुई सभी की हो जाती है। उस पल हर चेहरा उसका चहेता होता ह और वह सभी की चहेती। हर आँख की भाषा मे वह खरीदी हुई होती है हर आदमी को खुश करना उसकी आदत होती है और यही उसका धम।

लेकिन महफिल क उठने के बाद? एक गहरा सन्नाटा और उदासी के सिवा कुछ नहीं रह पाता है। अपने बदन की गन्ध ही दम को छेड जाती है और बिखर गजरे टूट हुए सपनों की दास्ता याद दिलाकर रुला देते हैं—तब वह कसम खाती है—कल न नाचन की और इरादा करती है मौत स गले लगने की। अकेले मे वह चीखती है चिल्लाती है रोती है—अपनी तकदीर पर। सारी रात उसकी आँखों म नींद नहीं आती है – और सुबह होने से पहिले वह थक कर सो जाती है। दुनियाँ का दद पीने वाली अपना दद लेकर सोती है—एक रोनी जिन्दगी रह जाती हैं उसकी –और इस तरह समय आने पर वह पीली पड जाती है और फिर टूट कर गिर जाती है। वेश्या या नतकी क भी हृदय होता है और भाव तिरते हैं वातावरण मे। वेश्या को हर आदमी चाहता है और वेश्या भी, लेकिन वेश्या भी किसी एक को हृदय से प्यार करती है और समर्पित हो जाती है उसके प्रति उत्सग भावना स। मैंने भी हृदय से चाहा था किसी को और आज भी चाहती हूँ। वह आदमी और कोई नहीं तुम्हार पिता हैं।'—कह कर मा मौन हो गई और विचारों के प्रवाह मे बहती रही।

मैं समझ गई थी—मरे पिता जी एक पण्डित थे। माँ उन्हें ही हृदय से चाहती थी—लेकिन यह भी उसका जिन्दगी की एक भूल ही थी—वर्ना मैं धरती पर कदम क्यों रखती और आज आप सभी से अपनी दास्ता क्यों कहनी होती?

तीन

एक सामान्य सी भूल के कारण इतिहास बदल जाता है और जीवन मृत्यु में संघर्ष छिड़ जाता है आशा और निराशा का अन्तर्द्वन्द्व सुख दुःख की अनुभूतियाँ कराता रहता है। सभी जगह पराजय मिलने पर भी मानव कर्म से दूर नहीं होता यहाँ तक कि अपमानित होकर भी वह मृत्यु का वरण नहीं करता अपितु पुनः नवीन जीवन का शुभारम्भ करना चाहता है। सम्भवतः इस धरती की माटी के कण कण में गीता का अमृत भरा हुआ है तभी तो यहाँ की गन्ध पीकर आम आदमी करुणा व प्रेम की नदी के किनारे जाने को सदा लालायित रहता है। मेरी माँ के स्वप्न खंडित होने पर भी तथा यातनापूर्ण जीवन जीने के पश्चात भी हृदय में प्यार के लिए स्थान था। तभी तो उसने पंडितजी को अपना हृदय दिया।

युग सत्य को भी अस्वीकार कर देता है—और इतिहास उस पर मुहर लगा देता है। युग कभी नहीं स्वीकार सकता कि मैं पंडितजी की कन्या हूँ। औरों की क्या कहूँ ? मेरे पिता ही मुझे अपनी पुत्री की तरह वात्सल्य देते हुए यह स्वीकारना नहीं चाहते कि मैं उनको पिता कहूँ। आश्चर्य है कि पिता अपनी ही सन्तति से कतराये ! अपने ही द्वारा लिखे गये लेख के नीचे हस्ताक्षर करने से अस्वीकार दे। यह भाग्य की ही विडम्बना थी, मेरे पिता मुझे कभी अपनी सन्तान न कह सके—वे मुझे

गुमनाम औलाद ही रखना पसंद करते थे—क्योंकि वे झूठी मर्यादाओं को तोड़ने की हिम्मत नहीं रखते थे। अपने दूधिया कुर्ते पर किसी ओर का काजल नहीं लगने देना चाहते थे और न अपनी पगड़ी ही सड़क पर उछलने देना चाहते थे।

आप मेरे बारे में न जाने क्या कल्पना कर रहे होंगे? लेकिन सच को कैसे झुठला दूँ। मैं वह अभागिन औलाद हूँ—जो अपने ही माँ बाप पर कीचड़ उछाल रही हूँ और खुद को नाजायज औलाद कहने से नहीं कतरा रही हूँ। मेरी माँ पंडित-जी के ओज व माधुर्य पर मुग्ध हो गई थी। उनका बलिष्ठ शरीर निखरा हुआ रूप रंग आँखों में विश्वास का सागर अधरों पर बिखरा हुआ माधुर्य तथा तन पर झूलता हुआ रेशमी कुर्ता कानों तक लहराते घुंघराले केश आँखों में कपूरी सुरमा और चौड़ी किनारी की दूधिया धोती का पल्ला कुरते की बगल वाली जेब में एक हाथ में पानदानी तथा दूसरे हाथ में नीतिशास्त्र की पुस्तकें—ऐसा मधुर व्यक्तित्व किसे मुग्ध न कर दे? पंडितजी भी मेरी माँ के अनन्य भक्त हो चुके थे—और एक दिन वे अपनी भावनाओं को दबा कर नहीं रख सके स्पष्ट शब्दों में कह ही दिया—मैं तुमसे प्रेम करने लगा हूँ।

—मेरी माँ को भी यह आशा थी कि एक दिन ऐसा आयेगा। वह उनकी बात से प्रसन्न थी लेकिन मन के रूप को छिपाते हुए यह उत्तर दिया—मुझे पाकर आपको क्या मिलेगा? मैं तो जूठन हूँ।

—तुम स्वयं को अपवित्र कहती रहो! मेरे लिए पवित्र हो, कला की प्रतिमा हो—और मैं तुम्हारी कला का उपासक हूँ क्या तुम मुझे इस योग्य भी नहीं समझती कि मैं तुम्हारी भावनाओं का आदर कर सकूँ!

— नहीं जनाब! मैं अपने आपको इस काबिल नहीं समझती हूँ। मैं तो सिर्फ एक बाजारू औरत हूँ रंडी हूँ समाज की गंदगी हूँ जो मेरे नजदीक आयेगा उसी के मुँह पर गंदगी लगने का डर है। —मेरी माँ का सहज जवाब था।

—मुझे निराश न करो! —पंडितजी ने विकल स्वर में प्रार्थना की।

—मेरी माँ भावुक थी। बह चली भावना के आवेग में—और समर्पित हो गई पुरुष की गोद में। प्रकृति—नियति का विधान—उनके संयोग से ही मेरा जन्म हुआ। चमेली बाई ने मेरी माँ को बहुत समझाया था—लेकिन माँ ने किसी की भी न सुनी। माँ ने महफिल में गाना और नाचना छोड़ दिया। धीरे धीरे रंग विलास की फिर से रंगीनी फीकी पड़ने लगी—लेकिन चमकी ने कुछ भी न कहा—कभी यह जाहिर न होने दिया कि यह बर्बादी एक औरत की नासमझी के कारण है। पंडित

जो भी प्रात अक्सर थे लेकिन सहमे सहमे से। वे खुद यह नहीं चाहते थे कि उजाला उन्हें त्य और अन्धेरे की कहानी सारे शहर में फैल जाय और वे बदनाम हो जायें। पंडितजी आधी रात वहाँ आते और तारों की छाँव ही में वहाँ से निकल भागते थे। उन्हें सूरज से डर लगता था। मेरी माँ के गर्भवती हो जाने पर तो उनके चेहरे पर पसीना झलक आया। पंडितजी ने अपनी प्रतिष्ठा को बचाने के लिए मेरी माँ के चरण थाम लिये और उसे शहर से दूर बाहर की बस्ती में ले आये जहां एक दमघुटी सी सीलन भरी कोठरी में वह इसी की तरह मेरी माँ दिन व्यतीत करने लगी—लेकिन उस प्रेम पुजारिन को उस वातावरण में जीना अच्छा लग रहा था। उसकी कल्पना में एक सुखी संसार था—और वह किसी ऐसी औरत की तरह जीवन जीना चाहती थी—जो सुख के साथ अपनी झोंपड़ी में जीती हो? वह भूल गई थी कि वेश्या के लिए इस समाज में कहीं भी जगह नहीं है—उसे उसी गली के कोठे में जीना होता है। वह पंडितजी से हमेशा एक ही बात कहती—'हम इस शहर से दूर कहीं चलें।

पंडितजी भला शहर कैसे छोड़ देते? वे हमेशा बहलाकर चले जाते और मेरी माँ उसी घुटन में उस दिन की प्रतीक्षा कर रही थी जब उसके अंधियारे को सूरज की किरण पी सके। उसी कोठरी में ही मुझ अभागिन का जन्म हुआ था—और उस रात दीपक जलाने को घर में तेल भी न था। मेरे जन्म पर किसी को हर्ष न था—लेकिन मेरी माँ पीड़ाओं को सहकर भी मुझ अभागिन का मुँह देखने को लालायित थी। मेरी माँ के पास चमेली बाई पहुँच गई थी और वह जिद करके हम लोगों को वहाँ से रंग विलास में लिवा लाई वर्ना उसी कोठरी में हम दम तोड़ बैठतीं। आज तक भी यह किसी से न कहा गया कि यह औलाद किसकी है लेकिन सब नज़रें सब कुछ भाँप लेती हैं। दुनिया के लिए मेरी माँ एक निहायत तवायफ थी, नफरत थी गन्दगी थी लेकिन मेरे लिए वह पवित्र देवी थी और पवित्र गंगा थी—जिसके हृदय में ममता का सागर लहराता था। सच तो यह है कि वह मेरी माँ थी—और कौन ऐसी बेटी होगी जो माँ से रिश्ता तोड़ सके?

मेरी माँ पंडितजी के साथ बँध कर भी कुँवारी ही रही और मैं कुँवारी माँ की लाडली हूँ। पंडितजी यदा कदा रंग विलास में आते और चुपके से चले जाते। पंडितजी ने माँ को जीवन भर का साथ देने का वचन दिया था लेकिन पुरुष फिर प्रकृति के साथ प्रतारणा कर गया और रह गया अविश्वास भरा अंधेरा।

माँ के जीवन में फिर एक बार दुर्भाग्य समारोह हुआ। मेरी माँ की माँग में अरुण कुंकुम नहीं भरा जा सका—उसकी कलाइयों में लाल की चूड़ियाँ नहीं चढ़ सकीं।

उसकी डोली किसी घर की देहरी न उलांघ सकी और पडितजी ने दूसरा विवाह करने का निश्चय कर डाला। पडितजी ने अपने विवाह म मां को निमन्त्रित किया—और वह भी एक नतकी के रूप म। प्रेमी ने अपने प्यार को सरे ग्राम नचवाया। मेरी मां ने भी इस प्रस्ताव को नहीं ठुकराया। बारात सडक से गुजरी हाथी के ओहदे पर दूल्हा विराजमान था—और सडक पर मेरी मां कदमो मे नूपुर बांधे नाचती चली जा रही थी—और बाराती व्यग्य कस रहे थे। सरे-बाजार चौराहे पर एक प्रेमिका प्रेम के नाम पर शहादत दे रही थी और उसका प्रेमी औरत की लुटती इज्जत का जनाजा देख—देख हँस रहा था। वाहरे नियति! ओह! पुरुषों का निष्ठुर ससार! प्रेम के अजब सिद्धान्त और औरत की असहायता! यदि मैं मेरी मां की जगह होती तो उस दूल्हे का हाथ पकड कर हाथी से खच कर गिरा लेती और कहती—तुझे भी मेरे साथ नाचना होगा। आज विचारती हूं कि यह मेरी कोरी कल्पना ही होती और मैं भी मेरी मा की तरह ही सडक पर नाचती इससे अधिक कुछ नही होता। वह दिन मेरी मां के इतिहास म परिवतन का दिन था। उसने अपने सभी कल्पित बधन तोड डाले और कुचल डाला अपने ही कदमो से अपने ही स्वप्न—कुसुमो को। रग—विलास के झाड फिर से जगमगा उठे और दीवारो पर उन्माद चढ आया। नतकी ने नूपुर अवश्य बाध लिये थे लेकिन उदासी न छोड पाई थी। पडितजी ने भी आना बन्द कर दिया था—और वे आ भी कसे सकते थे? एक भँवरा नई कलि की पखुरियो का हठ कसे तोड सकता था? मा के लिए दूसरा कोई सहारा भी न था। महफिल ही परिवार था, रोटी रोजी थी, प्यार था और ऐतबार भी।

चमेली बाई ने इस परिवतन पर भी खुशी जाहिर न की और न कभी मां से कुछ कहा ही नतकी नाचती अवश्य थी लकिन उदास—छाया कभी साथ न छोडती थी। महफिल मे आने वाले हर मेहमान के चेहरे की ओर देखती फिर एक गहरी श्वास के साथ मायूसी के समुन्दर मे डूब जाती। एक पल के लिए उसकी देह आबनूस के पत्थर का रूप ले बठती—जिसकी स्याही को चमेली बाई के सिवा कोई दूसरा नही पढ पाता था। साजिन्दो के हाथ ठहर जाते—जसे नसो मे खून का तरना बन्द हो गया हो। सारगी के तार खुद ढीले पड जाते जसे किसी ने उधार दिये स्वर छीन लिये हो। रग—बिरगी कालीन पर महावर लगे कदमो को बढाकर झरोखे की जाली से बाजार की ओर देखती—चौक का गहरा अधेरा बीमार रोशनियों को उदासी कन्धे पर उठाये हाहाकार करता दिखाई देता था। हर कमरे के बाहर फली हुई धुँआ और मद्धिम उजाले को पीती हुई लालटेनो के सिवा कुछ भी तो न था—यदि कुछ था तो हड्डियो का ढर-जिनके भीतर प्राण नाम का जीव

रेंगता हुआ प्रतीत होता था। उस क्षण नर्तकी जड़ हो जाती, उसकी आँखों मे प्रवेश सिमट आता—उसे आभास होता कि उसकी प्रजा में किसी के यहाँ गिरवी रख ली गई है। उसका अपना कोई अस्तित्व नहीं है। नर्तकी उस झरोखे की जालियों में अपनी अंगुलियाँ टांक कर दीवार से सट जाती, किसी से कुछ न कहती। मेहमान इन्तजार करते रहते कद्रदान परेशां हो उठते, और मनचले भली-बुरी कह कर खिसक जाते लेकिन किसी की हिम्मत न होती कि नर्तकी के कदमों मे भूलते घुंघरुओं के मौन को तोड़ दे। चमेली बाई सभी से हाथ जोड़ कर अर्ज करती हुई कह देती—आज बाईजी की सहत ठीक नहीं है, तबियत नासाद है।' महफिल एक गहरी निश्वास के साथ बिखर जाती। होश आने पर चमेली बाई की गोद में सिर रख कर मेरी माँ सारी रात फूट फूट कर रोती।

मैं एक आम औरत की हैसियत से समीक्षा करती हूँ कि उस नर्तकी के साथ इस जालिम जमाने ने क्या जुल्म नहीं किया? आदमी ने औरत को सिर्फ एक खूबसूरत फल समझा। लता से तोड़ कर उसे जी भर सूंघा और जब चाहा अपने कदमों से उसे मसला-कुचला। इतिहास भी सदा गूंगा रहा, इन जुल्मों का कहीं भी जिक्र नहीं किया। आदमी के हवशीपन और वहशियत के बारे में एक भी हर्फ न लिखा। यह मुमकिन भी न था—क्योंकि हर युग का इतिहास खरीदी हुई कलमों ने लिखा, खुशामदी पशु विचारों ने अपने अन्नदाताओं की बड़ाईयाँ की, चापलूसी की और अपना पेट पालने के लिए दो रोटियाँ सेकी। चंद चाँदी के टुकड़ों पर बुद्धिवादियों ने नापाक समझौते किये और औरत को शृंगार की मूर्ति कहकर उसे सदा वासना से बाँधे रखा। कवियों के बारे में आप से क्या कहूँ? उन्होंने नारी के सौन्दर्य को देखा है, उसके उभरते अवयवों में यौवन के ज्वार को पढ़ा है आँखों मे तैरता हुआ वासना का समुद्र और अधरों में छिपा हुआ अमृत पिया है उसका नख शिख वर्णन कर उसे विलासवती साबित किया है। उन्होंने कभी उसके हृदय का स्पर्श नहीं किया उसकी गोरी देह पर उन नीली नसों को नहीं देख पाये जो घोर यातनाओं की कहानी कहती रही हैं। आँख के आँसू और अधर पर उभरी दर्द की रेखाओं से उनका क्या रिश्ता? उन्होंने तो औरत को रूपराशि, चन्द्रमुखी, कमल नयनी वासना की झील व विषकन्या कहा है, उनकी निगाहें कभी औरत के भीतर छिपे हुए दर्द को न पढ़ सकी। न उन्होंने यह समझना चाहा कि उसके भीतर प्रेम का शान्त सरोवर है त्याग की लहरें हैं और धर्य की परिछाइयें। जहाँ ममता की शीतल छाया भी है और स्वाभिमान की कड़वी धूप भी। वे यह भूल गये कि औरत ने ही संसार को जन्म दिया है प्रेरणा दी है और कर्मशक्ति भी। औरत ने ही यौवन को आश्रय दिया है व्यथा को सहारा देकर खुशियाँ बाँटी हैं सौंदर्य सुधा से

प्रान-- प्रदान किया है, क्या वह केवल भोग्या है ? कदमों की ठोकर मात्र है ?

वक्त बीतता गया। माँ की उदासी कम न हो सकी—उसे सहारा था सिर्फ मेरा। मैं भी बड़ी हो चली थी। मैं माँ की उदासी तोड़ने का हर सम्भव यत्न करती। कभी कभी वह आसुओं को पोंछती हुई मुझसे कहती— मेरी बन्नो ! तू क्यों जिन्दा है ? तुझे भी मेरी तरह इस फर्श पर उम्र भर नाच कर पीटने हैं तुझे न तुझे यह रूप क्यों दिया है ? तेरे साथ भी जुल्म होंगे—और यह जन्म देने वाली माँ सिर पीट कर रह जायेगी। —कहती हुई वह मेरी देह से लिपट कर चीख पड़ती- नहीं, नहीं मैं ऐसा न होने दूँगी मैं अपने हाथों से तेरा गला घोट दूँगी।' मैं डर जाती थी। उन दिनों मैं नहीं समझती थी कि मेरी माँ किस दर्द के मारे चीखती है ? उसकी नीली आँखों में दुस्वप्न क्या पलते जा रहे हैं ? बचपन भी बचपन ही होता है। मुझे क्या मालूम था वेश्या क्या होती है ? मैं तो जब-कभी मा को नाचती देखती और लोग वाह वाह करते उछल पड़ते तो खुश होती थी। एक दिन था—जब ऊँचे घरान के आदमी रंग बिरंगी अचकन पहिन हाथों में जूही की माला उठाये हमारे कालीन पर रखी पीकदानी मे पीक थूकते हुए भद्दी हँसी हँसते थे - और हम इनकी जी हजूरी में खड़ी रहती थीं - और वह दिन भी देखा है जब ये ही रईस मुझ से नजर मिलाते हुए भी कतराने लगे थे और गूँगे गुलामों की तरह मेरे महल के बाहर नजराना हाथ में उठाये सुबह से शाम तक खड़े रहते थे—और मेरे एक इशारे पर हजारों कदम दौड़ पड़ते थे—और आज यह दिन भी है कि वे ही लोग मुझे बदजात रंडी कह कर मेरे मुँह पर थूकते हैं और मेरी मखौल उड़ाते हैं मुझे बदनाम करने से बाज नहीं आते। ये लोग भूल गये कि चारण भाटों की तरह मेरी अलसाई नींद जगाते रहते थे—और मेरे पीक को पी जाने के लिए होड़ लगा बैठते थे। खैर छोड़िये, इन बातों को। वक्त के साथ सब कुछ बदल जाता है। जिनका दिली रिश्ता होता है वे ही अपने हाथ से बुना धागा तोड़ बैठते हैं खून का रिश्ता ही अपना रंग पहचानने से कतराने लगता है। तब भला तवायफ की जिन्दगी से किसका क्या रिश्ता ? न हम किसी से बंधी हुई और न हमसे कोई बंधा हुआ, हम तो पूर्ण मुक्त हैं। हमारे संसार मे तो अदा ही का सम्बन्ध दौलत से है। सच तो यह है कि हम जिस्म की चलती फिरती दुकानें हैं —जहां हमारे रूप और यौवन का खुले आम व्यापार होता है हम स्वयं बोली लगवाती हैं और हमारे जिस्म को नीलाम करती हैं। हर व्यापारी मनचाहा मूल्य चुका कर हमारी रातें खरीदता है—फिर उन्हीं से सम्बन्धों का कैसा सवाल ? हम तो खुद स्वार्थी संसार जीती हैं, धन-दौलत से प्यार करती हैं हर जाति के पुरुष को गले लगाकर ठगती रहती हैं। हम किसी भी आदमी को गले से नहीं लगाती हैं, हम

सो सोने के सिक्कों का हृदय से जोडती हैं—चाहे वह सिक्का श्रम से भीगा हुआ हो या नापाक खून से रंगा हुआ हो। हम गुरबत को भी जाती हैं और रिसते हुए कोढ़ी — बदन को भी। हम तो दौलत की दासियाँ हैं हमारे लिए हर अमीर पति है यानी कि धन हमारा शौहर है। हमारी रातें सोने की तराजू में तुलती हैं—और फिर भी हम शराफत की आम–चर्चा करना चाहती हैं।

चमेली बाई से मेरा क्या रिश्ता था ? कुछ भी तो नहीं लेकिन वह तो मेरी बड़ी माँ थी। सभी तो उस खाला कहते थे लेकिन मैंने कभी नहीं कहा। मैं बड़ी माँ के बारे में इतना ही कहना चाहूँगी कि उसके साथ मेरा बचपन बीता। उसके पिचके मुँह को देखकर मैं हँस पड़ती था। वह मुझे नित–नई कहानियाँ सुनाती और उन्हीं कहानियों से मैंने बहुत कुछ सीखा है। वह मेरी बचपन की सहेली थी—जिसने मेरे अभावों का सूना दूर किया और मेरे शैशव को बहलाया। बाल सहज प्रश्नों का उत्तर देना भी सहज नहीं होता है। मेरी माँ मेरे सहज–सवालों का जवाब देने से कतराती थी मेरी बातें सुनकर चिड़चिड़ाहट व्यक्त करती, और डाँट फटकार कर चुप कर देती—उस क्षण मेरे आँसुओं को चुगने का काम चमेली बाई ही करती थी। एक दिन मैंने उससे भी पूछ लिया था— मेरे अब्बा कौन हैं ?" उसने सहमते हुए कहा था—'सभी का अब्बा अल्ला ताला है। हम सभी उस परवरदिगार की औलादें हैं वह हम सभी को प्यार करता है यह जहाँ उसी का है मैं और तुम्हारी माँ भी उसी की औलाद हैं। चमेली बाई मुझे कितना प्यार करती थी ? अल्फाज में बयाँ नहीं कर सकती हूँ।

उन्हीं दिनों की बात है—एक दिन मेरी माँ अपनी उदासी छोड़ कर खुशी हँसी हँस रही थी। उसके लबों पर हास की रेखायें उभरी थी और सूनी सीपियों के बीच मोतियों ने जन्म लिया था। मैं उस दिन उस हँसी का अर्थ न समझ सकी—मैं भी हँस पड़ी थी। उस दिन पंडितजी हमारे घर तशरीफ लाये थे। मेरी माँ के पास ढेर सारी शिकायतें थी—लेकिन वह कुछ न कह सकी सिर्फ सुबकियाँ भरती रही। पंडितजी ने इशारे से मुझे बुलाया और बड़े प्यार से मुझे अपनी गोद में बिठा कर मुझे दुलारने लगे। वे मेरे लिए मिठाई फल और नये कपड़े अपने साथ लाये थे। उन्होंने मेरी तालीम का बन्दोबस्त किया। मास्टरजी और मौलवीजी मुझे पढ़ाने आने लगे। दिन के उजाले में हमारी गली में आदमी कदम रखने से कतराता था—लेकिन रुपय पैसे का लोभ भी क्या होता है ? मुझे पढ़ाने वाले दिन में आते थे। मास्टरजी ने मुझे संस्कृत पढ़ाई—क्या आनन्द आता था ? हम जैसी औरतों के लिए तो इस भाषा का शृंगार साहित्य पढ़ना निहायत जरूरी है।

फिर मुझे चमेली बाई की बात याद आ गई । वह मेरे मानस से हटने का नाम ही नहीं लेती है । वह लच्छेदार कहानियाँ सुनाती तो कभी मेरे ललाट पर काजल का टीका लगा देती तो कभी राई लोन लेकर भौंवरे डालने लगती । नजर उतारने के लिए तो कई तरह के दस्तूर करती थी । कभी पीर साहेब का ताबीज मेरे गले म लटका देती तो कभी पास वाले वजकिशोरजी के मन्दिर के बाहर खडी रहकर पुजारीजी स भाडा दिलवा कर दिल को तसल्ली देती थी । ऐसा लगता है कि उसके साथ किसी न किसी जन्म का रिश्ता रहा होगा । वह कौन थी ? किस जाति की थी ? रग विलास तक कसे आई थी ? क्या वह भी मेरी माँ की तरह ही कोठे पर आई थी । इन सभी प्रश्नो को मैंने कभी नहीं उछाला । मैं तो इतना ही जानती हूँ कि वह एक नक औरत थी - और उसकी भलमनसाहत के कारण ही मेरी माँ को वेश्या होत हुए भी शराफत भरी जिन्दगी जीने की तसल्ली मिली और मुझे बेहद प्यार !

भाग्य ने कब छल नही किया ? एक दिन वह भली औरत और दुनियाँ मे एकमात्र रिश्तेदार हमारा साथ छोड गई । मौत को गले लगाने स पहिले व वह बीमार हुई और न उसने कष्ट ही पाया । रात ही को उसने मुझे सोन देश के राजा की कहानी सुनाई थी—और हम दोनो एक ही बिस्तर पर सोई थी । लेकिन सुबह होने पर वह नही उठ सकी । उस दिन मैं और मेरी माँ बहुत रोई थी । वह एक दवी थी—जो हसते हँसते दद को जीकर चली गई कभी उसने अपना राज किसी से न कहा । यह ससार उस नफरत की नजर से ही देखता रहा किन्तु वह महलो की उन औरतो से कही अधिक पवित्र थी—जो धम की ओट में पाप पिण्ड जन्म देती रहती हैं ।

चमेली बाई के साथ ही रग विलास का वातावरण समाप्त हो गया । उस महल का इतिहास ही पूरा हो गया था । मरी माँ भी वहा रहना नहीं चाहती थी । हम पर दरबार साहेब की मेहरबानी हुई और हम शहर के खास बाजार म रहने को जगह मिल गई । हम उस गन्दी गली से बाहर आ गये थे—जिसे आम आदमी हिकारत भरी नजर से देखता है ।

यह सब कुछ मेरे अब्बाजान की इनायत थी ।

———

□ चार

अरावली पर्वतमाला के मध्य यह शहर कूम गीठ की तरह है। उत्तर दिशा मे पवन शिखर पर मुगलकालीन वैभव से पल्लवित आमेर के सुरम्य महल। इन महलों से ही कच्छवाहा वंश का इतिहास आरम्भ हुआ और काबुल तथा अफगान भूमि तक कीर्ति कौमुदी का विस्तार फैला। पूर्व मे सुरम्य पहाड़ी पर गालव मुनि का पावन तीर्थ तथा भव्य मन्दिर जो हिन्दू संस्कृति की यशोगाथा कह रहे हैं। दक्षिण व पश्चिम दिशा के मध्य खुला हुआ पठार। ऐसी सुरम्य व सुरक्षित भूमि पर बसा यह शहर वास्तुकला का उत्कृष्ट नमूना है तथा इस धरा पर खिले हुए गुलाब के फूल की तरह है जिसकी गंध आकाश तक को मुग्ध किये बिना नहीं रहती है। शहर के चारों ओर कंगूरेदार मोटी दीवार का परकोटा, दूर देश को देखने वाली बुर्जें आमने-सामने देखते हुए विशाल द्वार और जगह जगह पर बनी मोरिया तथा सरल रेखा सी विस्तृत स्वच्छ सड़कें—इस नगर की शोभा के चार चांद लगा देती हैं। सारा शहर गुलाबी सागर में स्नान किया हुआ सा है। कोई भी इमारत ऐसी नहीं है—जिस पर रियासती रंग न चढ़ा हुआ हो। शहर के मध्य राजमहल मानो गुलाब की पंखुड़िया पर केशर का महकना अथवा गुलाबी हाथों पर हल्दिया झलकना। सिरहड्योढी बाजार की ओर सिंहद्वार—इसी राजमार्ग पर हवामहल! जो गर्मी की मौसम में भी बासन्ती मनुहार किये बिना नहीं रहता है—इसी के निकट चौपड़—जो कमल के फूल की तरह सदा पंखुरियां फैलाये हर आंख म सौन्दर्य भरे बिना नहीं रहती। यात्रियो के लिये विश्राम-स्थल, सैलानियों के लिए अघ विराम, नागरिकों का गोष्ठी-

स्थान मनचलों का ठिठोली केन्द्र तथा फूलों की गंध से भरा रस कटोरा है। जहाँ खड़े होकर आदमी शहर के अनुपम सौंदर्य का रसपान करते हुए यहाँ की संस्कृति व सभ्यता का सहज आनन्द प्राप्त करते हैं। इसी स्थान पर सांझ रंग बिरंगी बग्गियां आकर ठहरती हैं—और कीमती पोशाक पहिने लोग उतरते हैं चमेली, हजारा, गेन्दा व हजारे के महकते गजरे हाथों में लिपेटने के लिए खरीदते हैं तथा केवड़ा या मोगरे की रसभीनी महकती फुरियां कानों में लगाकर मस्तमस्त हो जाते हैं। इसी चौपड़ से दक्षिण की ओर सांगानेरी दरवाजे तक फैला हुआ जौहरी बाजार है। सारा बाजार गुलाबी रंग में पुता हुआ अपने वैभव की कहानी दूर से ही व्यक्त कर देता है। इस बाजार से गुजरते वक्त स्वर्ग की कल्पना सिहर जाती है। माणिक की लाली और पन्नई रंग की चमक आंखों में चकाचौंध भर देती है तथा नगर के अपरिमित ऐश्वर्य की कहानी दुहराती है। माणिक व पन्ने की लड़ियां को देखकर कुबेर की नगरी याद आ जाती है जौहरियों की दूकानों के भीतर गद्दी व मसनदें दूध-धुली चद्दर व मसहरी से ढकी-जिन पर दूधिया अचकन तथा कसूमली या अबीरी पगड़ियाँ पहिने सेठ-साहूकार अपनी तीखी नजरों से नगीनों की परख करते रहते हैं। यहाँ के पारखी संसार प्रसिद्ध हैं इनकी नजरों को धोखा देना आसान नहीं है। गद्दियों पर शीशम की चौकियाँ-जिन पर झालरदार सफेद पोश झूलते रहते हैं। उसी चादर पर चाँदी की कटोरियों में उत्कृष्ट नगीने भरे रहते हैं। कहा जाता है कि मेरे सरकार के बुजुर्गों ने इस बाजार का निर्माण जवाहरात की मंडी के उद्देश्य से ही कराया था। गुजरात व अन्य प्रान्तों से पारखी जौहरियों को ससम्मान यहाँ बुलाकर बसाया गया था। यह बाजार रंगीली तबियत का रहा है यहाँ वैभव उदारता के साथ विलास करता है। सिन्दूरी साँझ यहाँ के वातावरण में अमिय घोल देती है—इसी बाजार के अन्तिम छोर पर हमारा महल था जिसे काँच का दरवाजा तथा बाईजी का झरोखा कहा जाता रहा है। मन्दिर के बाहरी दरवाजे पर हमारा वह शीश महल मेरे बचपन की मीठी यादों का केन्द्र है। इसी झरोखे में बैठकर बाजार का दृश्य देखती थी-और यौवन का प्रथम स्पन्दन भी यहीं अनुभव किया था। इसी झरोखे में हमारे मुफलिसी के दिन गुजर थे—जिसे कभी नहीं भुलाया जा सकता है। हमारे गरीबखाने को लोग अपनी-अपनी भाषा में कई नाम से पुकारते थे। मेरी माँ ने इसी महल में अपनी जिन्दगी को फिर से नया रूप दिया। इस झरोखे के आँगन को घुंघरुओं के स्वर से झंकृत किया। नगरी के चहेते कला के पुजारी मनचले और रंगीन तबियत वाले इस महफिल की शान को चार चाँद लगाने लगे। इस महफिल में मामूली अथवा आम आदमी के आने की हिम्मत नहीं थी। शहर के जाने-माने रईस, लालाजी, ठाकुर जागीरदार व सेठ-साहूकार तथा नवाब ही कदम रख पाते थे-

और अपने गन्दई पीक से थूकदान भर जाया करते थे। हर साँझ त्यौहार लेकर आती थी, मेला जुड़ता अट्टहास गूँजता, रंग-बिरंगे माहौल में नर्तकी सोलह शृंगार किये अपनी श्वासों के साथ जिन्दगी के स्वर लुटाती। संगीतमय वातावरण में हर क्षण उन्मादित हो जाता और फिर आधी रात महफिल पर मायूसी बिखर जाती। रंगीन मेला उजड़ जाता, दीवारें स्तब्ध रह जातीं चारों ओर से घोर अंधेरा सिमट आता—जिसके साथ उदासी और निराशा की घुटन घिरती चली आती। इस जहरीली गंध में मेरी माँ मुझे अपने सीने से लगा कर सुबकियाँ लेती रहती—मुझे उसके उरोजों पर सिर रखते हुए पसीने की बदबू आती—लेकिन मैं मेरी मां से अलग न हो पाती थी।

मेरी मां मेरे लिये देवी थी—जमाना उसे कुछ भी कहता रहा हो। किसी भी नजर से देखता रहा हो। मेरे लिए वह आम्र वृक्ष की गहरी छाया थी—जिसके आँचल में अपना सिर छिपा कर मेरी देह गन्धई श्वास पीकर अमृत का अनुभव करती थी। मेरी मा की दिली—तमन्ना थी कि वह मुझे कभी नर्तकी न बनने देगी। किसी काठ की अप्सरा न बनने देगी। मुझे लोगों की नजरों से बचाकर कहीं दूर ले जायेगी और मेरी शादी किसी अच्छे से लड़के के साथ करके सुख की नींद सोयेगी ताकि उसकी लाडली को दरवाजे—दरवाजे पर ठोकरें न खानी पड़ें और अपने जिस्म का नंगा प्रदर्शन न करना पड़े। हर मा की यह तमन्ना होती है कि उसकी बेटी बाबुल का अंगना छोड़ कर किसी अच्छे शौहर के साथ अपना घर बसाये तथा सुख की जिन्दगी जीये। जब कभी पंडितजी घर पर आते तो मेरी माँ उनसे अक्सर मेरे बारे में सलाह-मशविरा किया करती थी और अर्ज करती थी—'देखा आपने आपकी लाडली के पर निकलने लगे हैं इसके कहीं पीले हाथ कर दो। मेरी आखिरी ख्वाहिश है कि यह तो किसी अच्छे घर की बेगम बन जाये वर्ना मैं दम तोड़ कर भी हमेशा तड़पती रहूँगी'—कहती हुई मेरी माँ रो पड़ती थी। माँ के आँसू मुझसे नहीं देखे जाते और मैं भी उसका साथ दिये बिना नहीं रहती। लेकिन पंडितजी हर बार हँस कर बात टाल जाया करते थे।

मेरी मा भी कितनी भली और भोली औरत थी? वह जमाने के दस्तूर को कभी न समझ सकी। कभी—कभी मेरी मा और पंडितजी अकेले में बैठ कर बतियाते। उस घड़ी मुझे किसी न किसी बहाने बहला कर बाहर भेज दिया जाता। लेकिन मैं उनकी बातें छिपकर सुना करती थी। न जाने क्यों मुझे उनकी बातें छिपकर सुनने में आनन्द आता था? मेरी मां का पंडितजी पर गहरा और पक्का एतबार था—और

होना भी चाहिये था। उस औरत ने इसी आदमी के सहारे अपनी जिन्दगी गुजारी थी। मां ने पंडितजी की बातों पर कभी शक नहीं किया लेकिन मैं उनके इरादों को भांप गई थी। वे कभी नहीं चाहते थे कि मेरा विवाह हो—मेरी डोली किसी घर की देहरी को उलांघे। मेरी मां की जिद भी बेबुनियाद थी—वह नहीं समझ पाई कि —एक तवायफ की नाजायज औलाद को कौन सा घर अपनी रोशनी बनाने के लिए रजामंद होगा? एक छोटी सी भूल पीढ़ियों की तवारीख बदल दे, कुनबे का रूख पलट दे—मेरी मां नहीं समझ पाती थी। जमाने का उसूल है कि तवायफ की औलाद को तवायफ ही बनना होगा और फिर मेरे तकदीर में भी यही लिखा था कि मैं शहर की खूबसूरत तवायफ बन कर दम जीती रहूँ। पंडितजी पर इल्जाम लगाना भी बेकार ही है। तकदीर में लिखे हर्फ कोई नहीं पढ़ सका है!

वह घड़ी भी आ गई—जब मां के मन का शीशमहल टूट कर उसी की श्वांस पर बिखर गया और वह तीखी चुभन में अपना दर्द सहेजती हुई कराह कर रह गई। जिन्दगी का एक स्वप्न कागजी महल की तरह जल कर राख हो गया—और अरमान अपने हाथों से कब्र में दफनाने पड़े। एक सुहाना भ्रम था—जिसे एक दिन टूटना था, टूट गया, कच्चे धागे की तरह। जब उसने हमेशा की तरह अपने महबूब के सामने मेरी शादी की बात दुहराई तो उस घड़ी बिचारी पर आसमां टूट कर गिर पड़ा। पंडितजी का जवाब था—'तुम क्यों जिद किये बैठी हो? न अपनी जिन्दगी के बारे में विचारती हो और न बन्नो की खुशहाली ही चाहती हो। तुम्हारी बन्नो को भगवान ने रूप का अमृत दिया है, यह राजा—महाराजाओं के दिल पर राज करेगी और एक दिन इस रियासत की राजरानी बनेगी। तुम इस गुलाब के फूल को मखमली गद्दों से उठाकर पांवों पर क्यों फेंक रही हो? अपने ही हाथों से इस हीरे को क्यों नष्ट कर रही हो? बन्नो ने गलियों की सडान्ध जीने के लिए जन्म नहीं पाया है किसी की दासी बन कर जिन्दगी बसर करने के लिए इस जमीं पर नहीं आई है। यह अप्सरा है महलों में राज करेगी मेरी बन्नो।

— मैं हर्गिज तवायफ नहीं बनने दूँगी —मां चीख पड़ी थी।

— यह क्यों भूल रही हो कि यह तवायफ की औलाद है!

— तो क्या हुआ?'

—'यह गुलाब का फूल जरूर है लेकिन किसी देवता के सिर पर चढ़ाने के लिए नहीं राजा—महाराजाओं के गले के हार में सीने पर खेलने वाला।'

— आप यह क्यों भूल रहे हैं कि आपकी ही औलाद है, और जन्म देने वाला कोई भी पिता अपनी बेटी को कोठे की मलका न बनने देगा।"

पंडितजी हँस पड़े—और मेरी माँ का चेहरा तमतमा उठा—उसकी आशा में विवशता की बदली घिर आई। उस क्षण ऐसा लग रहा था कि वह चन्द-घड़ियों में श्वास लेना भूल जायेगी और अपने इतिहास पर पूर्ण विराम लगा देगी।

पंडितजी ने माँ का मुँह अपने हाथ से तनिक ऊँचा उठाते हुए कहा—"तुम समझती क्या नहीं हो? यह हमारे भाग्य का सितारा है, तुम्हारी ही नहीं बल्कि मेरी भी तकदीर है। तुमने कभी इसकी रतनारी नयन-सीपियों में भाक कर देखा है? चमचमाते मोतियों का ढेर है-जिनपर आफताब का रस लिपटा हुआ है। कभी देखो तो सही, किस कदर शराब के चश्मे झरते हैं? खुदा ने रूप क्या दिया है सितम कर दिया विधाता भी इसे बनाते समय अपने दिल पर काबू न रख सका होगा। यह रूप की राशि है सुन्दरता की देवी है, तभी तो मैंने इसका नाम रसकपूर रखा है। सोने में गन्ध नहीं होती है लेकिन इसकी स्वर्ण देह से मदभीनी सौरभ झरती है। तुम इसकी तकदीर के साथ खेल न खेलो! यह किसी घर की बेगम बन कर सुखी न रह सकेगी हर आँख इसे हिकारत की नजर से देखेगी और यह जमाना इसे एक दिन वेश्या बनने को मजबूर कर देगा। मैं बाप हूँ मेरे दिल में भी इसके लिए उतनी ही जगह है जितनी तुम्हारे दिल में। तुम मुझे गलत न समझो। तुम अपनी आँख से आंसू न ढलकाओ। समझो! कोई भी माँ बाप अपनी सन्तान का अहित नहीं करना चाहता लेकिन मजबूरी है। यह मत भूलो कि रसकपूर वह अमूल्य हीरा है—जिसकी परख इस बाजार के पारखी नहीं कर सकते, इन जौहरियों की सारी जवाहरात भी इसके कदमों में रख दी जाये तो भी इस हीरे का मूल्य कम ही पड़ता है।'

—'क्या आप अपनी औलाद को नाचते हुए देख सकेंगे? आप कैसे बाप हैं?'

—'नाचना। इसे तुम क्यों गलत समझती हो? नृत्य तो कला है, भगवान शिव ने भी इस कला को स्वीकार किया—क्योंकि नृत्य में लय है और लय में विलय होना ही जीवन का सच्चा आनन्द है। जिस जीवन में लय नहीं है—वह नीरस व शून्यता से भरा हुआ है। कला से कोई भी घृणा नहीं करता है, कला का सर्वत्र सम्मान है। मेरी रसकपूर नृत्य-कला में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करेगी। जिस दिन इसका जीवन नृत्यमय हो जायगा—उस क्षण मैं स्वयं को धन्य कहूँगा।'

—मेरी माँ हतप्रभ सी देखती रही। न कुछ वह सकी और न कुछ सुनने की ही शक्ति रही थी। वह विरोध करके भी पराजय के कगार पर आ बैठी थी। पत्थर के बुत की तरह बैठी हुई कुछ क्षण अपने प्रिय को देखती रही और फिर अपने ही अंधेरे में सिमट कर आँखें बन्द करली। मुझसे मेरी माँ का दुख नहीं देखा जा रहा था—लेकिन मैं क्या कर सकती थी? मैंने धीरे से पर्दे को हटाया और धीरे-धीरे कदम आगे बढ़ाने लगी। उन दोनों के मध्य पहुँच कर नई अन्दाज के साथ सिर झुकाते हुए पंडितजी को मुजरा पेश किया तो वे खुशी के मारे नाच उठे और मेरी पीठ पर हाथ रखते हुए कहा—क्या कहना जवाब नहीं?

मेरी माँ अब भी न समझ पाई थी—जबकि मेरा रास्ता तय हो चुका था। उस दिन से पहिले मैं क्या थी? क्या बनना चाहती थी? मेरे कुछ के क्या सपने थे? उनका जिक्र करना बेकार है। वह दिन मुझे अवश्य याद है जब मेरा 'तवायफ संस्कार' हुआ। हिन्दूशास्त्र में सोलह संस्कार और सोलह शृंगार होते हैं—लेकिन तवायफ संस्कार का कहीं उल्लेख नहीं मिलता। पंडितजी के आशीर्वाद से मेरा जीवन—पथ बदल गया। किसी माँ की लाडली बेटी अपनी माँ के स्वप्नों को दफना कर रसकपूर तवायफ बन गई। उस दिन के बाद से ही न मैं किसी की बेटी रही और न कोई माँ बाप! क्योंकि तवायफ तो वह कौम है जिसका कोई इतिहास वंश या परिवार नहीं होता है। तवायफ तो उस बेवफा औरत का नाम है जिसकी न किसी से यारी होती है और न रिश्तेदारी ही। तवायफ का रिश्ता तो सोने चांदी की झंकार से है।

मैं नृत्य सीखने लगी थी। उस्ताद रहमत खां ने मुझे सितार सिखाई और उन्हीं के कदमों में बैठ कर मैंने पक्के राग गाना सीखा। आज भी मुझे उनका चेहरा याद आता है—जब वे अभ्यास कराते थे तो उनकी देह आत्मा में लय हो जाती थी। गुरु ब्रजनिधि के घराने में मैंने कत्थक का अभ्यास किया। उनकी हवेली में खुद जाती थी और गुरुकुल से शिष्य की तरह शिक्षा ग्रहण की। वे कला के अवतार थे—अपने सम्पूर्ण परिवार को कला साधना के पीछे लगा दिया था। वहीं पर पंडितजी भी आते थे और मेरे अभ्यास को देख कर भावी योजना बनाते रहते थे। कुछ ही दिनों में मैंने नृत्य व संगीत की दीक्षा प्राप्त करली थी। बहुत जल्दी ही मैं गायिका और नर्तकी बन बैठी।

वह दिन भी आ पहुंचा—जिस दिन मुझे अपना संकोच त्याग कर महफिल के कालीन पर अपने कदम थिरकाने थे। शायद वह दिन मेरे इम्तहान की घड़ी थी। मुझे मखमल का घाघरा और सांगानेरी काली चूनर ओढ़ाई गई। जब मैंने आदमकद

शीशे के सामने खड़ी होकर अपने आपको देखा तो मुझे पंडितजी की बात पर यकीन आने लगा। उस दिन मैंने आंख में सुरमा आंजते हुए अपने रूप को देखा था—सचमुच नीली झील में अंगड़ाई लेता हुआ सोन कमल सा दिखाई देने लगा था। मेरे पास उस दिन अपना तो कुछ भी न था लेकिन मां के पास गहनों की कमी न थी। मुझे आश्चर्य होने लगा—उस दिन मुझे जड़ाऊ नेगरी पोंछी, बगडा पहिनाई गई। हथेलियों पर सु हथी जड़ाऊ हथफूल और अंगुलियों में हीरे की अंगुठियां पहिनाई गई। भुजाओं में माणिक के जड़ाऊ भुजबन्द बांधे, गले में पन्ने का हार तथा झिलमिलाता मोतियों का हार पहिनाया गया। सिर के नीचे ललाट पर शीशफूल लटकाया। मैंने खुद अपने हाथ से हीरे की नथ को पहिन कर मोती की लड़ कान में अटकाई तो अपने ही रूप पर मुग्ध होकर शीशे के सामने बहुत देर तक खड़ी रही। मेरे प्रथम शृंगार के दिन मेरे पास मेरी मां नहीं थी अपितु मुझे जन्म देने वाले पिता अपने हाथ से मुझे सजा रहे थे लेकिन डोली में विदा करने के लिए नहीं अपितु महफिल में अपनी बेटी को रवाना के लिए। उन्होंने अपने हाथ से मेरे बदन व पोशाक पर सेंटे का इत्र मला तथा पांवों में घुंघरू बांध कर मुझे ताकने लगे। वे तो कला के उपासक थे और मुझे कला की मूर्ति बना कर अपना जीवन धन्य करने में लगे हुए थे। उस क्षण उन्हें मेरी मां की भावनाओं का तनिक भी ध्यान न था—वह बेचारी अपनी नन्हीं सी भूल को कोसती हुई अपना दुर्भाग्य पढ़ रही थी।

मैं अपने पिता के पास सोलह शृंगार किये हुए खड़ी थी। शीश महल में मेरा इन्तजार हो रहा था। आज सारे शहर में चर्चा बिखर गई थी कि रसकपूर मुजरा पेश करेगी। साजिन्दे अपनी जगह पर बैठे हुए साज छेड़ रहे थे—केवल आवाज का इन्तजार थी और मेरी आवाज बढ़ती हुई धड़कनों के बीच कैद थी। कदम आगे नहीं बढ़ पा रहे थे—संकोच का मांस पिण्ड बढ़ गया था और पांवों में सूजन चढ़ जाने का एहसास होने लगा। जीभ करड़ी होने लगी—थूक तक सूख गया, देह बिना किसी भय के कांपने लगी। पिता मुझे छोड़ कर बाहर चले गये थे लेकिन झिझक बार बार भटका रही थी। मैंने उस घड़ी हिम्मत से काम लिया और झिझक के पर्दे को तार तार करती हुई अपने कदम शीशमहल की ओर बढ़ाने लगी। नई नवेली की तरह ठुमक ठुमक कर कदम बढ़ाती वहां तक आई। मैंने महफिल के किसी भी आदमी की ओर नजर उठा कर नहीं देखा, शर्म के मारे आंखें बन्द कर लीं—किन्तु कक्ष के वातावरण में एकाएक आनन्द गूंज बिखर पड़ी जैसे ठहरे हुए सरोवर में तूफान उमड़ आया हो। महफिल मेरे रूप सौन्दर्य को देखकर झूम उठी एक दूसरे के कानों में सौन्दर्य की चर्चा खिसकने लगी। किसी ने मुझे आसमां के बीच खिलने वाले बिजली के फूल की संज्ञा दी तो किसी ने आफताब की जगमगाती फूलझड़ी कह कर

पुकारा। एक ओर से आवाज उभर कर मेरे कानों से आ टकराई–हुस्न ने क्या नूर बरसाया है? किसी ने अप्सरा कहा, किसी ने वासन्ती तो किसी ने सुन्दरता की मूर्ति कह कर पुकारा।

मैंने धीरे धीरे झिझक के गजरे तोड़ना आरम्भ किया, शर्म की कलियों को वातावरण मे बिखरा दिया और झुकी पलकों से आकाश की ओर देखते हुए घुटनो के बल पर झुकते हुए सभी को सलाम किया। मेरे महावर लगे पाव सारंगी की तरङ्ग के साथ थिरक उठे और तबले की ताल पर घुंघरू बोल उठे। सकोच का प्रथम क्षण टूटना था कि देह लता की तरह झूम उठी और प्राण वक्ष पर बैठी हुई कोयल कूक उठी। जयदेव कवि के गीत गोविन्द का पद मेरे नृत्य जीवन का मगला चरण था। आज भी मुझे याद है कि मैं राधा के वेश मे अपने वनमाली को यमुना के किनारे कदम्ब वृक्षो की गम्भीर छाँव मे खोज कर वेणु की राग मे तन्मय हो जाना चाहती थी। उस दिन महफिल ही मेरे लिए यमुना का सगीतमय तट था–और वहाँ बैठा हुआ रसिक-समुदाय कृष्ण था–और मैं बावरी राधा। राधा के लिए वह महफिल कृष्णमय थी स्वय राधा कृष्णमय हो चुकी थी-फिर कैसा भय और सकोच! आज कुछ भी नहीं है–न कृष्ण और न यमुना का किनारा–केवल राधा है।

–उस दिन मैंने महफिल मे बाजी मार ली। सभी ने वाह-वाह के शोर से महल को गुजित कर दिया–मेरी देह पर स्वर्ण मुद्रायें न्योछावर की गई। सारे शहर में मेरे हुस्न मेरी अदाओं तथा नजाकत के चर्चे फैल गये। सचमुच में जौहरी बाजार की बेश कीमती हीरा बन गई थी। हर सांझ महल की गली गजरों की महक से बौरा जाती और इत्र की गध से बहक उठती। कौंच-दरवाजा सजने लगा–और महफिल मे मेले जुड़ते। बैठने को जगह न मिलने पर भी रसिक आना न भूलते। खड़े खड़े ही मेरा नृत्य देख कर झूम उठते। मैंने अनुभव किया कि कला प्रेम की ओट मे भूख की भयकर आग सुलगी हुई है। मेरे नृत्य के प्रशसक या गीत माधुरी पर मुग्ध होने वाले इने गिने लोग ही आते अपितु मेरे यौवन और रूप के पारखी या गाहकों की भारी भीड़ थी। यह असत्य है कि जीवन मे कला की भूख या साधना रहती है–अपितु यह सच है कि कला के झीने पर्दे के नीचे वासना की बारूद बिछी रहती है। मेरे हुस्न के आशिक मुझ पर फबतियाँ कसने आमन्त्रण के भद्दे इशारे करते कुछ गजरे की बिखरी कलियाँ मुझ पर फेंकते तो कुछ मुझे दिखा कर मेरी ओर स्वर्णराशि फेंकते थे।

–मैं स्वय भी यौवन के उन्माद मे पागल थी। वर्षा नदी की तरह प्रबल वेग के साथ बहती चली जा रही थी–किनारों की ओर देखना मौत का पैगाम

समझती थी। किनारे ढहकर मेरे पीछे झकोले खाते चले आ रहे थे। मैंने न जमाने की परवाह की और न मनचलों की हरकत की ओर कभी गौर किया अपितु हर हरकत का मुस्कान के साथ जवाब देती हुई सवालों को गूंगा कर देती तथा सहज रूप से लोगों का दिल जीत लेती थी। आम आदमी की जुबान पर 'काँच का महल' 'हीरे की फूलझड़ी' शब्द चढ़ गया था। मेरा जलवा देखने के लिए मेरे शहर के रईस ही नहीं अपितु दूर दूर की रियासतों से जागीरदार, सेठ साहूकार व नवाब आने लगे। वे सभी मेरा नृत्य देखने, मेरा स्वर सुनने आते थे लेकिन मेरी देहरी पर कदम रखते ही उनके खयालात बदल जाते थे—तथा उनका एक ही लक्ष्य रहता था—किसी भी कीमत पर रसकपूर की देह को खरीद लिया जाय। वे बहुत से थे और मैं अकेली! उन सभी की कामना को सफल करना मेरे वश की बात न थी—वे सभी मुझे अपनी बनाना चाहते थे और तवायफ की जिन्दगी में किसी एक के साथ बंधना लिखा नहीं।

—अब आपको वह राज बताने जा रही हूँ—जिसे आज तक मैंने अपने यौवन में छिपा कर रखा। मेरे सरकार से भी मैंने कभी जिक्र नहीं किया। औरत की एक कमजोरी होती है—और वह है दिल! चाहे वह महलों के संगमरमरी आंगन पर कदम रखती हो या मुफलिसी में जीने वाली कांटों पर नंगे कदम रखती हो। चाहे राजकुमारी हो या गली की भिखारिन। दिल सभी के होता है और कोई भी दिल धड़कन से सूना नहीं रह सकता। यौवन के प्रारम्भ के साथ ही जीवन का क्रम बदलता है—धड़कनें गीत सुनाने लगती हैं—अपना ही स्वर किसी का सन्देश कहने लगता है। मैंने ज्यों ही यौवन की गदरायी देहरी पर अपना महावर लगा कदम रखा तो अपने आपको न संभाल पाई मेरा हृदय फागुनी उल्लास से भरने लगा और मेरे रोम रोम में वासन्ती पवन चुभ कर मीठी सिहरन पैदा करने लगी। अंग अंग स्वत ही उभार के साथ कसमसाने लगे। वस्त्रों के बंधन बदन पर बट उपाड़ने लगे अथवा जकड़ कर टूट जाते। कंचुकी चन्द पल में भीज कर मुझे गिचगिची सी लगती। उस क्षण मुझे ऐसा भान होता कि मेरी कचॅलो देह पर बिजली के फूल जन्म लेने लगे हो अथवा लता सी देह पर डालियाँ चटक कर फूल खिलने चले हों। आँखों की प्यालियों में कसूमली रेखायें न जाने कैसे तिरने लगी जैसे खंजन पक्षी शराब के पोखर में डूब कर आये हो या किसी ने नयन–आकाश में इन्द्रधनुष खैंच दिया हो।

—उन दिनों मुझे अपनी ही देह में फागुनी मौसम बिखरता हुआ दिखाई देने लगा मेरी उमंगें सोन पक्षी की तरह पंख छितरा कर खुले आकाश में उड़ानें

मरने लगी। मैं भूल गई थी कि मैं कौन हूं ? मेरा क्या अस्तित्व है ? इतिहास हमेशा परछाई की तरह जिन्दगी से लिपटा रहता है। जो इतिहास की उपेक्षा कर आगे बढ़ते हैं—उन्हें एक दिन उसी स्थान पर लौट कर आना पड़ता है।

—मैंने कल तक यौवन का बचपन जिया था—अभी बचपन ने मुझे छोड़ा ही था कि बदनाव सा आने लगा—जैसे किसी ने मेरे सफेद वस्त्रों को कसूमली रंग में भिगो दिया हो। मुझे ऐसा अहसास होता कि हर आने वाले की आंख में आमन्त्रण के भाव हैं। मैं आंख के भावों को समझने में निपुण हो चली थी। कवियों ने नयन पर हजारों दोहे लिखे कुछ मैंने भी पढ़े थे लेकिन मेरा अनुभव मेरा ही था। आंख की भाषा आंख से ही पढ़नी और आंख के सवालों का जवाब आंख से ही देती। आने वालों की भीड़ थी—और उनके हाथ में सोने की अनगिन मुहरें। दौलत हुस्न का सौदा करने के लिए हर घड़ी आतुर थी। कई सौदागर मेरी नथ की बोली लगा कर चले गये—लेकिन मेरी नथ न बिक सकी और भाव चढ़ने गये। मेरी मां हमेशा हर बोली को ठुकराती रही। उसे दौलत की तमन्ना न थी वह तो अपनी बेटी के पीले हाथ करने के लिए अपने टूटे स्वप्न जुटाती रहती थी।

—भीड़ में कई आकर्षक व्यक्तित्व थे—उन सभी के बीच होड़ थी—रसकपूर को खरीदने की। किन्तु उन सभी व्यक्तियों के चेहरे पर मुझे खूंखार जानवरों की आकृतियां दिखाई देती और आशंका से मेरा बदन कांप उठता। लेकिन उस भीड़ में एक चेहरा ऐसा भी था—जो मुझे अपनी ओर आकर्षित कर सका। वह आदमी मेरी कला का उपासक न था वह तो मेरा पुजारी था। मेरे नृत्य को न देख कर हर घड़ी मुझे देखता रहता मेरे गीत को न सुनकर मेरी आंखों की गहराई में न जाने क्या खोजता रहता था। महफिल उठ जाती लेकिन वह उठने का नाम न लेता। वह बेसुध सा वहां बैठा रहता और मुझे घूरता रहता।

वह कोई अमीर आदमी न था और न किसी रियासत का राजा या जागीरदार ही। किन्तु वह फकीर भी न था—हो भी कैसे सकता था? जो आदमी रसकपूर के दरवाजे की देहरी उलांघ कर आया हो – वह कभी फकीर नहीं हो सकता।

आज भी मुझे वे मधुर स्वप्न भरे क्षण याद हैं—जब उसने अपने हाथों से मुझे सोने का हार पहिनाया था—लेकिन मैंने उसके हृदय को पढ़कर भी उसके साथ वैसा ही व्यवहार किया जैसा कि आम आदमी के साथ किया करती थी। एक दिन उसने मेरी देह को रंग बिरंगे महकते फूलों से सजाना चाहा—और मैं भी उसके इस प्रस्ताव को न ठुकरा सकी। मेरी सजल आंख ने उसे मूक स्वीकृति दे दी। उसने

अपने हाथ से मेरे हाथ में जूही का कगना पहिनाया तो मैं बिना किसी हिचक के आगे बढ गई थी। मेरे जीवन का यह प्रथम क्षण था—जब किसी मर्द का मदिर-स्पर्श मैंने लिया—उस क्षण मेरी यौवन वीणा के तार एक साथ झंकृत हो उठे। मेरा रोम रोम अजीब से सुख-सागर में डूब गया। मेरा मन ही विचलित न हुआ था—वह भी मेरे स्पर्श से रोमांचित हो उठा—और मेरी अगुलियों को अपनी हथेलियों पर रख कर मेरी आँखों में खो जाने के लिए विकल हो गया। वह उस क्षण फूलों से शृगार करना भूल गया तथा मेरे रूप का साधक बन जड हो चला। मैंने अपने आपको उस क्षण सहेजते हुए धीरे से कहा—'पहिनाओगे नही ?"

—'ऐ !' वह चौंक पडा।

—'कहा खो गये ?"

—'तुम कौन हो ?'

— मैं ? मैं कौन हू ? इतना भी नही जानते हो ? फिर यहाँ किसके लिए आते हो ?'

—'तुम्हारे लिए, सिर्फ तुम्हारे लिए।"

—'मुझे जानते ही नही हो तो फिर ?'

— सच। मैं नहीं जानता हूँ—तुम कौन हो ? तुमसे मेरा क्या रिश्ता है ? मैं तो इतना ही जानता हू कि विधाता ने तुम्हारी देह को फुर्सत की घड़ी में रचा है उस समय शायद वह भी भूल गया होगा कि मैं किसकी रचना कर रहा हूँ ?"

—'पहिनाओ न !" मैंने अपनी अगुलियों से उसके हाथ को कुरेदते हुए कहा।

—'यह अवसर हमेशा मिल सकेगा ?"

—'यहाँ के दस्तूर से तो शायद परिचित हो।"

—'मैं सारी रात तुम्हारी आँखों को इसी तरह देखना चाहता हूँ।'

— पागल !'

—'क्या कहा ?"

— यहाँ तो रात भर की बात नहीं, चन्द पलों की चर्चा करो ! वह भी हमेशा नहीं—सिर्फ आज की रात के चन्द क्षण !'

—वह उदास हो गया।

—'क्या विचार रहे हो ?'

— क्या तुम मेरे साथ नहीं चल सकती हो ?'

— कहाँ ?'

—'मैं तुमको यहाँ से बहुत दूर सुखी हवा में ले चल सकता हूं—जहाँ न महफिल होगी और न तुम यह जिन्दगी जी सकोगी।

—'मैं तुम्हारी कौन हूँ ?

-- मेरे दिल की मलिका हो ! म तुमसे प्यार करता हूँ।

— प्यार ! और मुझसे ? एक तवायफ से ?' —कहती हुई म तीव्र स्वर से हँस पड़ी उसकी अज्ञानता पर। यद्यपि मेरा हृदय उससे बतियाने पर तृप्ति का अनुभव करता था। यदि वह मुझे महफिल मे दिखाई न देता तो मेरा मन उदास हो जाता और विकलता भरी निगाहो से उसे खोजने का यत्न करती रहती। वह दिन म कभी नही भूल सकती—जब मने प्यार का मजाक उड़ाया था। किसी के दिल को शीशे के खिलौने की तरह अपने कदम से तोड़ डाला था।

— मै झूठ नही कह रहा हूँ, मेरी बात पर यकीन करो ! मने जब तुम्हे पहली बार देखा—तभी से मेरा हृदय तुम्हारे साथ जुड़ गया है। सच तो यह है कि म तुम्हारे बिना जि दा नही रह सकता हू काश ! तुम मेरे हृदय को चीर कर देख सको—लहू के हर कतरे मे तुम्हारी तस्वीर नहीं तुम अगड़ाई ले रही हो।'

— मेरे हुजूर ! यह आप क्या फरमा रहे हैं ? मैंने आप पर कब अविश्वास किया ? म तो आपकी खिदमत मे हमेशा हाजिर हू आपकी बान्दी हूँ हुक्म दीजिए।'

— 'तो फिर कह दो – इन घु घुरुओ का क्या मोल होगा ? इस सोने के पिंजरे से उड़ने की क्या न्यौछावर होगी ?'

—'हुजर ! मुहब्बत की दुनिया म सौदेबाजी का यह कैसा दस्तूर ? प्यार करने वाले कभी सौदागर नही हो सकते।

तुमसे सौदा नहीं है सौदा तो उन जल्लादो के साथ है—जो सोने के सिक्कों के खातिर जिन्दगी म गन्दगी भर देते हैं और चिराग रोशनी को अंधेरे मे बन्द कर लेते हैं अपनी अस्मत के सौदागर ये लोग तुम जैसे अमूल्य हीरे को सहज मे क्यों मुक्त करने लगे ? एक ओर मेरा प्यार भरा दिल है और दूसरी ओर यह जिन्दगी। मेरे पास दौलत नहीं है जो कुछ भी था—वह तुम्हारे यहाँ आने के दस्तूर मे भर

चुका हू। अब तो मामूली आदमी भी न रह पाया हूँ सडक पर आ गया हूँ यदि तुम साथ दे सको तो मैं इस दुनिया का सबसे बडा अमीर हूँ। यदि तुम्हारे हृदय म मर लिए तनिक भी जगह हो तो मेरे साथ चलो!"

— मै उसके प्रणय को न समझ पाई अपितु उसकी आँखों मे मुझे याचक से भाव दिखाई दिय। उसकी विकलता ने चन्द पल के लिए मुझे भी विकल कर दिया।

—म उसके प्रति आसक्त अवश्य थी, लेकिन प्रेम जाल म फस कर दर दर की भिखारिन नही बनना चाहती थी। एक पल के लिए उसने मुझे चौराहे पर खडा कर दिया था। यदि मैं उसके प्यार को ठुकरा देती तो वह मौत से खेल लेता। मैं उसके खून से अपने आँचल को गन्दा नही करना चाहती थी। न ही उसके प्यार के नाम पर अपने आपको उसके साथ ही जोडना चाहती थी। भावना के आवेश मे आकर मै अपनी माँ की तरह जिन्दगी बर्बाद नही करना चाहती थी। मेरी मा भी प्यार व फूलो की महक म तितली की तरह उड कर आकाश लाघने घर से भाग आई थी।

— वह क्षण खुदकशी के भय से भरा हुआ था। मेरा प्रेमी आत्महत्या के लिए सकल्पशील और मैं अन्तद्वन्द्व के शिखर पर खडी थी। मैंने उसके किसी सवाल का जवाब देना उचित न समझा। वह अपने ही मन मे अनेक उद्गार जी रहा था। उसने मेरी हथेली पर अपना गम अधर रखते हुए कहा 'तुम मुझे नहीं समझ सकी हो। मैं तुमको हृदय से प्यार करता हूँ तुमको इस दुर्गन्ध से निकाल कर एक छोटी सी झोंपडी मे ले चलूगा। मेरे पास तुम्हारे शृगार के लिए सोने चाँदी के रत्नजडित गहने नही हैं लेकिन अपने इन हाथों से तुम्हारी माँग म कुकुम भरूँगा। इन बाहुओं के झूले मे तुम्हारी इस सुकुमार देह को झुलाऊँगा। हर रात महकते गजरो से तुम्हारे अग अग का शृगार करूँगा। हम दोनों के प्यार का साक्षी एक नन्हा सा दीप होगा—जिसके मद्धिम उजाले म हम एक दूसरे के दुखदर्दो को जीते हुए रहेंगे। कल्पना करो कि हमारा ससार इस कस्बे से अलग ही होगा।'

— म फिर भी मौन रही।

—'क्या तुम्हें मेरा प्रस्ताव मन्जूर नही है?'

— मैं हमेशा की तरह हास के फूल बिखेर कर रह गई और वह अपने हृदय पर हाथ रख कर निश्वास के साथ मूक हो गया।

मै उसके प्रेम का सम्मान न कर सकी। वह हर साँझ हाथ में महकता गजरा लिए मेरे दरवाजे पर आता। महफिल में सबसे पीछे बठता लेकिन उसकी निगाहें

मुझ पर होती । उसमे मुझे एक नया संसार दिखाई देता । धीरे धीरे उसकी बातो मे मिठास का अनुभव होने लगा—और मैं अपने हृदय म उसको स्थान देने लगी । सच तो यह था कि मैं उसकी भावनाम्रो के साथ बह चली । कभी कभी तो उसके इतनी नजदीक चली जाती कि मुझे मेरा अस्तित्व मिटता हुआ दिखाई देता । उसके साथ सुबह तक बतियाती रहती जब वह जाने के लिए खडा होता तो मुझे सूनेपन का एहसास होता । उसके कन्धो पर अपना सिर झुका कर अपने आपको भुलाने का यत्न करती । वह भी मेरे केशपाश म छिपा हुआ मुझे विश्वास दिलाने का यत्न करता । मेरी अजीब दशा हो गई थी । कभी उस पर विश्वास करती तो कभी अविश्वास और भावी भय से मेरा मन काँप उठता था । जब वह चला जाता तो मुझे अपने भीतर खामोशी काटने लगती और जब वह मेरे नजदीक होता तो मैं उससे दूर भागने की योजना बनाती । वह भी आग म जल रहा था और मैं भी शमा की तरह जलने लगी—फिर भी इस शमा ने उस परवाने पर एतबार नही किया । म उसकी नीयत पर शक की नजर रखती रही । उसकी अजुरी के महकते फूलो को फरेब की सजा दी । उसकी आखो म तिरते हुए सावन को धोखा समझा । जब कभी उसके नजदीक पहुच कर उसमे घुल जाने की चाहना करती तो मेरे भीतर से मुझे हाले से कोई पुकारता — बन्ना ! मैं इसी राह स गुजर कर इस मजिल तक ला दी गई हू । मैं नहीं चाहती हूँ कि तेरे सीने म जख्म पदा करूँ या तुझे इस फूल की सेज तक न जाने दू लेकिन ये फूल कागजो हैं और इनम बनावटी खुशबू है—इसी गन्ध के पीछे एक जवान औरत सब कुछ लुटा आई थी और आज अपनी बेटी क कदमा मे घुघरू बाध कर तडफाती रहती है । मेरी बेटी मर्द जात बडी कमीनी है फरेब ही इनका मजहब है इनकी जिदगी म उसूल नाम ही नही है हिरनी की तरह मूर्छित होकर इनके प्रेमजाल म न फस जाना ।'

—म चारो ओर देखती—मुझे मेरी माँ कहीं नही दिखाई देती । मेरी माँ ने मेरे बढ़ते कदम कभी नहीं रोके । लेकिन मेरा मन ही मुझे बार बार टोकता था आगे बढने से हर घडी रोकता था । मने खुद उसके प्यार की कद्र न की वर्ना प्यार की राह पर चलने वाले धधकते अगारो पर कदम रखते हुए भी नहीं हिचकिचाते हैं । मौत के सामने भी अपना हौंसला पस्त नहीं होने देते हैं । सच तो यह था कि मेरी जिन्दगी म ऊँचे इरादे और बडी तमन्नायें थीं । मुझे महत्वाकाक्षिणी औरत कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति न होगी । जो औरत सुनहले स्वप्न सजोकर आगे बढ रही हो—वह एक मामूली आदमी के साथ सामान्य जिन्दगी जीने को कब खुश हो सकती है ।

मैंने उसे मामूली आदमी समझा। महत्त्वाकांक्षा के सागर पर उसका अस्तित्व तिनके के समान था। मैंने यह इरादा कर लिया था कि किसी मामूली आदमी के साथ बंध कर घटिया किस्म की जिन्दगी जीने की अपेक्षा तो लाखों दिलों पर राज करूँगी।

—मुझे नूरजहां बनना था। तब भला यह होगा किसी फकीर की झोली में कैसे गिर सकता था। मुझे तो अपने जहांगीर की तलाश थी—जिसे अपनी नजरों से घर बिना सल्तनत पर राज कर मद जाति से बचा लूँ। उस मेरे आशिक को भी ठुकराना नहीं चाहती थी। उस भले आदमी से साफ साफ कहते हुए हिचक जाती थी। उसके साथ फरेब की जिन्दगी जीने लगी। उसके लिए एक मीठा दर्द बन गई। वह मुझे रसवती समझता था—उसे क्या मान कि मैं उसकी श्वास श्वास में मीठा जहर बन कर घुलती जा रही हूं—और एक दिन उसके लिए मौत की काली चादर बन जाऊंगी।

—आज मैं अपने आप को जहरीली नागिन कह सकती हूँ अथवा मौत की सुनहली परी लेकिन उस दिन अपनी जिद और इरादों पर इस कदर नाज था कि अपने आपको संसार की खूबसूरत तसवीर समझती थी। मैंने क्या पाप नहीं किया गुनाहों की मूर्ति रही हूँ मैं लोगों के लिए मौत का फन्दा और बर्बादी का पयाम बन गई थी। हजारों लोग मुझे नशा समझने लगे थे। मेरे दरवाजे पर आये बिना उन दीवानों को नींद नहीं आती थी। मैंने न जाने कितने घर बर्बाद किये, कितनी हवेलियां नीलाम करवाई मेरे कारण ही कितने ही ऊँचे घरानों की इज्जत सड़क पर धूल हुई और कितने खिलखिले परिवार सुबकियां लेते हुए भीख मांगने पर विवश हो गये। कितनी ही सुहागिन औरतों के हाथ के कंगन और गले के मंगलसूत्र साहूकारों के गिरवी गये या बिक गये। मैं कितनी ही स्त्रियों के लिए अभिशाप बन कर आई और उनकी निगाहों में डायन का रूप बन गई। सच मैं आग हूँ वरदान समझ कर जो कोई मेरे दरवाजे पर आता था—उसके लिए हजार की पलियों में छिपी धधकती आग थी।

—यह सच है कि मैं किसी के घर न गई और न किसी को अपने जाल में फसाया तथा न किसी को मोल प्यारे से बांधा। मैं तो अपना धर्म निभा रही थी—ईश्वर ने मुझे रूप और नजाकत दी पिता ने मुझे राह बताई और इरादों ने आग बढ़ाया। इस नाचीज ने कभी किसी से कुछ न मांगा, कुछ न चाहा, किसी के गले गिर अपना बनाने के लिए मज न की। मेरा कसूर तो सिर्फ इतना ही था कि मेरे दरवाजे हर दौलत वाले के लिए खुले थे—और मेरी मदभरी निगाहें उनकी अतृप्त इच्छाओं को शराब की प्यालियां पिलाती थी। फिर भी अपने आपको निर्दोष नहीं स्वीकारती हूँ।

—मेरी महफिल में आने वाला हर मरम मेरे जिस्म का भेड़िया था हर आदमी ललचाई नजरों से देखता था हर जीभ मेरे बदन का चाटने के लिए कुत्ते की तरह लार छोड़ती रहती—लेकिन एक आदमी उन सभी से अलग था—वह आदमी नहीं फरिश्ता था। उसने मुझे प्यार दिया मेरी आरजूओं को समझा मेरे जजबात को आवरू बख्शी लेकिन मैंने उस दीवाने परवाने का अपने रूप की लौ में जला डाला। उसके प्यार, उसकी कोमल भावनाओं को खाली प्याले की तरह अपने कदमों से हर घडी ठुकराया और वह तमाशबीन की तरह चुपचाप अपने ही आँसुओं को चुगता हुआ अपनी बर्बादी का तमाशा देखता रहा। लुटता रहा लेकिन मुंह से उफ न निकाल सका। मेरी बेवफाई पर उसने कभी अफसोस जाहिर नहीं किया मेरी जिद पर उसने कभी लाल आखें न की और मेरे फरेब को कभी मुँह से व्यक्त न किया।

—आज विचारती हूँ कि प्रेम जगत त्याग के आकाश की सिमटी शीतल छाया के नीचे पलता हुआ दावानल की तरह जलता रहता है। प्यार में अविश्वास सहज है तभी तो भर्तृहरि ने कहा होगा—'धिक् तां च तं च मदनं च इमां च मां च।' मेरे साथ भी कुछ ऐसा ही घटा जो मुझे हृदय से प्रेम करता हुआ सर्वस्व अर्पित करता रहा—उसकी भावनाओं का मैंने कभी सम्मान नहीं किया और मैं जिन्हे प्यार करती हूँ अपना सब कुछ लुटा दिया—उनके इतिहास में प्यार नाम का कोई शब्द ही नहीं है। *औरत एक खिलौना मात्र है। उनकी रानियां ही उनके नाम पर* जिन्दगी जीता हुई सदा घुट जीती हैं। प्रेम और बन्धन क्या अविश्वास ही है अथवा फरेब का जाल ही? जिसकी आड में हम सभी पशुओं की तरह नंगी जिन्दगी जीना पसन्द करते हैं। इनसे तो पशु अच्छे हैं - जो फरेब से दूर रह कर अपनी यथार्थ जिन्दगी जीते हैं। शारीरिक भूख के लिए स्वतन्त्र हैं न कोई कल्पना का चित्राम सवार और न लुभाने के लिए फरेब का अभिनय।

खैर! छोडिये इस अध्याय को। वह रही थी आपको आपबीती और कहने लगी जग रीति। हां तो आपसे बतिया रही थी कि—मेरे उस प्रिय का नाम केशव था वह हिन्दू और मैं मुसलमान। प्यार के संसार मे जाति बन्धन की दीवार स्वतः ही टूट जाती है। पडितराज जगन्नाथ का भी मुगल शहजादी से प्रणय हो गया—पडितजी उसकी रूप माधुरी के सामने समाज को ठुकराने के लिए सहमत हो गये। मन जिधर रम जाये जिससे बध जाये फिर सहज में उस पथ से हटने का नाम नही लेता है। मेरा प्रिय, खानदानी घर का इकलौता कुलदीपक, अपने पिता का उज्ज्वल भविष्य और माँ के आखो का तारा था—और मैं कोठे पर नाचने वाली

तवायफ की नाजायज औलाद ! दुनिया की निगाहों में नफरत की आंधी ! वह जन्म से ही विद्रोही और मैं गुमनाम। मनचलों के कदमों की रज में श्वांस लेने वाली एक मामूली बदनाम औरत थी। उसके और मेरे बीच विरोधाभास था—एक लम्बी खाई थी—जिसे पाटना मेरे वश की बात न थी। वह कुदरत के संसार में रंग बिरंगे फल-कलियों के संग रास रचाने वाला भवरा और मैं सोने चांदी के गिरि शृंगों पर अपने उन्माद तथा देह से सौरभ भरने वाली, रूप लुटाने वाली एक नर्तकी।

—मेरा केशव मुझे कुलवधु बनाना चाहता था-समाज की आग से खेलकर, और मैं नगरवधु बनने की डगर पर कदम रखती चली जा रही थी। मेरी जगह यदि कोई भिखारिन होती तो इस प्रस्ताव को कभी नहीं ठुकराती, अपने प्रिय का हृदय कभी नहीं मुरझाने देती लेकिन मैं तो ठहरी फरेबी दुनिया की नागफणी। वह तन मन से मुझ पर न्यौछावर था—और मैं उसकी परवाह तक न करती थी। वेश्या कभी किसी के साथ बंध कर रहे—यह नामुमकिन है, हमारा जन्म बंधन के लिए नहीं, मुक्ति के लिए होता है। हमने तो लाशों की जाल पर कदम रख कर अपने जलवे दिखाये हैं, उन्हीं के खून से अपने तालुओं की महदी रची है, तभी तो हम पर कोई विश्वास नहीं कर पाता और हम विषकन्या कह कर पुकारा जाता है।

—केशव मुझसे विवाह करना चाहता था। केशव में कुछ कमी भी न थी। हृष्ट पुष्ट गौरवर्ण देह वक्ष तक झूलते हुए घने काले लम्बे बाल कानों में रत्नजड़ित स्वर्ण-कुण्डलियां, कण्ठ में मूंगों की झूलती माला। एक हाथ में पान के बीड़ों से भरी चांदी की डिबिया—और दूसरे हाथ से कानों के पास उलझे बालों को झटकने की आदत। उसमें सबसे बड़ा भोलापन यह था कि जब वह देखता था तो ऐसा लगता कि उसकी आंखों में नीलम के मेघ उतर आये हों—अथवा सारंग के भोले सुकुमार बच्चे छलांग मार रहे हों। मुझे उसकी आंखें नीली झील में तिरती हुई सी लगती और उन सीपियों में मेरा प्रतिबिम्ब सदा झिलमिलाता रहता। सफेद चूड़ीदार पायजामे पर जारजेट की अचकन, उसकी देह पर ऐसी फबती थी मानो बर्फीली देह से सोने की ओस झरी हो ! वह इसी वेश भूषा में मेरे दरवाजे पर आता था। उदासी पर भी मुस्कुराहट राज करती थी—इसका राज मैं कभी न समझ पाई।

मैंने उसका घर कभी न देखा था। जबकि उसने बहुत बार मिन्नते की, यहां तक कहा कि—'तुम मेरे हृदय की रानी हो ! अपने घर को इन कदमों से कभी तो पवित्र कर आओ। मैं तुम्हारी कसम खाता हूं, वहां तुमको अपनी बाहुओं में बांध कर नहीं रोकूंगा, तुम मुझ पर विश्वास करो। तुम्हारी निर्मल सी दर्पणी काया पर अपनी देह की छाया नहीं गिरने दूंगा, तुम्हारे घुंघरुओं के लास्य को न

तोड़ूंगा तुम्हारी अनसाई देह का एक भी फूल न झरने दूंगा। मैं तो तुम्हारी सौरभ का पुजारी हूँ मेरे घर मे तुम्हारी सौरभ भरेगी तो मैं उसी गंध मे जीकर अपनी उदास रातें गुजार दूंगा। अपने मन से भय निकाल दो। आदमी अवश्य हूँ लेकिन मेरे भीतर वह भेडिया नहीं है जो मास खाने का आदी हो! एक पल के लिए अपने प्रिय पर विश्वास भी कर लो! मैं अजनबी जरूर हूं लेकिन तुम्हारे लिए नहीं। मेरा और तुम्हारा तो जन्म जन्मान्तर से बधा हुआ रिश्ता है, हर जन्म में तुम मुझसे दूर रही हो—और इसी दूरी के कारण हमे फिर से जन्म लेना होता है। आज मेरी साध पूरी कर दो!'

—लेकिन मै उसके घर न जा सकी। उस इन्सान की छोटी सी आरजू पूरी न कर सकी। यदि मैं उसका प्रस्ताव स्वीकार कर लेती तो शायद जीवन का इतिहास किसी दूसरे मोड पर होता फिर मैं आपको शायद आपबीती न सुना पाती। उस देहरी पर कदम रखने से मेरी जीवन यात्रा का पथ दूसरा ही होता। मुझे इन गलियो से न गुजरना होता—जिनकी आम-चर्चा आपसे करने जा रही हूँ। लेकिन मेरे रूप का ग्रह न गल सका मेरी जिद का दम्भ न ढल पाया और मैं *उसके साथ* नित नये फरेब रच कर उसकी मासूम जिन्दगी से खिलवाड करती रही। मैं कैसी प्रेमिका थी और आज भी खुद को इसी नाम से पुकार रही हूँ—उसके साथ कितना बडा अन्याय किया? मैंने पाप किया था किसी के चमन को अपने कदमों से रौंद कर अट्टहास किया था खुदा उसी की सजा दे रहा है। मैं इस सजा से घबराऊं भी नही *अपितु इस आग मे जल जाना चाहूंगा ताकि* मेरे दामन के दाग भी मेरे साथ जल जायें।

—वह दिन भी आ गया - जब प्यार का सिलसिला टूटा और बहती हुई दरिया सगीन पर्वत शिखर से टकरा कर दो भागो में बट गई। उसका किनारा मुझसे बहुत दूर हो गया एक कहानी बन कर रह गया। उसके प्रेम का मकबरा टूट कर गिर पडा, उसका मन्दिर एक ही झंझा मे बिखर गया वह कागजी महल एक ही लपट मे जल कर राख हो गया। उसके मनभीगे स्वप्न जहर पीकर सदा के लिए किसी अधी गुफा मे सो गये। वह जिस देवी को पूजता था प्रार्थनायें कर अपने नयनों से जिसकी आरती उतारता था जिसकी शर्बत से अपनी प्राण ज्योति को जगमगाता था, जिसकी देह को अपने सान का महकता गजरा समझता था जिसे चन्दन की तरह अपनी गम देह पर लेप लेना चाहता था—उस प्रेमिका की शक्ल देखना भी उसके लिए असम्भव हो गया। मैं उसकी जिन्दगी मे वरदान बनने की अपेक्षा अभिशाप बन गई।

—क्या गुजरी होगी उस सुकुमार हृदय पर ? उस दिन इस निष्ठुर ने कल्पना भी न की थी। अब वह हमारी महफिल का जगमगाता सितारा न रह सका, दरवाजे के भीतर कदम रखने की काबिलियत उसने गवा दी। मेरी नजर का पमाना भी बदल चुका था, उस आदमी मे ओछापन दिखाई देने लगा। उसके कदम हमारी कालीन पर गन्दगी को जन्म देने वाले बन गये। जिन कदमो के नीचे सोने की पराग थी—उन्हीं के ऊपर कीचड उभर आया। जहाँ तक मेरे दिल का सवाल है, उसकी चर्चा करना ही व्यर्थ है, आप भी यही दुहरायेंगे कि तवायफ के दिल नहीं होता है।

केशव एक मामूली आदमी रह गया था। उसकी हवेली नीलाम हो गई, कर्ज के बोझ से दब कर वह बूढ़ा हो चला बालो में सफेदी झलकने लगी, आँखें डूबती जा रही थी और देह की पोशाक उसकी गरीबी दिखाने लगी। फटी शेरवानी के तार—तार बिखर गये, हाथ से पान की डिबिया कहीं गुम हो गई—लेकिन उसका आना बद न हुआ। वह दीवाना सब कुछ लुटा कर भी फकीर बन गया पर आशिकी का दामन न छोड़ पाया।

—प्यार के दीवाने भी अजीब मिट्टी से बने होते हैं। इज्जत-आबरू, धन-दौलत ऐश—आराम यहाँ तक कि अपनी जिन्दगी की श्वांसों को भी गिरवी रखने से नहीं झिझकते। दुनियाँ पागल समझ कर पत्थर फकती है फब्तें उछालती है, लेकिन ये आशिक अपनी राह बदलने का नाम नहीं लेते अपितु कलेजे से प्यार के फटे पुर्जे को चिपकाये सडक पर भीख माँगने लगते हैं। वाह रे प्रेम—ससार! तेरा भी पागलपन अजीब आनन्द देता है। केशव को भी पागल कह कर पुकारा गया गनीमत है कि मैंने अपने हाथ स उस पर पत्थर नहीं फके। उसके लिए मेरे दरवाजे बद हो गये थे। वह आता और मेरे दरवाजे के बाहर बैठकर मुझे देखने के लिए तरसता रहता, तडफता रहता। उसने मेरे दरवाजे को ही अपना घर बना लिया था। दिन—रात वहीं जमा रहता किसी से कुछ न कहता और न किसी की सुनता। न किसी से दो रोटी की भीख माँगता और न अपने हालात पर ही आँसू बहाता। वह प्यार म असफल होकर भी हारा नही था और मैं फरेब कर भी अपनी जीत पर मुस्कुरा न पाती थी। वह मुझस मिलने क लिए हर घडी आतुर रहता लेकिन मैं उसकी जिन्दगी से बहुत दूर हट गई थी।

—वह मुझसे एक बार मिलकर अपने मन की बात कहना चाहता था। मेरे नौकर—चाकरों से उसने बहुत मिन्नतें की, बहुत गिडगिडाया, हाथ जोडे— लेकिन उसकी एक न चल सकी। अपने दिल की बात कहने तक का उसे मौका

नहीं दिया जा सका। फांसी के तख्ते पर झूलने वाले से भी उसकी आखिरी इच्छा पूछी जाती है—और यथासम्भव उसे तृप्त किया जाता है। लेकिन हमारे संविधान में मरने वाले के प्रति किसी प्रकार की करुणा नहीं है, और न हमारे हृदय में इतना अवकाश ही कि हम इन्सानियत का व्यवहार निभायें।

—उसके अधर पर केवल एक ही नाम था और वह मुझ अभागिन का। मेरा नाम जपता हुआ वह बाजार में भटकता रहता। कोतवाली के दरवाजे से चौक तक हर आने जाने वाले से गम्भीर स्वर में एक ही सवाल पूछता था—आपसे कुछ कहा ?

— किसने ? '

—' आप जानते ही नहीं ? सारा शहर एक ही आग में जल रहा है।'

— राहगीर उसके मुंह की ओर ताकता हुआ आगे बढ जाता।

—और वह अपनी उदासी को तोड कर आकाश की ओर अट्टहास करता।

हर आदमी धीरे-धीरे उसकी बात को हँसी में उछाल देता और वह अपना खण्डित मन सभाले वही खडा रहता।

—यह सच है कि मैं उस नेक आदमी की हत्यारिन हूँ मेरे ही कारण वह पागल हुआ और अपनी जिन्दगी से हाथ धो बैठा। आज मैं विचारती हूँ कि—काश! इसके साथ उसके प्रेमनगर चली जाती तो अपनी छोटी—सी दुनिया की राजरानी होती। अपने प्रेमी के लिए अनारकली होती मेरा जीवन कितना सुखी होता ? इतिहास में अनारकली भी हर औरत नहीं हो सकती। यदि मुगल बादशाह की घोर यातनाओं को सहकर राजकुमार के साथ उसका नाम न जुडता तो कौन जानता कि इस युग में कोई अनारकली हुई भी थी। मैं अपने इतिहास में एक ऐसी अभागिन औरत हूं -जिसने अपने प्रेमी के साथ दगा किया हर घडी उस परवाने के कोमल परों को अपने उद्दाम—यौवन की रूप ज्वाला में जलाती रही।

—मुझे याद है – जब मैं इस रियासत की राजराजेश्वरी थी—और उनके साथ दशहरे के दिन सवारी के वक्त हाथी के अहौदे पर बैठी थी। सिरह ड्योढी बाजार की भीड में वह मेरा पागल भी था। उस क्षण तक भी वह मुझे न भुला पाया था। वह अपने मन पर नियंत्रण न रख पाया—पागल की तरह भीड को चीरता हुआ मेरे हाथी तक आ पहुँचा और मेरा नाम लेकर पुकारने लगा। पागल का समझदारी के साथ अनुबन्ध भी कैसा ? हाय! मेरे मन की निष्ठुरता! उस क्षण भी अहं की भारी शिला न हिल सकी और अहं का हिमालय न गल सका

—अपितु मैंने उस क्षण उसे काँटा समझा। मैं उसकी ओर देखती—इससे पूर्व ही लाल पोशाक पहिने चोपदारों ने उसे राजमार्ग से उठाकर दूर फेंक दिया था। जैसे किसी राहगीर ने सड़क पर गिरे केले के छिलके को कूड़े की ढेरी पर डाल दिया हो। किसी ने भी प्रतिवाद नहीं किया और न किसी के मन में करुणा का भाव जागा। उसकी चीख अन्नदाता की जय—जयकार के मध्य विलीन हो शून्य में खो गई। जैसे गर्जन सागर के मध्य कंकरी गिरने का स्वर अपना अस्तित्व खो देता है। वह दृश्य मैंने अपनी निगाहों से देखा था, लेकिन उस दिन मेरी निगाहों के आकाश में प्रभुत्व मद तिरता था। मैं उस समय रियासत पर राज करती थी, मेरी भृकुटि के संकेत से अमात्य बदल जाते थे स्वर्ग नरक बन जाते और नाचीज़ आदमी काबिल बन जाता था। मेरी कृपा से ही एक नाई शहर का कोतवाल बना दिया गया था—किन्तु उस आदमी के लिए मैं कुछ भी न कर सकी। कर भी क्या सकती थी? जो उसकी साध थी—उसे मैं पूरा न कर सकती थी।

नहीं दिया जा सका। फांसी के तख्ते पर झूलने वाले से भी उसकी आखिरी इच्छा पूछी जाती है—और यथासम्भव उसे तृप्त किया जाता है। लेकिन हमारे संविधान में मरने वाले के प्रति किसी प्रकार की करुणा नहीं है, और न हमारे हृदय में इतना अवकाश ही कि हम इन्सानियत का व्यवहार निभायें।

—उसके अधर पर केवल एक ही नाम था और वह मुझ अभागिन का। मेरा नाम जपता हुआ वह बाजार में भटकता रहता। कोतवाली के दरवाजे से चौक तक हर आने जाने वाले से गम्भीर स्वर में एक ही सवाल पूछता था—आपसे कुछ कहा ?'

— किसने ?

—"आप जानते ही नहीं ? सारा शहर एक ही आग में जल रहा है।'

— राहगीर उसके मुंह की ओर ताकता हुआ आगे बढ़ जाता।

—और वह अपनी उदासी को तोड़ कर आकाश की ओर अट्टहास करता।

हर आदमी धीरे-धीरे उसकी बात को हंसी में उछाल देता और वह अपना खण्डित मन संभाले वहीं खड़ा रहता।

—यह सच है कि मैं उस नेक आदमी की हत्यारिन हूं मेरे ही कारण वह पागल हुआ और अपनी जिन्दगी से हाथ धो बैठा। आज मैं विचारती हूँ कि—काश! उसके साथ उसके प्रेमनगर चली जाती तो अपनी छोटी—सी दुनिया की राजरानी होती। अपने प्रेमी के लिए अनारकली होती मेरा जीवन कितना सुखी होता ? इतिहास में अनारकली भी हर औरत नहीं हो सकती। यदि मुगल बादशाह की घोर यातनाओं को सहकर राजकुमार के साथ उसका नाम न जुड़ता तो कौन जानता कि इस युग में कोई अनारकली हुई भी थी। मैं अपने इतिहास में एक ऐसी अभागिन औरत हूं जिसने अपने प्रेमी के साथ दगा किया, हर घड़ी उस परवाने के कोमल परों को अपने उद्दाम—यौवन की रूप ज्वाला में जलाती रही।

—मुझे याद है – जब मैं इस रियासत की राजराजेश्वरी थी—और उनके साथ दशहरे के दिन सवारी के वक्त हाथी के अहौदे पर बैठी थी। सिरह ड्योढ़ी बाजार की भीड़ में वह मेरा पागल भी था। उस क्षण तक भी वह मुझे न भुला पाया था। वह अपने मन पर नियन्त्रण न रख पाया—पागल की तरह भीड़ को चीरता हुआ मेरे हाथी तक आ पहुंचा, और मेरा नाम लेकर पुकारने लगा। पागल का समझदारी के साथ अनुबन्ध भी कैसा ? हाय! मेरे मन की निष्ठुरता! उस क्षण भी अहं की भारी शिला न हिल सकी और अहं का हिमालय न गल सका

—अपितु मैंने उस क्षण उसे काँटा समझा। मैं उसकी ओर देखती—इससे पूव ही
लाल पोशाक पहिने चोपदारों ने उस राजमाग से उठाकर दूर फेंक दिया था।
जसे किसी राहगीर ने सडक पर गिरे केले के छिलके को कूडे की ढेरी पर डाल दिया
हो। किसी ने भी प्रतिवाद नहीं किया और न किसी के मन मे करुणा का भाव
जागा। उसकी चीख अन्नदाता की जय—जयकार के मध्य विलीन हो शून्य मे खो
गई। जसे गर्जन सागर के मध्य कंकरा गिरने का स्वर अपना अस्तित्व खो
देता है। वह दृश्य मैंने अपनी निगाहो से देखा था, लेकिन उस दिन मेरी निगाहो
के आकाश मे प्रभुत्व मद तिरता था। मैं उस समय रियासत पर राज करती थी,
मेरी भ्रकुटि के संकेत मे अमात्य बदल जाते थे स्वग नर्क बन जाते और नाचीज
आदमी काबिल बन जाता था। मेरी कृपा से ही एक नाई शहर का कोतवाल बना
दिया गया था—किन्तु उस आदमी के लिए मैं कुछ भी न कर सकी। कर भी
क्या सकती थी? जो उसकी साध थी—उसे मैं पूरा न कर सकती थी।

□ पाच

जयपुर का राजघराना हिन्दुस्तान म मशहूर रहा है। यहाँ के राजा—महाराजा ने अपनी बहादुरी से देश के नक्शे को मोड़ दिया और तलवार के पानी से इतिहास लिखा। मुगल-सल्तनत की नींव मजबूत करने मे इस रियासत की भारी देन रही। दूर—दूर दिशाओं तक अपने सूर्य का आलोक बिखरा कर जग म फतेह हासिल की और जहाँपनाह से खिताब पाये। वीरता के साथ—साथ अमन-चैन का पुजारी होना सहज बात नही है—लेकिन मेरी इस रियासत के राजा—महाराजा हमेशा शान्ति के दूधिया कबूतर आकाश म उड़ाते रहे और अपनी रिया के दुःख-दर्द मे भागीदार बने। यहाँ के शासक समय की नब्ज को भली-भाँति परख कर कोई कदम उठाते वर्ना वक्त के साथ समझौता कर सम्मान की जिन्दगी जीने की कला म अभ्यस्त हो गये थे। अगर उन्हें नीति-निपुण कहा जाये तो वे सबसे अच्छे दूरदर्शी तथा सफल शासकों मे स्थान रखते आये हैं। अपनी जमीं से दूर जग का जिहाद छेड़ते ताकि यहाँ का कोई कण लहू म न डूब पाये। सीमाओं का विस्तार करना, बात—बात पर जग छेड़ना, इन्सानियत का खून बहाना औरतो की इज्जत लूटना या उनका सुहाग छीनना आदत मे न था।

—धर्म के साथ शासन करते हुए कला के प्रति यहाँ के शासकों का हमेशा रुझान रहा। इस रियासत की जगी इमारतो और आलीशान महलों की बनावट,

पत्थरों पर पच्चीकारी तथा बनावट को देख कर संसार का हर आदमी उनके प्रेम की चर्चा किए बिना नहीं रह सकता है। आमेर का किला, अरावली पहाड़ी के ऊँचे शिखर पर शान से खड़ा हुआ इस रियासत के वैभव की यशोगाथा हवा के संग गाता रहता है। इस दुर्ग का इतिहास के पन्नों से गहरा रिश्ता है—और मेरा भी। जिस तरह इतिहास जयगढ़ की उपेक्षा नहीं कर सकता है, उसी तरह यह दुर्ग भी रसकपूर की सुरभित श्वासों और थिरकते कदमों से अपरिचित नहीं है। यहाँ की हवा में मेरी देह की गंध घुली हुई है और हवा में मेरा स्वर तिरता रहता होगा। यहाँ का कण-कण मेरी सौभाग्य निशा की चंचल हरकतों से मदहोश होगा।

मेरा वास्तविक इतिहास यहीं से आरम्भ हुआ। मेरी जिन्दगी ने इसी जगह से मोड़ लिया—और एक तवायफ की जिन्दगी में प्यार का झरना यहीं से फूट कर बहने लगा था। इस दुर्ग की प्राचीरें यहाँ का आँगन और मेहराबें उनके और मेरे सरकार के गहरे सम्बन्धों की साक्षी हैं मुझ जैसी हजारों कहानियाँ की द्रष्टा है, और मेरी गूँगी कविताओं का यह गूँगा चितेरा है। यह सदियों से मूक खड़ा वैभव के सीने पर विलास देखता आया है और देखता रहेगा। इसने कई सुन्दरियों के रूप का पान किया है और उनके बदन की महक को जीता हुआ जड़ बन गया है। सम्भव है इस कई रूपमतियों का तो नाम भी याद नहीं होगा उनके चेहरे भी भुला दिये होंगे लेकिन इसके सीने में मेरी मीठी याद जरूर गीत गाती रहेगी। रसकपूर के प्यार की यह अनुपम यादगार है।

—मेरी जैसी अनेक बाईयों ने इस दुर्ग की ओर मुड़कर देखना भी न चाहा होगा। यहाँ की मदहोश रातों के स्वप्न उन्होंने नहीं संजोये होंगे अपितु अपनी जिन्दगी से उधेड़ कर किसी कब्र में दफना दिए होंगे। यहाँ की याद भी उनके दिलों में दहशत भर देती होगी। लेकिन मैंने इन महलों की याद को चिर-काल से संजो कर रखा है। यहाँ की महक को आज भी दिल से लगा कर रखा है, यहाँ की यादें मेरी—उनकी यादगार हैं यहाँ की हवा ही मेरे लिए ताजमहल है।

—मैं इन महलों में विवाहिता औरत की तरह आई थी। आज भी मुझे वे मदिर पल याद हैं और मेरे रोम—रोम में मीठी सिहरन भर देते हैं—जब महावर लगे पावों ने इस महल के संगमरमरी आँगन का स्पर्श किया था।

सावन का गदराया मदभीगा मौसम। अंधेरी रात में काले बादलों की घनघोर गड़गड़ाहट। कभी—कभी बिजली की कलियाँ खिलखिला कर आँखों में मोन जल उछाल देती—और एक पल के लिए उजाला छा जाता। मछलियों की तरह आँखें अपनी पलक-परों को छितराकर सागर में डुबकी लगा लेतीं। रिमझिम

रिमझिम बरसते पानी के साथ मेरे घुंघरु झंकार करते—ऐसी मौसम में भी कांच के दरवाजे का महल मोमबत्तियों की रोशनी में जगमगाता हुआ अपनी महफिल को मुग्ध किये जा रहा था। दूधिया गद्दे पर मसनद का सहारा लिये शहर का वैभव अलसाई अंगड़ाई तोड़ता हुआ अधरों को ताजगी और आंखों का रोशनी से नहला रहा था। मैं उस समय को अपने स्वर से मुग्ध कर रही थी। मेरे गीत की अन्तिम कड़ी पूरी भी न हुई थी कि इसी बीच मेरे पिता ने महफिल को उठा देने का इशारा किया।

—मेरे कदम ठहर गये— जैसे झील की सतह पर लहरें ठहर जायें। नुपुर की झंकार झनझना कर सन्नाटे से रास करने लगी—लोगों के मुंह से निकला—क्या कला पाई है?' लेकिन मैं तो जड़ सी खड़ी थी—और साजिंदे साज उठाये जाने की तैयारी करने लगे। मेरी मां मुझे महल के भीतर ले गई—बाहर हंगामा मचता रहा। कोई भी महफिल से उठकर जाने को तैयार न था—लेकिन मजबूरी! लड़खड़ाते हुए एक एक विदा होने लगे।

—आंगन में सन्नाटा था ऐसी घटना आज पहिले बार घटी थी। मैं भी अजान डर से डर गई थी और मां भी कुछ न समझ पाई लेकिन पंडित जी के मुंह पर विजय का उल्लास था। उन्होंने ताली बजाई और कुछ आदमियों के आने की आहट बढ़ने लगी। महल के भीतर सात आठ आदमी रंग बिरंगी अचकन पहिने और सिर पर लाल पगड़ी बांधे हाथ में थाल उठाये आ गये थे। थाल सफेद रेशमी वस्त्रों से ढके हुए थे। उनके साथ दो चोपदार हाथ में चांदी की छड़ लिए खड़े थे। पंडित जी ने इशारा किया तो उन्होंने थाल फर्श पर रख दिये और महल से बाहर हो गये।

मैं जिज्ञासा से उस ओर देखने लगी, लेकिन मेरी मां हतप्रभ सी खड़ी थी। वह पंडितजी से कोई सवाल करने के लिए अपने होठ खोलना ही चाहती थी कि मेरा पिता आगे बढ़कर कहने लगे—'आज वह घड़ी आ गई है जिसका हम वर्षों से इन्तजार कर रहे थे।'

मां कुछ भी न कह सकी।

मैंने कदम बढ़ाकर पूछ ही लिया— ये नजराने किसके लिए हैं?"

— रसकपूर! ये सब तुम्हारे लिए हैं तुम भाग्यशालिनी हो!'

मैंने आवरण हटा कर देखा तो विश्वास नहीं कर पा रही थी कि बेशकीमती पोशाकें और जगमगाते गहनें मेरी देह के लिए है। एक चांदी के थाल में कसूमल जरी की कांचली जिसके किनारे पर मोतियों की गोट और बीच में हरे पन्ने

के मोर चित्रित हो रहे थे। इसी रंग की चुनी—जिस पर सुनहली तार का जाल सजीव फूल पत्तियाँ बनाये हुए मन को मुग्ध कर रही थी। ओढनी के किनारे पर समुद्री मोतियों की झालर और बीच में मोन के तार की कल्पना! मानो आसमान के वदन पर बिजली की रेखाओं के बीच भिलमिलाते सितारे! मैंने अपने हाथ से उस पोशाक को कई बार छुआ—और मन ही मन खुश होने लगी। मैंने फिर पंडित जी की ओर रहस्यभरी दृष्टि से देखते हुए प्रश्न किया—सच! ये सभी मेरे लिए हैं?"

—हाँ, हाँ, तुम्हारे लिए ये तो कुछ भी नहीं हैं। एक दिन ऐसा आयेगा कि इस रियासत का सारा वैभव तुम्हारे कदमों मे होगा।'

—मैंने दूसरे थाल के पोश को हटाकर देखा तो आँखें चमक गई। सोने का थाल हीरे जवाहरात से जगमगा रहा था—किसी ने स्वर्णकूप के जुगनुओं को भाड लिया हो! उस स्वर्ण-थाल मे नारि जाति का सम्पूर्ण शृंगार था। बाजूबंद मादलिया बगडी, पोंछी, गजरे, हथफूल, नोगरी, आरसी ओंटी टोटी झूमर ओगन्या, तारालडी, जडाऊनात, चाँद और सूरज सभी सोने के-उस पर हीरे मोतियो की जगमगाहट। मैं उन्हें देख-देखकर प्रसन्नता के सागर मे डूबी जा रही थी। यह नारी मन की सहज कमजोरी है कि उसे गहनों से अत्यधिक लगाव होता है एक बार तो वह अपने फिसलते कदम को मुश्किल से ही रोक पाती है। मैं उस वैभव के शृंग को देखकर हर्षित हो उठी, मेरा मन मोरनी की तरह नाच उठा।

—एक ओर खुशी का सागर आकाश छूने उछल रहा था—दूसरी ओर पाँव तले की जमीं खिसकती जा रही थी। मेरे मन की शहनाईयाँ मेरी भावनाओं को मुग्ध कर रही थी तो सन्नाटा भरी उदासी मेरी माँ को जहरीली धुँआ भरी गुफा मे धकेल रही थी। एक पल में ही उसका चेहरा पतझड की याद दिलाने लगा—और आँखें अनात भय से जकड सी गई। माँ की अजीब स्थिति थी। न तो वह मुझे ही रोक पा रही थी-और न अपने आपको समझाने मे ही कामयाब हो पा रही थी। पंडितजी पर उसे बेहद क्रोध आ रहा था—लेकिन कुछ भी कहने की हिम्मत न जुटा पाना ही उसके मन की कमजोरी थी। जब मैंने उसकी ओर आँख उठाकर देखा—तो उसने कुछ भी न कहा अपितु मुझे ऐसा लगा मानो अपनी सूनी आँखों से मुझे इशारा कर रही हो कि 'बन्नो! तुम खुद समझदार हो! जैसा अच्छा लगे वैसा ही करो!'

—मैं माँ की उदासी तोडना चाहती थी। मैंने माँ के गले मे अपनी बाहुओं को डालते हुए पूछ ही लिया—"इतने जेवर देखकर भी तुम खुश नहीं हो?

— बहुत खुश हूँ बेटी !"

—'फिर यह उदासी ?"

—'अवलेपन की।"

—"और ये आँसू ?'

—'मैं माँ हूँ न इसीलिए ये आँसू हैं मैं अपनी लाडली को सोने मोतियों से ढकी देखकर खुशी के मारे सब कुछ भूल गई हूँ।

— क्यों झूँठ बोल रही हो ?'

—'इनसे पूछ ले !' उसने पडितजी की ओर इशारा करते हुए कहा।

—मैंने अपने पिता की ओर जिज्ञासा भरी दृष्टि से देखा तो—वे अपने प्यार में भीगे हुए कहने लगे— बेटी ! आज का दिन सुनहरा दिन है आज रसकपूर बाई कांच के दरवाजे की बाई नहीं महलों की रानी बन गई है। आज के बाद शहर का कोई शोहदा जुबां से भद्दी बात नहीं कर सकेगा तुम्हारे कदम हर किसी के सामने न थिरक पायेंगे। महाराज ने तुमको इज्जत बख्शीस की है जब से तुम्हारी खूबसूरती और कला की चर्चा उन्होंने सुनी—तभी से वे दुष्यन्त की तरह तुम्हारे वियोग में बिकल हैं। आज तुम्हारी इच्छाओं के पूर्ण होने का अवसर है उन्होंने ही तुम्हारे लिए ये तोहफे भिजवाये हैं। आज से तुम महाराज के महल की मलका हो ! आज ही तुमको यहां से विदा होना है आमेर के शीशमहल में तुम्हारे कदमों की इन्तजार हो रही है।'

—मैंने समझ लिया कि मेरे पिता अपने उद्देश्य में सफल हो गये हैं। पिता को दोष देना भी बेकार है झूँठी तोहमत लगाना है मैं तो खुद चाहती थी कि महलों के आंगन पर अपनी रूप चांदनी बिखेर कर रियासत पर राज करूँ। फिर भी एक बार मन स्पन्दन से भर गया— और क्षण भर के लिए उदासी छा गई तथा वे गहने पीतल के खिलौने से दिखाई देने लगे। मेरे मन ने इन्कार कर दिया कि मुझे कहीं नहीं जाना है—लेकिन दूसरे ही क्षण मेरी महत्वाकांक्षा मुझे खुशियों का संसार दिखा कर चिढ़ाने लगी—तो मैं सकल्प बुनती हुई माँ की ओर देखने लगी।

मुझे विश्वास था कि मेरी माँ मुझे कभी इजाजत नहीं देगी। वह अपने कलेजे की कोर को किसी भी दशा में विदा करने को रजामन्द न होगी। लेकिन माँ ने कुछ न कहा उसकी ममता का भी कोई जहरीला सांप सूंघ गया था। वह तो गूंगी बुत की तरह खड़ी हुई किस्मत की कहानी बाचने का यत्न कर रही थी। वह उस अदृश्य

को पढ़ने का प्रयास कर रही थी—जिसके संदर्भ में कुछ भी न जानती थी। उसने मुझसे कुछ भी न कहा बल्कि पंडितजी से कहा—'आखिर आप अपने इरादे में कामयाब हो ही गये ?"

'तुम मुझे कभी न समझ पाई और न समझ सकोगी। यह सच है कि तुम बच्चों को जन्म देने वाली माँ हो और तुम्हारे मन में ममता का अथाह सागर लहरा रहा है। लेकिन यह क्यों भूल रही हो कि इस आदमी का तुम्हारे से कोई दिली रिश्ता है और इस बच्ची के साथ गहरा सम्बन्ध है तभी तो मैं हर दिन तुम्हारी देहरी पर कदम रखता हूँ, वर्ना मैं भी उन्हीं आदमियों में से एक आदमी था—जो साँझ ढले तुम्हारी देहरी उलांघते हैं और अंधेरे के साथ में ही तुम्हारी परछाई छोड़ कर भाग जाते हैं। यह मेरी लड़की है—इसी प्रेम के कारण यहाँ खिंचा चला आता हूँ। मैं बाप हूँ, समाज के सामने इस बात को न स्वीकार करूँ लेकिन तुम्हारे सामने मैंने कभी इन्कार नहीं किया है। एक बाप हमेशा यही चाहता है कि वह इस पराये धन को किसी अच्छे वर के हाथ में सौंप कर चिंतामुक्त हो जाये।"

—"काश! तुम किसी के साथ दुल्हिन बना कर भेजते!—माँ ने दीर्घ निश्वास के साथ फिर अपनी उदासी दुहरा दी।"

—काश! मैं रसकपूर को इस समाज से कहीं दूर ले जाने में सफल होता, इस धरती को बदल पाता! तुम यह क्या भूल रही हो कि रसकपूर मेरी लड़की है लेकिन इसको जन्म देने वाली मेरी प्रेमिका किसी कोठे की मलिका रही है। तुम कैसी माँ हो। मैं तुम्हारी लड़की का भविष्य सवारने जा रहा हूँ—और तुम उसे इसी आग में धकेले रखना चाहती हो—जिसमें तुम खुद जल रही हो। मैं इसे इन गंदी गलियों से उठा कर महलों में ले जा रहा हूँ। गुलाब के फूल की कद्र गंदी गलियाँ कभी नहीं कर सकतीं। कद्रदान ही कद्र करना जानते हैं मुझे इसके सुख दुःख का पूरा खयाल है।'

—माँ ने कुछ भी उत्तर न दिया।

—"तुम नहीं चाहती हो तो ठुकरा दो इस प्रस्ताव को और छोड़ दो इस शहर को।"—मेरे पिता ने आक्रोशी स्वर में कहा।

'जिन्दगी फिर एक बार इतिहास दुहरा रही है"—कहती हुई माँ महल से उठ कर भीतरी बरामदे की ओर बढ़ गई।

पंडितजी ने मेरे सिर पर अपना हाथ रखते हुए कहा—बेटी! तुम तो खुश हो न ?"

मैंने सजल निगाहों से उनके चेहरे के भाव पढ़े और अधर पर हँसी बिखेरते हुए उत्तर दिया— हर बाप अपनी बेटी की खुशी चाहता है।

माँ ने मुझे बरामदे में बुलाया - और स्नान घर म ले गई।

उसने अपने हाथ से गम-पानी मे कस्तुरी घोल कर मुझे नहलाया और मरे बदन पर केशर का हलका सा लेप किया। उस क्षण मैं विवाहिता की तरह स्वप्न स जो रही थी भावी-कल्पना मे पख छितरा कर दिशाओं में उड़ी जा रही थी और मेरी माँ विदा के उन क्षणों म आँसू लुटाने म व्यस्त थी। वह सजल दृष्टि से मुझे देखती और फिर दीघ निश्वास के साथ छत की ओर देखती। मेरे केशों में अगरागुरु की गध का स्पश देकर इलायची के तेल से सिर मलते हुए दो चोटिया गूथी। जिनमे ताजी केतकी की कलिया मोतियों की तरह पिरोई।

—मैंने उस वेश को पहिना जो मेरे लिए राजमहल मे आ या था। वेश के पहिनने के साथ ही मेर बदन पर मद का ज्वार चढ़ने लगा—और सुन्दरता खिडकियाँ खोलकर बाहर झांकने लगी। उस दिन मुझ अपने रूप का अहसास हुआ। मेरी माँ ने मेरे परों में सोने की पायजेब कड़े आवले नेवरी और रिमझोल पहिनाये। उन कोमल कदमों मे न जाने कहाँ से ताकत आ गई थी कि गहनो का बोझ महसूस ही नही हो पा रहा था। अगुलियों की पौर मे जडाऊ बिछिया और अगूठ मे हीरा जड़ी छटी पहिनी। हीरे की झलमलाहट से लहगे के स्वर्णतार जगमगाकर आंगन मे रोशनी फलाने लगे। हाँ मानिक जड़े पगपान पहिनने के बाद मुझे अपने परों पर भारीपन का एहसास होने लगा लेकिन मेरा मोह उन सभी आभूषणो के पहिनने के लिए विकल था।

मेरे सिर पर नव रत्न जटित ओगण्या मेरी माँ ने टांका जिसकी स्वर्ण जंजीर बालों के बीच अटका दी गई थी। कानों मे पुखराज जड़े पीपल पत्ते और नीलम से जड़े फूल झूमके पहिने थे—जिनकी आभा मेरे गालो से टकराती थी। नाक मे झलझलाती नथ-जिसकी सोन डोर बायें कान के पास फूलझूमके की कड़ी से झूल रही थी। नथ के मोती अधरो पर बिडम्ब डाल रहे थे—जिससे गुलाब की पखुरी से होठ स्मितहास के साथ खेलने लग।

—मेरी माँ ने अपने हाथ से मेरा शृंगार किया। मेरे गले मे गलपटिया बांधा बालोल का पचमणिया पहिनाया कठला एव चन्द्रहार पहिनाया। हार की बनावट को देखकर मैं दग रह गई थी। हजारो पत्तियो वाले हार की एक एक पत्ती मे रसकपूर का उन्माद स्पष्ट झलक रहा था। उन पत्तियो की झिलमिलाहट

मे मेरे असंख्य प्रतिबिम्ब झलकते । राजमहल से जितने भी आभूषण आये – वे सभी एक-एक कर मेरे बदन पर पहिना दिये गये । मैं सोन वेनडी की तरह हीरे-जवाहरात से लदी मौसम में लहराती महक रही थी । हमारे घर मे गहनों की तो कोई कमी न थी लेकिन इतने अच्छे और कीमती गहने न थे । सभी पुराने किस्म के थे क्योंकि नजराने में रईसों के घर का जेवर आता था । मेरे शरीर का कोई अंग ऐसा न था, जो आभूषण के बंधन से मुक्त रहा हो ! मुझे अच्छी तरह याद है कि उस दिन इस देह पर ढेर सारे गहनों का भार बोझिल न लगा—जबकि इस सुकुमार देह पर फूल की पंखुरी से भी खरौंच आने का भय रहता है ।

—"कोमल देह स्वर्ण-रत्न के भार से बोझिल हो कर भी हर्ष का अनुभव कर रही थी । मेरे मन मे उनसे मिलन का स्वप्न था । सच तो यह था कि मेरे मन मे महाराजा के दर्शन के लिए तीव्र लालसा थी–और अपने उनसे मिलन के लिए हम नारियाँ धरती की तरह भार उठाने के लिए सहमत हो जाती हैं और सहनशक्ति जुटा लेती हैं । न जाने उनमे क्या आकर्षण होता है ?"

—मेरी माँ ने अपनी अगुलि से पुतलियों पर सुरमा रचते हुए मुझे आशीर्वाद दिया था– 'बेटी ! तेरा नसीब !'

मैं अपनी पलकें झुका कर रह गई थी । माँ से क्या कहती ? उसके मन का दर्द मेरी नस नस में व्याप्त था ।

—जब मैंने आदमकद शीशे के सामने गर्दन उठाकर खुद को देखा तो—शीशे में आतिश के फव्वारे छूट रहे थे मेरी देह पर चाँद टूट कर गिर गया था, अपनी ही देह में हजारों बिजली के फूल चमकते हुए दिखाई देने लगे । उस पल मैं जाने इतनी सुन्दरता कहाँ से सिमट आई थी कि मैं अपने आप से ही अपरिचित हो चली ।

—मेरे विदा के क्षण नजदीक थे । उस रात मेरे बाबुल का घर छूटने जा रहा था । हर लड़की एक अजीब स्थिति से गुजरती है, उसे चौराहे पर खड़े होकर निर्णय लेना होता है । एक ओर उसके मन मे प्रिय मिलन की अलसाई उमंग होती है, रोम-रोम में मिलन के स्पन्दन जन्म लेते हैं स्वप्न पर उल्लास का पराग भरने लगता है तो दूसरी ओर अपने जाने-पहचाने आंगन की रज के बिछोह का गहरा दुःख रोने को विवश कर देता है । हास और रुदन का सम्मेलन जीवन को नई दिशा में ले जाता है ।

उस रात मेरी माँ ने मुझे बहुत कुछ समझाया, बहुत कुछ पढ़ाया और बहुत कुछ सिखाया । शायद हर माँ अपनी बेटी को सुसराल विदा करते समय घर की देहरी

पर इसी तरह समझाती रही होगी। मेरे माँ भी बहुत सी बातें बड़े प्यार से सुनी और कई सुनी अनसुनी कर दी थी। शायद दुनियाँ की हर बेटी ही इस क्षण मेरी तरह ही व्यवहार करती होगी।

—जब मैंने महंदी लगे पाँव सितारों से जगमगाती मखमली पगरखी की ओर बढ़ाये तो मेरी माँ ने दौड़कर मुझे बाहुपाश में भिन्च लिया। उस क्षण वह नई बदली की तरह मुझ पर बरस रही थी। उसने रोते रोते कहा था—बेटी जा रही है एक घड़ी तेरी शक्ल तो देख लेने दे। न जाने इस जिन्दगी में फिर कभी मिलना होगा या नहीं?

—उस क्षण तो मेरे धीरज की दीवार भी टूट गई और मेरे स्वप्न का महल टूट कर मेरी आँखों से गलने लगा। मैंने रुँवासे स्वर में कहा—माँ! आज यह क्या कह रही हो?'

—हाँ, बेटी मैं सच कह रही हूँ। आज तू कहाँ जा रही है, न जाने तेरा भविष्य क्या होगा? काश! इन्हीं हाथों से मैं तुझे विदा करती! बेटी! तू जिस जगह जा रही है—उन दीवारों से बाहर आना मुश्किल है। मेरी बूढ़ी आँखें शायद ही तेरी सूरत को देख सकेंगी। ससुराल और राजमहल में बेटी—धन के चले जाने पर अपना हक नहीं रहता है बेटी! यह धन पराया हो जाता है।"

—क्या कह रही हो बन्नो की माँ! यह शुभ घड़ी है इस समय आँख से आँसू बहा कर अपशकुन मत करो!—पंडितजी ने मेरी माँ को आश्वासन बंधाते हुए कहा था।

—न माँ कुछ कह सकी—और न मैं माँ से ही। सीढ़ियाँ उतर कर नीचे आई तो मेरी माँ मेरे साथ न थी, अपितु पंडितजी अपने हाथ का सहारा दिए मेरे साथ चल रहे थे। मैंने आँगन में अपने कदम रखे और काँचमहल की ओर अपनत्व की निगाह से देखा। मेरे लिए बाहर पालकी थी—पालकी के साथ घुड़सवार थे और चाँदी की छड़ी वाले चोपदार भी। मेरे पिता ने बड़े प्रेम से मुझे पालकी में बिठाया। मैं भी पालकी में अपने आप में सिमटी जा बैठी—जैसे कोई पहली शाम की गोद में सिमटी सिकुड़ी जा रही हो।

—एक इशारे के साथ ही कहारों के कंधों पर पालकी झूल उठी।

—रसकपूर बाई की महफिल उठ गई।

—तेज गति के साथ कहारों के कदम बढ़ रहे थे, जौहरी बाजार से उस अंधेरी रात में मेरी डोली निकली थी। मैं अकेली मसनद का सहारा लिए परदों के

बीच सिमटी हुई थी। मेरे पीछे घुड़सवार चले आ रहे थे—उस सन्नाटे में घोड़ों की पद चाप ही तबले की ता धिन थी।

मैं किसी की बहू न थी, और न मेरा किसी के साथ विवाह ही हुआ था न मैं उस आदमी की शक्ल ही जानती थी—जिसने उस अंधेरी रात में मुझे बुलाया था, फिर भी मुझे नवेली सा अहसास हो रहा था मेरी पलकों पर शर्म आ घिरी। मैं भी नवेलियों की तरह ससुराल जा रही थी। विदा की बेला में संगीत के स्वर भी साथ छोड़ गये।

मुझे कहाँ जाना था? मेरी मंजिल कौन सी थी? किस घर में कदम रखना था? वह कौन होगा?—मैं कुछ भी न जानती थी। अपरिचितों के बीच चली जा रही थी। मेरे मानस में कल्पना की सोन मछलियां तिर रही थीं, बोझिल नयनों में स्वप्न जन्म ले रहे थे। उस क्षण मैं यह भी भूल गई थी कि मैंने एक तवायफ से जन्म लिया है और समाज की वह गन्दगी हूँ—जिसे हर आँख हिकारत की नजर से देखती है। मेरा अस्तित्व मैंने भुला दिया था। मैं तो सिर्फ इतना ही जानती थी कि अपने पिया के नगर जा रही हूँ। वहाँ मेरे अपने वो हैं—उनका गर्म आलिंगन पाकर मैं अपने अतीत को भुला दूँगी अपनी जिन्दगी का कोई अस्तित्व रहे या न रहे—उनकी श्वासों में घुल जाऊँगी। उनके साथ मेरा नाम जुड़ जाने पर जिन्दगी के सभी दाग धुल जायेंगे—और कोई भी नजर नफरत से न देख सकेगी और न कोई स्वर गन्दगी उछाल सकेगा। उनके महल में पहुँचने पर कोई भी यह न कह सकेगा कि मैं तवायफ हूँ।

—कितने सुन्दर स्वप्न थे? वे घड़ियाँ कितनी मधुर थीं? उन क्षणों में मैंने अपना अस्तित्व मिटा डाला था? काश! इस जिन्दगी में वे क्षण अमर रहते? अथवा उन घड़ियों के समाप्त होने से पूर्व ही यह देह इस संसार को छोड़ देती तो मैं उसी आनन्द में डूबी हुई दूसरे जन्म में उनसे बेदाग दामन लेकर मिलती।

—मैं मन में उनके बारे में कई तरह के रंग उछाल रही थी, कल्पनाओं में अपने आपको डुबाये जा रही थी। अपने उनके चित्र बनाती और बिगाड़ती रहती उनकी हर तस्वीर में मेरे मन के द्वारा भरा हुआ रंग फीका जान पड़ता और हर कल्पना जूठन सी नजर आती। अपनी निगाह ही ओछी लगती हर रेखा को मामूली सी समझती। किसी रियासत के महाराजा की तस्वीर मामूली कभी नहीं हो सकती और वह भी अपने प्रिय का। संसार की कोई भी औरत अपने होने वाले पति की कल्पना श्रेष्ठ से श्रेष्ठ से तो कम कर ही नहीं सकती है। उसका अपना प्रिय लाखों में एक होता है। कल्पना भी ओछी क्यों की जाय?

—मेरा उनसे प्रथम साक्षात्कार होने जा रहा था। ऐसे तो मैंने उनके बारे मे बहुत कुछ सुन रखा था। कांच के दरवाजे से गुजरने वाली हवा भी महाराज की दिलचस्प कहानियां कह कर ही गुजरती थी। उन्होंने भी मेरे बारे में कुछ न कुछ जरूर सुना था—तभी तो महल ने तवायफ के दरवाजे खटखटाये, और उन्होंने सम्मान के साथ बुलावा भिजवाया। रियासत के मालिक के सामने रिया की क्या जिद ! वह उस नगरी का भगवान होता है कण कण पर उसका अधिकार है हर सुन्दर फूल की महक को जीने वाला वही है। उनके सामने हम जसी नाचीज औरतों की क्या इज्जत आबरू ? किसी भी ओहदे के हाथ बुलावा भिजवा देते या पकड़वा कर बुला लेते हमारी इज्जत के साथ खेल कर हमें भी कूड़ेदान पर मसली-कुचली कलियों की तरह फिंकवा देते।

—मैं तो उनकी अहसानमन्द हूँ उन्होंने इज्जत के साथ मुझे बुलवाया। यही कारण था कि अनदेखे भी मेरे मन मे उनके प्रति गहरी इज्जत जम गई थी और मन ही मन उन्हें अपना बना बठी।

—मैं अपनी कल्पना म खो रही थी किस राह से गुजरी ? किस आँख ने मुझे देखा ? कब मेरी पलको के आँसू सूख गये ? मन का लुटेरा मेरे मोतियों को चुरा कर कब ले गया ? मैं कब अपने पिया के नगर जा पहुची ? कुछ भी खयाल नहीं। मैं तो उस क्षण चौंकी—जब पालकी के रुनझुनाते घुघरु मौन हो गये—और पालकी का झूला क्षण भर के लिए ठहर गया जसे हवा ठहर गई हो। मैंने पर्दे को तनिक सा तिरछा करते हुए खुले आसमान की आर देखा। बादलो के बीच से तारे छिप छिप कर देख रहे थे—जसे छोटे-छोटे देवर अपनी नई भाभी को झुकी नजरो से देख रहे हों। आगन मे खड़ा कोई आदमी कहारों से बतिया रहा था। मैंने गौर स देखा-लाल पगड़ी लाल ही अंगरखी पहिने अपने पेट को लाल रग के कमरबद स कस कर हाथ म चादी की छड़ी उठाये खड़ा हुआ था। आदमी बूढ़ा था लेकिन आवाज म काफी तेजी थी—जिसस हर कोई भान कर सकता था कि जवानी अभी चुकी नहीं है। उसने कुछ कहा—मेरे साथ चलने वाले चोपदारों ने उस समझाया—तब जाकर उसने हाथ मे मशाल उठाई और चाबियों का गुच्छा खनखनाता हुआ दरवाजे तक पहुँचा। भारी आवाज के साथ दरवाजा खुला उसी क्षण कहारों के कन्धे फिर भार ढाने लगे और पालकी हिलोरे-हिचकोले लेती झूलने लगी। जिस पर कहारों के कदम बढ़ रहे थे—वह ऊँची घाटी थी। पालकी का मुँह ऊँचा और पीठ नीचे की ओर थी। फिर भी कहार इतने चतुर और अभ्यस्त थे कि चढ़ाव म भी महसूस नहीं होने दे पा रहे थे की हमारा काफिला किसी घाटी से गुजर रहा है। मैंने परदे से बाहर झांक कर देखा घाटी के ऊपरी भाग पर महल जगमगा

रहा था। पर्वत शिखर पर सोने का ताज रख दिया हो! घोड़ी की टाप अवश्य तेज हो गई थी – और वे अपनी मंजिल का किनारा देख कर हिनहिना उठे। उन की हिनहिनाहट विजय का प्रतीक थी और यात्रा का विराम। ज्यों ज्यों शिखर नजदीक आने लगा—त्यों त्यों कहारों की गति धीमी पड़ने लगी और मेरे मन की घबराहट बढ़ने लगी। बदन पर कांटे से उग आये और गन्धभीनी देह पसीने से तर-बतर हो गई।

—मैं अपने भीतर छिपे हुए भय को न पहचान पा रही थी। अचरज तो यह था कि जिस कुँवारी लड़की ने हजारों दीवानों की भीड़ को एक इशारे पर नचाया, और उनके बीच कदम रखते हुए कभी हिचक महसूस नहीं की—वही आज एक आदमी के नाम से कतराने लगी और हिरणी की तरह भयभीत हो चली थी। न जाने मुझे क्या हो गया? मैं कल्पना जीती हूं कि मेरी तरह हर नई नवेली प्रिय की देहरी पर प्रथम कदम रखते हुए अवश्य कम्पन अपनी धड़कन में झेलती होगी।

—एक बड़े-से मैदान के छोर पर कहार खड़े हो गये। मैदान बगीचे के रूप में था – रंग बिरंगी फूल-कलियों से गदराया सावन से भीगा हरा सा मौसम ताजगी देने वाला था। मैदान के बीच एक छोटे से शिखर पर फुवारा आकाश में धवल जल उछालता हुआ साधक शिव की तरह ध्यान मग्न था और गंगा अभिषेक किये जा रही थी। मैं पालकी से उतर कर उस मैदान में चहलकदमी करने का इरादा करने लगी–इसी बीच हम उम्र की दो लड़कियों ने अदब के साथ मेरे सामने अपना सिर झुका कर मुझे अपनी कोमल मखमली बाहुओं का सहारा देते हुए पालकी में नीचे उतारा। मुझे देखकर उनकी आँखें चकाचौंध से भर गईं और वे दोनों एक दूसरी को देखती रहीं। मुझे कुछ भी न कह सकीं।

—मैं उस सुरम्य उद्यान में खड़ी वहाँ के ऐश्वर्य को देख रही थी। मैदान के सामने ही भव्य प्रासाद था। पर्वत के शिखर पर राज केशरी की तरह सोया हुआ सुरम्य हर्म्य अपने वैभव की कथा दूर से ही कह रहा था। दुर्ग के बीच यह महल सोने के थाल में रखे हुए आरती दीप की तरह शोभित था। महल तक आगे बढ़ने के लिए सीढ़ियों पर मखमली कालीन—जिस पर लाल व नीले कमल फूल की चित्रकारी—किसी बावड़ी के सोपान पर शैवाल में उलझे कमलों के सौन्दर्य को व्यक्त कर रही थी। संगमरमरी सफेद चबूतरे पर रातरानी के महकते पौधों के गमले हर आने वाले के मन-मंदिर को आमन्त्रण दिये बिना नहीं रहते। मैं उस हर्म्य के बाहरी उपवन में खड़ी उस महल को देख रही थी—जैसे मैं किसी

खिवया के बिना किश्ती म बठी सागर के मभदार म तिर रही हू—और वह महल सागर के उर पर तिरता हुआ कोई स्वर्ण-द्वीप हो।

——मैंने मेरी उन नव–परिचारिकाओ के साथ कदम बढाये।

—सीढियों के आखिरी छोर पर विशाल दरवाजा दरवाजे के दोनो ओर आकाश दीप की तरह जलती हुई मशालें। सिंह द्वार के बाहर खडे प्रहरियो ने हाथ की तलवार नीची करके मेरा अभिवादन किया।

—मैं भला क्या उत्तर देती? गठरी की तरह सिमटी—सकुची भीतर की ओर लुढकती चली जा रही थी। जिस महल की ओर मुझे ले जाया जा रहा था—वह राह कल्पना से भी अधिक बढी चढी थी। भीतर पुरुष नाम ही न था। वहा स्त्रियो का पूरा राज था। जसे मैं किसी महिलाओ के कस्बे मे मेला देखने चली आई हूँ।

——वह पुरानी जनानी डयोढी है। नाम उसका पुराना अन्त पुर अवश्य है—लेकिन नई जनानी डयोढी के भीतर पहुँचने के लिए यहा कुछ दिन रहना जरूरी है। पुरानी बोतल मे ताजी शराब की तरह गन्धायित जनानी डयोढी में मने अपना कदम रख दिया। इस डयोढी में मर्द नाम का जीव प्रवेश नही कर सकता। जिधर आँख उठा कर देखती—उधर औरत ही औरत। परियों की तरह चहकती औरतों की अमरावती मे कई तरह की अप्सरायें हैं कुछ मुझसे भी उम्र म छोटी है कुछ हमउम्र और कुछ मुझसे भी काफी उम्र की। कुछ तो बुढापे के साये मे ढली श्वास की गठरी का भार लिए खासती—फिरती हैं। म उस दिन न समझ पाई थी उस रगीले वातावरण में हड्डियो की गठरी का क्या अस्तित्व है? किन्तु आज आपको बता रही हूँ कि वे बूढी श्वासें ही वहाँ की शासिकायें है। वे अपने अपने बेडे की मालकिनें हैं। उनके बडे म २० २५ हम जमी छोकरियाँ रहती हैं। उन्ही के हुक्म और निगाहो के इशारो से बेडे मे हरकत सोती और जागती है। उन्ही के आदेश से वहा के जहाज हिलते-डुलते हैं। उन्हीं औरतो के कारण शहर की गलियो म से हीरे मोती परख कर उन महलों तक पहुचते हैं।

——उनके एक हाथ मे दया का दीपक है और दूसरे हाथ मे मौत का फन्दा। वे औरतें होकर भी किसी जल्लाद स कम नहीं हैं यम-दूतियो की तरह सुन्दरियो को घोर यातना देने मे उन्हें आनन्द मिलता है। व हर औरत की जिन्दगी को जलालत स भर कर अट्टहास करती हैं और अपनी टूटी हुई जिन्दगी का बदला हम जसी औरतों से लेती हैं।

—मैं अप्सराओं के गाव में थी। वे कौन हैं ? कहाँ से आई ? किसने उनको जन्म दिया ? कौन उनके रिश्तेदार हैं ? किस राह से गुजर कर उन दीवारों के बीच आ घिरी ? उन्हें उस मंजिल तक पहुँचाने वाला कौन था ? —वे कुछ नहीं जानती। वे तो सिर्फ इतना ही जानती हैं कि उस जलते समुन्दर के बीच वे तड़फती मछलियां हैं—और उनका एक ही आदमी से रिश्ता है—वह है अन्नदाता, उनकी धणी खमा ही उनकी जिन्दगी है। अपने तन को सजा कर रखना ही उनका मजहब है। अपने दर्द को अट्टहास में व्यक्त करना मजबूरी है। मैं उन अप्सराओं के बीच घिरी हक्की बक्की सी रह गई।

—मेरे चारों ओर भीड़ थी। मैं उन्हें देख रही थी और वे मुझे। न वहा कोई कौम, न कोई धर्म, सभी एक डोर से बंधी मोतियों की तरह जुड़ी हुई थीं। वहा की औरतें हर कला में निपुण होती हैं और अपनी कलाबाजियों के प्रदर्शन से खिताब पाकर उस्ताद बनना चाहती हैं। उनके अपने अखाड़े हैं अपने घर हैं अपनी टोली और अपने दल हैं। कुछ औरतों ने घाघरे व चूनड़ी ओढ़ रखे थे कुछ ने सूतनी कुर्ती पहिन रखी थी, कुछ ने पेर और कांचली। सभी ने मनचाही रंग बिरंगी पोशाकें और मनचाहे गहने अपने शरीर पर लाद रखे थे। किन्तु उन चमचमाती बिजलियों के भीतर एक गहरी जहरीली उदासी थी उनके चेहरों पर दर्द की कालिख पुती हुई थी, उनकी आंखों में सूखे आंसुओं की परतें थीं। वे हँसती थीं किन्तु स्मितहास नहीं अपितु दर्द को दबाने के लिए अट्टहास करती थी—जैसे बदली रोने से पहिले घोर-गर्जना से अपना दर्द दबाना चाहती है। कुछ औरतें आगे बढ़ कर मेरा मुख और सुन्दरता देखने की होड़ में लगी थीं—मेरे रूप को देखकर न्यौछावर करने लगी और कुछ अपना मुँह बनाकर दूर हट गई। कुछ ईर्ष्या के कारण मुझे तिरछी नजर से देखती हुई दूर जा खड़ी हुई। मैं उन सभी की हरकतें गौर से देख रही थी, उनकी चर्चायें सुन रही थी—तभी एक बुढ़िया ने मेरे सिर पर हाथ रखते हुए कहा—'सचमुच तुम रूप की रानी हो। भगवान ने तुमको किस घड़ी बनाया ? मेरा आशीर्वाद है कि तुम अन्नदाता की नजर में चढ़ कर उनके दिल पर राज करो।'

—मैंने बहुत कुछ पढ़ा था—और मां ने भी बहुत कुछ समझा दिया था—अतः वहा की सारी स्थिति चन्द पल में ही समझ गई। वे दोनों हम उम्र की दासियां मेरे साथ थीं। मैं उन्हें ही सहेली समझ कर उनसे बतियाने लगी, जी-खोल कर वे भी मुझे सब कुछ कहने लगी। मैं भी उनके बीच मिश्री की डली की तरह घुली जा रही थी। वे दोनों ही मुझे उस जलते हुए अलाव से निकाल कर ले गईं, वर्ना मैं उनकी स्थिति को देख कर वहीं जड़ हो जाती और एक अजाने भय से पीड़ित होकर दम तोड़ बैठती।

—मैं अपनी उन सहेलियों से उस मेले के बारे में पूछना चाहती थी लेकिन इतना अवकाश ही नहीं था कि खुद के सवालों के जवाब के सिवा कुछ और सवाल पूछने की हिम्मत करूँ। वे मुझे वहाँ से हटाकर एक दिव्य महल की ओर ले गईं। उस भव्य प्रासाद की दिव्यता मेरी आँखों में ऐश्वर्य की चकाचौंध भरने लगी। प्रासाद की जलदवर्णी काया पर रंग बिरंगे शीशे के फूल उन पर झूलती मणियाँ एक दूसरे से प्रतिबिम्बित होती हैं। दर्पण के रोशनदानों में जगमगाती हजारों मोमबत्तियों का उजाला चांदनी बर्साता रहता है। उस महल में दिवाली सी रोशनी बिखरती है। हर रात प्रकाश की गोद में अठखेलियाँ करती है। मेहराबदार खिड़कियों के शीशई बदन पर रेशमी पर्दे झूल रहे थे। पर्दों के नीचे झालर में टंकी मोतियों की माला हवा की लहर के साथ झनझनाकर सहज संगीत का आनन्द देती—उनकी मधुर झंकार से मेरा मन आमोद से भर जाता।

—मैं जिस ओर भी अपनी निगाह उठा कर देखती मुझे अपने असंख्य प्रतिबिम्ब झिलमिलाते दिखाई देते। मैं एक थी और मेरे प्रतिबिम्ब हजार। उस रात मैं पृथ्वी पर न थी अपितु स्वर्ग की अप्सरा की तरह स्वर्णिम विहान में पंख फैलाये तिर रही थी। मेरी कल्पनाओं की सफलता पर मुझे बेहद खुशी थी। मैं उस क्षण की प्रतीक्षा में मेरी धड़कनों को साज दे रही थी—जब मेरे उनसे मिलने का संयोग पा सकूँगी। मैं उस अपरिमित वैभव के धनी उस नगर के अधीश्वर उस स्वर्ग के इन्द्र से मिलने के लिए विकल थी। वैभव मेरा कभी लक्ष्य न रहा मैं तो उनकी अपनी बनने के लिए घर से निकली थी बदली की बूँद की तरह।

—नव वधु की तरह सकुचाती उस महल में कदम बढ़ाने लगी स्वर्ण पर्यंक पर जा बैठी। वे मेरी सहेलियाँ मोरपंखी से मेरा पसीना सुखाने अपने हाथ हवा में तिराने लगीं। वह क्षण मेरे लिए सौभाग्य से भरा था—जब किसी तवायफ का राजमहल में महारानी की तरह अभिषेक हुआ। आदमी को वैभवमय क्षण जीवन पर एक विचित्र तृप्ति का ग्रह होता है और वही ग्रह उसे सामान्य से असामान्य की ओर ले जाता है।

—समय का एक एक क्षण बोझिल लग रहा था। मैं उस अन्तराल को तोड़ने के लिए संकल्पशील हो गई—जो मेरे और उनके बीच में एक लम्बी सी दीवार के रूप में खड़ा था किन्तु मैं कुछ न कर सकी अपने पंख फड़फड़ाकर विकल पंछी की तरह विवशता के साथ सौभाग्य क्षण की इन्तजार में तिलमिलाती रही।

—वह स्वर्ण पलंग फूलों से भरा हुआ था। पलंग पर गिरे ताजा फूलों की महक हवा में तिर रही थी और केवड़े के इत्र की महक मेरी श्वास श्वास में

रमती चली जा रही थी। वह महक मेरी नस नस को उत्तेजित किये जा रही थी। इन्तजार की घड़ियां न तन को बोझिल कर दिया और निगाहों में दीपक अपनी लौ को झिलमिलाने लगे हल्की सी जलन पलकों पर छाने लगी। मैंने अपनी देह को पलंग पर फैला दिया। उस मदभीगे वातावरण में जागती हुई भी अपने नयन आकाश में स्वप्न की मधुर कड़ियां पिरो रही थी। केशर-कुंकुम भीगी पलकें कुछ भी न देख पा रही थी लेकिन मन धीरे से कह रहा था— लो मन जाना, वे आने वाले हैं।' कभी कभी धीमी सी थपकी देता हुआ कहता—'क्या कर रही हो ? वे आ गये हैं।' मैं अपनी ही आवाज से चौंक कर खड़ी हो जाती लेकिन मदभीगी मौसम ही अंग अंग चटकाती रहती कोई नहीं दिखाई देता।

—मैं कल्पना करने लगी—'वे आयेंगे मैं उनको देख भी न पाऊँगी, वे चुपके चुपके यहाँ तक चले आयेंगे और धीमे धीमे कदम बढ़ा कर अपने हाथ से मेरा झीना सा घूंघट उठा कर मेरे रूप पर मुग्ध हो जायेंगे। मैं नयन मूंदे हुए प्रस्तर प्रतिमा की तरह जड़ हो जाऊँगी जैसे मेरी देह बर्फ से बनी हुई हो। मैं भुकी पलकों से उस उद्दाम पौरुष को चुपके चुपके देखने की इच्छा करूँगी लेकिन अपने पलकों पर गिरी शर्म की पराग को नहीं झिड़का सकूंगी। उस क्षण भी मैं अपने प्रिय की मोहिनी सूरत को न देख सकूँगी लेकिन मेरा मन सब कुछ देख लेगा। वे मुझे देखेंगे जिस रूप को मैंने सुरक्षित रखा है उसे देख कर वे अपने को धन्य कहेंगे और अपना सब कुछ न्यौछावर कर देंगे। उस क्षण हमारे पास अपना कुछ न होगा। न मैं रसकपूर ही रहूँगी और न वे महाराजा ही। रहेंगे केवल आलिंगन के मदिर क्षण और मधुर चुम्बन की मीठी सिहरन। उन्हीं क्षणों में मेरे सकोच के फूल मुरझायेंगे और शर्म के गजरे बिखर जायेंगे।

—मैं स्वप्न पर स्वप्न देखती रही। बदली पर बदली तिरने लगी और इन्द्रधनुषी रंग बिखरने लगे—लेकिन न वे आये और न मुझे ही नींद आ सकी। काश ! उस क्षण मुझे नींद आ जाती और मैं अपनी मधुर कल्पना स्वप्न के मोह में ही जी लेती। समय बीतने लगा अन्धकार बढ़ता रहा और मेरे स्वप्नों के शरीर का कसाव भी थक कर धीरे धीरे चूर होने लगा।

– मेरे मन में उदासी अंधेरे के साथ घिरने लगी। मेरा अस्तित्व मिटता हुआ दिखाई दिया। रूप का यह शिखर गिराने लगा। मुझे झपकी सी आने लगी— उसी क्षण किसी के स्वर ने सोते हुए समुन्दर में तूफान पैदा कर दिया। मेरी दासी सिर भुका कर कह रही थी—किस्मत के दरवाजे खुल गये हैं, अन्नदाता ने आपको याद किया है।'

कदखाने मे प्रलाप करती रहती। मैंने समय और परिस्थितियों के साथ समझौता किया और उस मद्धिम वातावरण का विशृंखल करने के लिहाज से अपने कदम को आवेश के साथ झटका तो पायल के कम्पन टूट कर गिर गये और नूपुर के स्वर उस सन्नाटे मे एक साथ गूंज उठे। मेरी उस झंकार ने मेरे हुजूर की नींद को तोड दिया। सभी चौंक गये—और हवा ने भी दिशा बदल दी। मेरे सरकार ने करवट बदलते हुए हुक्म फरमाया—आओ! हमारे करीब चली आओ! हम तुम्हारे दरवाजे तक नही आ सके, रूप की रानी! आ भी जाओ! बहुत दिनो से तुम्हारे रूप की चर्चा सुनते आ रहे हैं।'

—मेरा अपना अगला कदम क्या हो? मैं खुद किसी नतीजे पर नहीं पहुँच पा रही थी। न मैंने घूँघट ही उठाया और न कदम ही आगे बढाया—अपितु वहा खडी रह कर महाराजा के सामने अदब के साथ मुजरा पेश किया। मैं तीन बार घुटनो तक झुकी और अपने दाहिने हाथ की अगुलियों को हवा मे लहराते हुए अपने जीवन धन का अभिवादन किया। महाराजा ने एक हल्की सी हसी के साथ अपने गले का हार उतार कर मेरी ओर फक दिया—वह अमूल्य उपहार मेरे वक्ष मे आ टकराया। मैंने उसे अपने हाथ म सहेजते हुए उसे सिर से लगाया तथा उसी क्षण गले मे पहिन कर अनुग्राता की इनायत के लिए भावना जाहिर की।

—महाराजा ने अपने हाथ को हवा म हिलाते हुए मुझे बुलाने का इशारा किया और मैं उनके इशारे के साथ ही कदम बढाने लगी—मैं उस क्षण मतवाली हथिनी की तरह आगे बढने लगी—लेकिन कुछ दूरी पर ही ठहर गई—जसे किसी ने मुझे जकड लिया हो! महाराजा ने फिर अपना हुक्म दुहराया—और आगे आओ!

—मैंने दो कदम और बढा दिये किन्तु अभी भी फासला बहुत था।

—"हम देख कर खुश नही हो?

—मैंने कुछ भी जवाब मे न कहा, केवल पायल के घुघरु झनझना कर रह गये शायद उस क्षण वे ही मेरे मन की खीज को व्यक्त कर रहे थे।

— बहुत सता रही हो रूपसी!

—मैंने फिर अपना एक कदम आगे बढा दिया।

—'हम खुद चल आते हैं।"

—यह सुनकर तो मैं जड हो गई। वास्तव म वे मेरे करीब आये और धीमे से कहा— हमसे रूठ गई?

—उन्होंने अपने हाथ से मेरा भीना घूँघट उठाया और अचरज भरी निगाहों से मुझे देखने लगे। मने एक पल के लिए अपनी निगाहें उठाई ना उन मदभरी झील सी आँखा म नहा आई मैं उन्हें बार बार देखना चाहती थी, लेकिन हिम्मत नहीं जुटा पाई—वे मुझे अपलक नयनों से दखते रहे—और मैं पलकों का बोझ हलका भी न कर पाइ। मैं अपने कदमा पर अपना भार उठाने मे अशक्त हो चली मेरे कदम कांप कर लड़खड़ाने लगे। मुझे आशका होने लगी कि यह लता सी देह किसी भी कम्पन के आवेग में लुढ़क पड़ेगी, उनसे जा टकरायेगी, और हुआ भी ऐसा ही। मेरा सिर उनके वक्ष से जा टकराया। मने सभलने के लिए बहुत फुर्ती की किन्तु उससे पूर्व ही मेरे हुजूर के दोनों हाथ मेरे बदन को अपने बंधन म जकड चुके थे। उनकी सुवासित गध-भीनी श्वासें मेरे अधरों पर तिरने लगी। उस क्षण मैंने अपने आपको एक झटके के साथ उनसे अलग करना चाहा कि उनके हाथों मे मुनहरी ओढने का पल्लू फस गया और एक ही झटके मे मेरी ओढनी मेरे बदन से हट गई। देह आवरणहीन हो गई—जिसकी मैंने कल्पना भी न की थी। मुझे ऐसा लगा कि हवा का कोई तेज झोंका मेरे बदन से शर्म की चुनरिया को चुरा ले गया।

—म उनसे कुछ दूरी पर जा खड़ी हुई। अपनी भुजाओं से उरोजो को ढाँपती हुई उनसे ओढने के लिए अर्ज करने लगी—और वे मुझे उन्माद भरी निगाहों से देखते रहे। वे क्षण कितने मादक थे, मैं अपने मान को हर मोड पर नया रूप दे रही थी और वे मुझे पाने के लिए हर क्षण विकल हो चले थे। मन जिद न की थी और न आना कानी ही, अपितु नारि गत कोमल भावनाओं का सहज प्रदर्शन उनके लिए उन्माद के क्षण बन गये।

—म उन्हें अपनी तिरछी नजरों से देखती—और वे आगे बढने की चेष्टा करते। मने उस क्षण अपने आपको बहुत समझाया किन्तु मन अपनी मनमानी करने लगा और तन अपनी मनमानी। उन दोनों के मध्य मेरा यौवन अगड़ाई लेने लगा। न जाने मेरे कदमों म बिजली का कम्पन कसे उभर आया और मेरे पायल के घुघुरु गूज उठे तथा मेरी देह नृत्य करने लगी अधरों से स्वर फूट पडे—'मन ना माने, ना माने ना माने रे। कसे समझाऊँ अचरजी ?'

—मैं सहज भाव से मयूरिनी की तरह नृत्य करती रही।

—मेरे अन्नदाता लड़खड़ाते कदमों से मेरा साथ देने लगे।

—मैं अपनी भावनाओं मे विभोर थी और मेरे हुजूर मेरे साथ डूबने तिरने लगे। भावावेश में मेरी देह ने उनकी देह के अनेक मदिर स्पर्श पाये—हर स्पर्श

मुझमें चेतना भर जाता। मैं तो अपने आपमें कसमसाहट जी ही रही थी-लेकिन व भी मेरे स्पर्श से उत्तजित हो मुझे पाने के लिए विकल हो चल। मरे कदमों के ठहरने पर उन्होंने कहा था—अरी देख क्या रही हो! रत्ना का ढेर इसके बदन पर न्योछावर कर दो! हमने हमारी जिन्दगी म आज पहिली बार कलियों को मुस्कुराते देखा है बिजली के फूल खिलते देखे हैं, नशे को हवा के साथ तरते देखा है।

—मैंने फिर अदब के साथ सिर झुकाया तो उन्होंने मुझे अपने हृदय से लगाते हुए कहा—तुम्हारे लिए हर नजराना छोटा है हम खुद तुम्हारे हो गय हैं, आज से तुम हमारी हो सिर्फ हमारी।

—यह मरा सौभाग्य था कि उन्होंने मुझ इतना सम्मान दिया। मैं अपनी विजय पर दर्प जीने लगी! महाराजा ने खुद हाथ पकड़ कर मुझे अपनी बगल म बिठाया। प्याले म कस्तूरी भर कर मेरे अधरों से लगाना चाहा लेकिन मैंने बीच ही मे प्याले को थामते हुए उनकी ओर देखा—और उनके अधरों से लगाना चाहा तभी उन्होंने मेरे बालों को अपने हाथ से सहेजते हुए कहा था — पहिले तुम।'

—'पहिल हुजूर!"

—"अपने आफताबी होठों से इसम रस घोल भी दो!

—मैं भला उनके हुक्म को कसे टाल सकती थी? महाराजा ने अपने हाथ स वह प्याला मेरे अधर स लगा दिया और मैंने एक हल्की सी घूंट अपने गले स नीचे उतारी।

—मैंने भी उन्हे जी भर कर पिलाई। आखिर उन्होंने ही कहा— रूपसी! अब इसकी जरूरत नहीं है, तुम्हारी आँखें मद से भरी झील हैं—हम इन्हीं म डूब कर मदहोश हो रहे हैं।

—मैंने पलकें उठा कर उनकी ओर देखा—वह प्रथम क्षण था जब मैंने अपने दरबार की नजरो म अपना प्रतिबिम्ब देखा। उस क्षण रसकपूर मदिरा से भीगी हुई अंगड़ाईयाँ भर रही थी। महाराज ने मुझे अपनी ओर खचना चाहा तो मने तिरछी नजर से उन युवतियो की ओर देखा—वे उठ कर वहाँ से चली गईं।

—म महाराजा की गोद मे थी और मेरी दोनो भुजायें उनके गले म हार की तरह झूल रही थीं। उनके तप्त अधर मेरे पलाशी अधरों पर रेंगने लग। मेरी देह म एक अजीब सा सन्नाटा भर गया और म निढाल सी होने लगी। उस क्षण मैंने अपना अस्तित्व खो दिया था।

———

□ छः

—मैं उस रात पल भर भी न सो सकी। मेरी पलकें बोझिल हो चली तथा शरीर में भारीपन सा महसूस होने लगा लेकिन मैंने अपने उनकी मोहिनी छवि का दर्शन पाने की उत्कण्ठा में अपना सारा दर्द भुला दिया। मैं पलंग पर मखमली मसनद का सहारा लेकर लेटी हुई थी, मेरे दीर्घ कुंतल पलंग से लटकते हुए जमीं का स्पर्श कर रहे थे, सिर पर सिर्फ चन्द्रमणि थी—शेष सारे गहने बदन से उतार दिये थे। हृदय पर उनके द्वारा दिया हुआ हार झूल रहा था। जिसे मैं उतारना भी नहीं चाहती थी। अंगुली में एक अंगूठी थी—जिस पर उनकी छवि अंकित थी—मैं उस छवि को नयनों से बार बार पीती और अधर से चूम लेती थी। उनकी छवि के नीचे उनका नाम भी अंकित था—मैंने उन अक्षरों को अपने अधर से स्पर्श किया—और मन ही मन बार बार गुनगुनाया—महाराजा जगतसिंह।"

—मेरे वे साधारण आदमी नहीं हैं बहुत बड़ी रियासत के महाराजा हैं, अनेक छोटी-बड़ी रियासतों के राजा, जागीरदार अपने मुकुट उनके कदमों में अन्व के साथ भुकाते हैं। उनके पास बहुत बड़ी सेना है, असंख्य घुड़सवार और हाथी घोड़े हैं। खजाने में भी किसी प्रकार अभाव नहीं है। दिल्ली के शहंशाह की तरह ऐशो आराम की जिन्दगी जीते हुए राज कर रहे हैं। उनके मित्रों की संख्या भी

कम नहीं तो दुश्मनों की गिनती भी नहीं की जा सकती। उन्होंने आस्तीन के सांप भी बहुत पाल रखे हैं—जो दूध पीकर भी वक्त बेवक्त उनको काट लेते हैं—और वे क्रोध मे तिलमिलाकर कभी कभी उनके दांत तोड़ते रहते हैं लेकिन आवेश में दोस्त और दुश्मन की पहचान भूल जाते हैं दोस्तों पर ही अपना क्रोध उतार देते हैं। मेरे स्वामी अतुलित वैभव के धनी शृंगार के चतुर चितेरे रस सरोवर में हंस सरीखे होते हुए भी वीरता मे किसी से कम नहीं हैं। उन्होंने अनेक युद्ध-यात्रायें की और अपने पराक्रम से दुश्मनों के दांत खट्टे किये लेकिन यह बात दूसरी है कि उन्होंने अपने अजीज दोस्तों और वफादार नौकरों पर विश्वास करते हुए धोखा खाया, वे अपनी परम्परागत मान्यताओं में विश्वास रखते हैं। उन्होंने अपनी जिन्दगी में अनेक विवाह किये। आज भी यह सिलसिला समाप्त हो गया हो—ऐसी बात नहीं है उनकी नजर में यदि कोई चढ़ जाये उन पारखी की नजर में कोई कीमती हीरा चुभ जाये तो वे विवाह करने से कभी नहीं चूकते। यह सच है कि भोग ही उनका जीवन है, इसी के लिए उन्होंने जन्म पाया हो!

—उनकी जनानी ड्योढ़ी में भी बहुत बड़ी भीड़ है। अनेक पड़दायतें, बाईयां और शहर की प्रसिद्ध नर्तकियां हैं। अनेक अखाड़े और अनेक घेर हैं। देश प्रदेश की औरतों की खासी भीड़ जुड़ी हुई है। उस ड्योढ़ी की हर औरत उनके द्वारा भोगी हुई है। उनकी नजर में जो सुन्दरी चुभ जाती या किसी के हुस्न की चर्चा सुन लेते अथवा कोई जिक्र कर देता तो उसे महल में बुलवा लेते और एक रात भोग कर जनानी ड्योढ़ी के किसी अखाड़े मे भिजवा दिया जाता है। वहां वह अपनी जिन्दगी उनके नाम पर जीती रहती है।

—कुछ लोग मेरे सरकार को ऐय्यार कहते हैं, उन्हें कामुक कह कर उनका गंदा प्रचार करते हैं। मैं समझती हूँ कि संसार मे ऐसा आदमी कौन होगा—जो पौरुष व वैभव धन पाकर भोग न भोगेगा यौवन का मद जीते हुए सन्यासी बना रहेगा? राजा महाराजाओं का जन्म तो भोग के लिए ही होता है वे ईश्वर के अवतार हैं हर सुन्दर वस्तु का निर्माण उन्हीं के लिए होता है। मेरे बलमा तो रसिक सिरोमणि रहे हैं प्रेम रस मे डूब जाने के बाद अपना सब कुछ भूल जाते हैं।

—मैं पलंग पर लेटी हुई उन्हीं का स्वप्न देख रही थी। प्रभाती पवन के मंद मंद झोंके हिलोरें दे देकर मुझे मुग्ध कर रहे थे। मेरी पलकों पर हल्की सी थाप देकर मुझे सुला रहे थे। उन ठंडी लहरों के साये में न जाने मुझे कब नींद आ लगी—और मैं उनके बारे में कल्पना जीती हुई सो गई। नयनों में उन्हीं की

छवि का उल्लास था–कानो मे उन्हीं के मधुर-स्वर गूँज रहे थे, श्वासो मे उन्हीं की सुरभित श्वासें घुली जा रही थी। नीद के सुख मे भी वे थे और मैं उस देह को समर्पित!

—मेरी आँखें खुली तो मैंने देखा—मेरे चारों ओर सुन्दरियों का जमघट जुटा हुआ था। कोई सुन्दरी वीणा बजा रही है कोई वशी का मधुर स्वर छेड रही है। एक सुन्दरी चाँदी के कटोरे से गुलाब-जल मेरी आखो की पलको पर लेप रही थी। कदमों के पास खडी कोई किन्नरी सी युवती मेरे तलुओं को सहला रही थी। सिरहाने की ओर एक युवती चाँदी की झारी लिए खडी थी। अनेक युवतियाँ हाथ में थाल लिये मेरी जी-हजूरी मे खडी थी। मैंने देखा कि मैं अप्सराओ किन्नरियो से घिरी रम्भा हू। मैं उन्हे देख कर अचम्भित रह गई, मैंने पास मे खडी युवती से सकेत किया।

—वह कदम बढा कर और करीब आ गई।

— आप सभी यहाँ?'

— हम दासियाँ हैं।"

—दासियाँ?

—हाँ, मालिका! हम सभी बाँदियाँ है!

—'किसकी ?"

— 'आज से आपकी।"

—"कल तक ?"

—'चाँद बेगम की खिदमत मे थी।"

— वह कहाँ है ?"

— उन्हें चन्द्रमहल की ड्योढी मे भिजवा दिया गया।"

— क्यो ?"

— 'वे सभी चुप थीं।"

— 'क्या चाहती हो ?

— आपके हुक्म की इन्तजार!'

—मुझे उन दासियों पर रहम आने लगा और मन ही मन खुदा को कोसने लगी, जिसने उन्हें तन्दुरुस्त मिट्टी से बनाकर रूप रंग से सवार कर धरती पर परियों की तरह उतारा, उनके पास क्या कमी थी? स्वस्थ शरीर अक्षत सौन्दर्य फिर भी

भाग्य की रेखा मे अभिशाप की काली छाया ! उस परवरदिगार ने उनके साथ ऐसी मजाक क्यो की ? न जाने उन्हें किन कर्मों की सजा दे रहा है। सुन्दरता के साथ भगवान की क्रूरता। विधि का विधान समझ मे नही आ पाया। जिन परियों को अपना घर बसाना था, जिन्हें अपनी गोद में ममता का फूल खिलाना था—वे मेरी खिदमत मे दासियो की तरह हाथ जोड़े खड़ी थी।

— मैंने उठने के लिए करवट बदली तो सिरहाने खड़ी दासी ने अपने कोमल हाथ का सहारा देकर मुझे बिठलाया। उस दिन मुझे शहजादियों की नजाकत का राज समझ में आया। बगमे और महारानियाँ इस तरह की जिन्दगी जीती हुई कोमल बन जाती है—और फूल सी देह पर भी खरौंच आन का भय रहता है। गुलाब जल से मैंने अपना मुँह धोया तभी दो दासियाँ परिधान हाथ मे लिये मेरा बदन पौंछने के लिए पास आ खड़ी हुई।

—कुछ क्षण बाद मुझे नहान घर की ओर ले जाया गया। शीतल सुवासित जल से भरे हुए चादी के हौद थे। स्नान घर मे रजत-कलशों के मध्य रत्नजड़ित स्वर्ण चौकी थी—जिस पर बठ कर मुझे नहाना था। मैं अकेली ही स्नान करना चाहती थी उन सभी को बिदा करना चाहा लेकिन वे हटने का नाम ही न ले रही थी। वहाँ का रीति रिवाज भिन्न ही था। सच ! महलों की सभ्यता और संस्कृति भी आम सभ्यता से अलगाव लिए हुए है। मेरे द्वारा बार बार इन्कार किये जाने पर उन्होंने मेरे तन से वस्त्र उतार फेंके—जसे मेरा कभी वस्त्रो से कोई सम्बन्ध ही न रहा हो !

—वह स्नान मेरे लिए अनोखा था। दासियाँ मेरे बदन पर चन्दन का लेप करने लगी। चन्दन स्नान के बाद फुलेल से नहलाया गया। हजारों नीबूओं का रस निकाल कर चान्दी के हौद म जो इकट्ठा किया गया था—वह मेरे शरीर पर मला गया फिर मुझे स्वच्छ जल से नहलाया गया। दासियो के कोमल हाथ मेरी देह पर इस तरह फिसल रहे थे—मखमल पर रेशम के तार ! बर्फ की शिला पर बहता हुआ जल ! या जल पर पलाश के नये पत्ते। सुवासित मदिरा से मेरे अंगो का अभिषेक किया गया। मैं उन सभी कृत्यों को विस्मय के साथ देखती हुई उन्माद की सिहरनों को जीने लगी। वह प्रथम दिन मेरे लिए हर नई घटना व नई हरकत के लिए अचरज से भरा हुआ था। उसके बाद तो मैं खुद अभ्यस्त हो चली थी हिचक नाम का हर्फ ही न रह पाया।

—मेरे बदन को सुवासित परिधान से ही पौंछा गया और फिर पुष्प राग के आलेप से देह को सुगन्ध से भर दिया गया। उरोजो पर चन्दन का लेप कर रेशमी

काँचली से बाँध दिये गये। अगरागुरू की सुगन्धित धूप से मेरे केश सुखाये गये। चोटी गूँथने वाली सुन्दरी से मैंने अपना मौन तोड़ते हुए पूछा—'तुम्हारा नाम क्या है?"

—'बाँदी को रतना कहते हैं।'

—'किस जाति की हो?'

—'नायन हूँ।"

— 'बहुत सुन्दर हो!'

—'आपके सामने कुछ भी नहीं—उसने दीर्घ निश्वास के साथ उत्तर दिया।

—'तुम्हारा भ्रम है।'

—'फिर सच क्या है?"

—'यहाँ कब से हो?'

— पिछले तीन साल से।'

—'क्या करती रही हो?'

—'मेहँदी माड़ना और सिरगूँथी करना।'

— पहिले किसकी सेवा में थी।'

—"राजवमल बाई की खिदमत में।'

—'फिर क्यों हटा दी गई?

—'मैं तो सन्‌ से ही इसी महल की सेवा में रही हूँ यह महल वही रहता है महल में रहने वाली बदल जाती है। मैंने इसी महल में कितने ही हाथों का स्पर्श किया है। हथेलियों में मेहँदी और परों में महावर रची है। लेकिन यहाँ का दस्तूर ही निराला है, हर तीसरे दिन मालकिन बदल जाती है हाथ बदल जाते हैं लेकिन मेहँदी का प्याला वही है—और मैं रोज उसी में मेहँदी घोलती रहती हूँ। हाँ गुलाब बाई एक महीने से अधिक रही थी।

— ये सभी कहाँ चली जाती है?'

—'यहीं हैं।'

—'कहाँ?'

—'ड्योढ़ी में।"

—"इस महल से क्यों निकल गई?'

— दूसरी के लिए।

—"वे यहाँ नहीं आ सकती हैं ?"

—"ड्योढ़ी में जाने के बाद यहाँ आने का क्या काम ?" कहती हुई रतना तनिक गम्भीर हो चली।

— महाराज कभी उनसे मिलते नहीं ?'

—"उनकी याद भी न होगी।'

— वे भी नहीं तरसती है ?"

— किसका वश ?"

— कभी तो मिलन होता ही होगा ?'

— 'हाँ महीने में एक दो बार।"

—'कैसे ?"

— 'जब कभी जनानी ड्योढ़ी में अखाड़ा का कार्यक्रम होता है तो सभी एक ही जगह एकत्रित हो जाती हैं, उस दिन महाराज भी वहाँ पधारते हैं आप किसी को देखते हैं या नहीं लेकिन वे सभी आपको देखकर मन को खुश कर लेती हैं।

— कभी रात में भी ?

— आपके दरबार में क्या कमी है ? महल की हर रात सुहागिन होती है यहाँ की अंधेरी रातों में चांदनी बरसती रहती है तारे झिलमिलाते हैं और चन्दा बादलों के बीच में छिपा हुआ रास रचाता रहता है कभी डूबता है तो कभी निरता है।'

— 'तुमने भी कभी महाराज के दर्शन किये हैं ?'

—वह शरमा कर रह गई।

—'बता न ! मैंने अपनी अंगुली से उसकी कमर के माँस को गुदगुदाते हुए कहा।

— क्या कहूँ आपसे ? "

— 'मुझसे क्या छिपाना ?

— 'मालकिन जो हो !'

—'न जाने फिर कब मिलेंगी हम ?"

— क्या ?"

— 'मुझे भी तो उसी भीड़ में मिलना है।"

— 'यहाँ ऐसी कौन सी सुन्दरी है ? जिसके मुँह पर पानी रहा हो ?"

– तुम भी नहीं ?"
– मैं भी एक रात महाराजा के कदमों की दासी रही हूँ ।'
– फिर भी तुमको ड्योढ़ी में नहीं भेजा गया ? "
– यह जरूरी नहीं है ।"
– 'क्यों ?'
– मैं किसी की पत्नी हूँ ।'
– महाराज की रखैल नहीं हो !"
–' उसने हामी में अपना सिर हिला दिया ।"
– तुम्हारा पति क्या करता है ?"
–' अन्नदाता की जी–हजूरी में है ।"
– 'उसे भी सब कुछ मालूम है ?"
– यहाँ की कहानी कौन नहीं जानता ?"
–' उसने कोई ऐतराज नहीं किया ?"
–' हम सभी अन्नदाता की प्रजा हैं'—इसके सिवा रतना कुछ न कह सकी ।
–' क्या ये सभी दासियाँ प्रयाणीसुन्दा हैं ?"
– कुछ हैं और कुछ नहीं ।"
– 'और कई कुँवारियाँ भी होगी ?"

—' नहीं कुछ विधवायें हैं और कुछ मुझ जसी । इनमें से कई तो माँ हैं इनकी गोद में महाराज के बच्चे भी खेलते हैं ।"

—रतना मेरे तलुओं में महावर लेप रही थी । ठंडक लगने पर भी मुझे अहसास होने लगा—जैसे कोई मेरे गर्म राख का लेप कर रहा हो । मैं अंगारों पर चल रही हूँ । रतना के मन की थाह लेते हुए मैंने ही उससे फिर प्रश्न किया—'क्या मुझे भी जनानी ड्योढ़ी में ही जाना होगा ?

–' दस्तूर तो ऐसा ही है फिर अन्नदाता की मर्जी ।"
– 'सुना है, वहाँ की जिन्दगी तो नर्क है !"
–"उस घर में भी क्या कमी है ?'
–' क्या मतलब ?"

— ' वहाँ क्या नहीं है ? सब कुछ तो है, यदि किसी चीज का अभाव है तो

सिर्फ आदमी का। वहाँ रहने वाली कोईभी औरत विधवा नहीं होती, सुहागिन ही मरती है।

~ महाराजा के दिन ~।

— गद्दी कब सूनी रही है गद्दी पर बैठने वाले महाराजा के नाम पर जनानी ड्योढ़ी सदा सुहागिन रहती आई है। आदमी मरता है महाराजा के दिन कभी पूरे नही होते। चाहे पाँच वर्ष का राजकुमार ही गद्दी पर बैठे राजतिलक होते ही साठ वर्ष की सुहागिन भी उसके नाम की माँग भरती है, उसके दर्शन के लिए बावरी रहती है। यहाँ दुहाग नाम है ही नहीं।'

~ मैं रतना की बातें सुनकर घायल सी हो गई मेरी देह को हजारों विषैले जीव जन्तु डंक मारने लगे, मानों मेरी नस-नस को केंचुलो ने पकड़ लिया हो या किसी जहरीले अजगर ने अपनी तीखी ढाढें मेरे शरीर मे गड़ा दी हो। अपने ही खून का हर कतरा काटने लगा। उस घड़ी मैं भावी आशंका के कारण भय से भर गई और उस नर्क की कल्पना से मूर्छित सी हो गई। जिन्दगी के सुनहले स्वप्नों का इतना भयंकर दुःखद अन्त? कभी विचारा भी न था।

—क्या रसकपूर भी ड्योढ़ी की बाई बन कर रहेगी?

उसके रूप का अहं चाहर-दीवारी में घुटने के लिए हमेशा के खातिर बन्दी बना दिया जायगा?

उसकी महत्वाकांक्षाओं का विसर्जन इस सदमे के साथ होगा?

क्या यह प्रेमनगर अविश्वास की भूमि है? यहाँ क्या औरतों के जिस्म का सौदा मात्र होता है?

ये महल तवायफो या बाजारू रंडियो के कोठे से भी गये गुजरे हैं? क्या इस वैभव की छाया में औरत की जिन्दगी का मतलब फकत सिसकना भर है? क्या मुझे भी अपने उनके दर्शन के लिए भी दिन रात तड़फना है। यह कैसा नगर है? क्या यहाँ हृदय नाम ही नहीं है? मैं भी किस दुनिया में आ गई? क्या ऊँचे इरादों का यह नतीजा मिलेगा? मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ तो मैं दम तोड़ दूँगी खुदकशी कर लूँगी इन दीवारों से छलांग लगाकर कूद पड़ूँगी लेकिन विवशता भरी जिन्दगी जीना मेरे लिए दुश्वार होगा।

—अपने आप से संघर्ष करने लगी। मैंने अपने जीवन में सहज रूप से कभी पराजय स्वीकार नहीं की। आने वाली मुसीबत की कल्पना से भागना,

सिसकना या रोना नहीं सीखा अपितु मौत से भी लड़ने का हौसला पाया है। अपने आत्मबल के सहारे हर मुसीबत का सामना करने के लिए हर घड़ी तैयार रही हूँ।

—मैंने रसना से कुछ न कहा। न मैंने कोई नया सवाल किया और न उसने बिना पूछे ही कोई नया जवाब दिया। वह मेरी हथेलियों मे अल्पना रच कर चली गई। दासियों ने मुझे नये वस्त्र पहिनाये और मेरा शृंगार किया गया। मैंने अपने हाथ से उनके नाम से अपनी मांग मे कुंकुम भरा और भाल पर बिंदिया चमकाई। मैं अपने रूप को सवारती रही, सज धज कर आदमकद शीशे के सामने जा खड़ी हुई और अपनी दासी से कहा—फातिमा! यदि मैं टोपी पहिनूँ तो कितनी अच्छी लगूँ? आज मेरा जी टोपी पहिनने को करता है। दासियाँ दौड़ी, और मेरे लिए टोपी पायजामा व कुर्ता आ गये। मैंने अपने हाथ से फिर अपना शृंगार किया।

—मैंने जनानी ड्योढ़ी में कदम न रखने की कसम खा ली थी। मैं महाराज को अपने वश में कर लेना चाहती थी ताकि मुझे नर्क का दरवाजा न खटखटाना पड़े। मैं अपने विचारों म खोई रही—कब समय कट गया? अंदाज ही न रह पाया और मेरे हुजूर ने बुलावा भी भिजवा दिया। जब उनका बुलावा आया तो मैं खुद को भी न सभाल पाई। कैसी अजीब स्थिति थी? उनका नाम आते ही पसीना बहने लग जाता था।

—उनके पास पहुँचने से पूर्व कल्पना लोक मे तिरती रहती, अनेक मसूबे बांधती और अनेक योजनायें बनाती लेकिन उनके आगोश मे सिमिटते ही सब कुछ भूल जाती मुझे मेरी देह का खयाल ही नहीं रह पाता। पहिली रात मे मैंने उनको भली भांति न देखा था किन्तु उस दिन जब मैं उनके करीब गई तो उन्हीं को देखती रही। मेरी और उनकी उम्र के बीच बहुत लम्बा फासला था लेकिन राजा महाराजा की उम्र किसी भी तरह नहीं नापी जा सकती। उनके सामने मैं बहुत छोटी थी और न बहुत बड़, फिर भी मेरा मन उनके मन को जीतने के लिए हर घड़ी संकल्प शील था। उन्होंने मुझे अपनी गोद मे बिठा लिया और मेरी अंगुलियां को अपने अधरों से लगाते हुए कहा- तुम कितनी सुन्दर कलि हो!'

—"सिर्फ आज आज ही।'

— यह क्या कह रही हो?"

—"कलि हूँ न आज खिली और कल मुरझा जाऊँगी।"

—'नहीं, नहीं, तुम नहीं मुरझाओगी, तुम तो सदाबहार हो।"

–'विश्वास नहीं होता !"

— 'इन आँखों की ओर देखो !—कहते हुए महाराजा ने मुझे अपने वक्ष में सिमेट लिया। उस क्षण मेरा अविश्वास गल कर बह चला, और मैं उनके अटूट प्रेम की पुजारिन बन कर उनके साथ अनन्त समाधि में खो चली। न तो मैं ही उनसे जुदा होना चाहती थी और न मेरे सरकार ही मुझे वहाँ से चल जाने की इजाजत देने का इरादा रखते थे। अन्नदाता ने उस दिन के सभी कामकाज वहीं किये न कहीं गये और न किसी को मिलने की इजाजत दी। रियासत के मुसाहिब भी दिन भर इन्तजार करके लौट गये और शहर कोतवाल तो थक कर वहीं सो गया मिलने की प्रतीक्षा में। उस दिन मैंने उनके साथ ही रसावड़ा जीमा और उन्हीं के साथ केलि करती रही। दुपहरी में अन्नदाता ने आराम भी नहीं किया—मुझे शतरंज खेलने के लिए इशारा किया। मुझे भी शतरंज का शौक रहा है यह खेल मैंने अपने पिता से ही सीखा था मैंने इस खेल की बारीकियों को भली भाँति समझ लिया था। अभ्यास न रहने के कारण मैं सरकार के साथ खेलने में संकोच का अनुभव करने लगी लेकिन अन्नदाता का हुक्म और बाँदी का जी हुजूरी में रहना जरूरी था। मुझे यह ऐतबार न था कि एक छोटी सी चाल कमाल कर दिखायेगी। मेरे प्यादे ने हुजूर के वजीर को धराशायी कर दिया फिर क्या था? हाथी घोड़े अपनी चाल भूलने लगे और हुजूर पैदल मात खा गये। वे शतरंज के महारथी रहे हैं-और उनकी चाल के आगे सभी मात खाते रहे हैं सिर खुजाल कर रह गये या बाजी जमाने की तोबा कर बैठे। रसकपूर ने महाराजा को किश्त दी थी। सच तो यह है कि महाराजा हार कर भी जीत गये और मैं जीत कर भी हार गई थी। जब मैंने उनके वजीर पर हमला किया था तो उनकी नजरें मोहरे पर नहीं मेरे चेहरे पर थीं। ऐसी मौसम में वजीर तो क्या राजा भी मिट जाते हैं घोड़े अढ़ाई घर की जगह सीधे दौड़ पड़ते हैं और हाथी मनमानी चाल चलते हुए इधर उधर पाँव पटकने लगते हैं। मैं उनके आगे जिन्दगी हार गई थी उन्होंने मुझ जैसी प्यादी को वजीर की जगह ला बिठाया। जब वे मेरी ओर देख रहे थे तब मैंने अपनी चाल को आगे बढ़ाते हुए कहा था—'हुजूर बचिये।'

–'अब कैसे बचेंगे? नामुमकिन है

– तो फिर हार मानिये!

– उन्होंने अपनी तर्जनी से मेरी चिबुक को ऊँचा उठाते हुए कहा था– हम तो पहली नजर में ही हार गये थे।'

– कहिये न मैं हार गया हूं। —मैंने त्रिया हठ का सहज प्रदर्शन करते हुए कहा।

– कह दूँ ?

– नहीं कहते ?'

–'तुमको विश्वास नहीं होता है कि हम हार गये।'

–'फिर बाजी उठाईये!'

–'बधाई! तुमको इस विजय पर!'

–'आपकी इनायत है।"

–'इस खुशी में कुछ मांगोगी नहीं ?

–'न दे सके तो ?

–'जो चाहे सो माँग लो "

–मुस्कराता!

–'रस! कुछ कहो भी, आज तो तुम्हारे इन कदमों में रियासत भी रख दूँ।

–'मुझे राज और ताज का क्या करना है ?'

–'कुछ कहो भी!

– कुछ भी नहीं चाहिये।

–"रस! सकोच कर रही हो! हमसे कुछ छिपा रही हो! कहो तुम्हें क्या चाहिये ?'

–"आपकी इनायत के सिवा कोई तमन्ना नहीं है।'

– नहीं, कुछ कहो भी। हम बाजी हारे हैं और तुम जीती हो! इस खुशी के मौके पर तो हम कुछ देंगे ही।

– मैं तो खुद बाजी हार गई हूँ।'

–'यह कैसे ?'

– आपके कदमों में न्यौछावर हूँ।'

–'रस ?"

– हाँ मेरे हुजूर!

–"तुम्हें पाकर मैं सब कुछ भूल गया हूँ '

–'मुझे भी कुछ याद नहीं है।

– तुम कौन हो ?

– हजूर के कदमों की धूल !'

–'और हम !"

– मुझ नाचीज के ताज !

– नहीं तुम हमी से झूठ बोल रहा हो ?'

– नहीं सरकार !

– रस ! तुम हमारे हृदय का हार हो !"

–"अन्नदाता की मेहरबानी है !'

—यह सच भी था कि हम उन क्षणों में वर्षा नदी के वेग की तरह अजान राह की ओर बहते गये या पंख फैलाये सोन पंछी के जोड़े की तरह अनंत ऊंचाई की ओर उड़े जा रहे थे। उन मदिर घड़ियों में न मुझे अपनी मां की याद ही सता रही थी और न कांच के दरवाजे की सुधियां ही कचोट रही थी। मैं अपना सब कुछ छोड़ कर आई थी जिन दीवारों का स्पर्श भी मुझे अपनत्व देता था जहां की हवा भी मेरे से बतियाती और आंख मिचौनी करती रहती थी—वे सभी सदभ मेरे लिए इतिहास बन कर रह गये। मैं उन यादों को भी दुहराना नहीं चाहती—जो मेरे लिए यादगार थे। मैं अपना अतीत भूला चुकी थी। मां बाप के बिछुड़ने पर हर लड़की बहुत रोती और बिलखती है अपने आंचल में ढेर सारी मधुर यादें सिमेटे रहती है लेकिन जिन्दगी के मोड़ बदलने पर वह खुद भी बदल जाती है। उसे स्वयं पर भी विश्वास नहीं रहता है—ठीक ऐसा ही मेरे साथ हुआ। मैं भी महल की दीवारों के बीच आने पर अपने आपको शेष संसार से अलग कर चुकी थी। न मुझे कुछ याद था—और न याद करने की घड़ियों का अवकाश ही। सिर्फ मेरी आंखों के सामने उनकी छवि थी–वही मेरा संसार था। मैं भूल गई थी कि रसकपूर तेरी गन्ध क्षणिक है। वे मेरी देह पर अपनी देह का भार झुकाये मुझे अपलक नयनों से देखे जा रहे थे तथा मेरी नंगी पीठ की मांसल देह पर अंगुलियों से काम लेख लिख रहे थे—जैसे कोई प्रेमी नलिनी पत्र पर पलाशी कलम से प्रेम कविता लिख रहा हो। उन्होंने मेरे रेशमी बालों के मध्य अंगुलि से लिखते हुए कहा था— कुछ भी न मांगोगी ?'

– अन्नदाता ! मुझे आपके सिवा कुछ भी न चाहिये।'

–'अच्छा यह बताओ यह महल पसन्द आया ?"

–'जहां आप रहेंगे—वही मेरे लिए स्वर्ग है।"

–'तुम्हारा जी यहाँ लग सकेगा ?"

– नहीं।"

– क्यों ?'

–'यह दासी तो आपके कदमों में ही रहना चाहेगी।"

– वे ठहाका मार कर हँस पड़े और मैं उस हँसी से भयभीत हो गई। अपने भविष्य को सोचने लगी। क्या आशंका सच होकर रहेगी ?"

–वे हँसे जा रहे थे।

–और मेरी आँखों में आँसू जमा होने लगे।

– रोती हो ?

– नहीं तो! मैंने अपने आपको स्वस्थ करते हुए कहा।"

– हमारे साथ युद्ध में चल सकोगी ?'

–'मैं अंगारों पर भी चलने को सदा प्रस्तुत रहूँगी।"

–'रस! हमारी जिन्दगी तलवार की धार है।'

–'मैं पानी बन कर रहूँगी।"

–'आज तुम पर बेहद खुश हैं।

– मेरे मालिक! कहते हुए मैंने उनके कदम पकड़ लिये थे।

–'रूपसी! तुम्हारी यह जगह नहीं है हमारा हृदय है।

–'मुझे यहीं रहने दो मेरे देवता!

–'यह सब कुछ तुम्हारा है जहाँ चाहो वहीं रहो!'

– अब मेरी कोई चाह नहीं रही है।"

– हाँ, यह तो बताओ, तुम क्या माँग रही थी ?

–"अपना तो अपना ही है मेरे मालिक! मैं तो आप से सिर्फ ।"

– रुक क्यों गई ?'

– मेरे मेहरबाँ! मेरी मुहब्बत बड़ी नाजुक है कभी सदमा न लगने पाये— इससे अधिक कुछ नहीं चाहिए मुझे और कुछ अब तमन्ना है।'

—'रस! हम तुमको जीवन में भुला कर भी कभी नहीं भुला सकेंगे। तुम हमारी छाया हो! हमेशा साथ की तरह हमारे साथ रहोगी, तुम विश्वास करो।

हमारे हृदय मे श्वास की तरह महकती रहोगी।' —कहते हुए मेरे दिल के राजा ने मेरे गम अधरो पर अपने मोती से दांत रख दिये थ। मेरी आँखों मे मोती ढलक पड़े। जब महाराजा के होठो पर मेरे समुद्री मोती बिखरने लगे तो उन्होंने अपने हाथ से मेरी आँखो के मोती चुगते हुए कहा 'फिर ये आसू ?"

—'नहीं अन्नदाता! यह तो खुशी की बाढ है।"

— रस! हम रोने से बहुत चिढते हैं। हम इन आँसुओं से बहुत बडी शिकायत है हम जिन्दगी म हार कर भी नहीं राये हैं जो कोई हमारे सामने रोता है हम उसकी शक्ल देखना भी पसन्द नही करते।

— मेरे हुजूर! मुझे माफ करें फिर कभी आपको शिकायत न होगी!

— तुम ही बताओ! राजा के सामने आँख से आसू! यह हमारी सफलता की चुनौती है हम इसे कभी बदास्त नही कर सकते!'

— यह माला फिर कभी न बिखरेगी।

—उस क्षण मेरे मालिक मुझ से बेहद खुश थे।

—महाराजा मेरी खुशी के साझीदार बन गये। वह घडी मेरे जीवन की स्वर्णिम घडी थी मैं सुहागिन थी और मेरे सपने सच हो चले। यह झूठ है कि सपने कभी सच नही होते! मैंने जिन स्वप्नो का जाल बुना था—उसे साकार कर के दिखाया। उस दिन तवायफ की जिन्दगी का रूप ही बदल गया। एक नर्तकी ने चोला बदल लिया, कोठे की दीवारों पर आबरू के पर्दे गिरा दिये। जिस जिन्दगी म मुहब्बत के लिए तिल भर भी जगह न थी वह जिन्दगी प्रेम के सागर म तिरने लगी। यह तो मैं आप से अर्ज कर ही चुकी हू कि रसकपूर ने कभी किसी से मुहब्बत नही की यदि किसी के दिल मे मेरे नाम की कोई आग भी पैदा हुई तो मैंने कोई तवज्जुह नही दी और वह प्यार का आशियाना खुद ही अपनी आग में जल कर तबाह हो गया—आखिर खुद ही अपने दिल की होली जला कर रह गया —उसके अफसानों का जनाजा मेरी नजरों के सामने ही दफना दिया गया। मैंने उसकी कब्र की ओर भी नजर उठा कर नहीं देखी लेकिन आज मैंने खुद अपने दिल म प्रेम का दीपक जलाया था। मुझे किसी से प्यार हुआ था।

—वे भी मुझे हृदय से प्यार करने लगे—मैं उनके लिए किसी नूरजहां से कम न थी—और वे मेरे लिए शहंशाह थे। वह पहला दिन ही कहा जायगा—जब किसी मर्द की गर्म देह पर अपने नाजनीन जिस्म को झुकाये मैंने प्यार की परिभाषा

पड़ी । प्यार के प्रन को समझने पर मिल म कसिम पैदा हुई जिसे मैं आज तक सहेज हुई हूँ । यदि प्यार की आग म न जलकर वासना के समुन्दर की सतह पर ही तिरती रहती तो आज यह दर्द न जीना पड़ता और प्यार की आग को सहेजे शमा भी न जलती । परवाना—किसी और शमा पर दीवाना हो गया लेकिन यह शमा न चिराग रोशन ही कर सकी और न बुझ सकी । हाय री किस्मत ! लेकिन अभी वह किस्मती की क्या चर्चा करना—अभी तो उन मीठी यादों को फुहारों म फिर स नहा लूँ ।

—हाँ तो मैं आपसे जिक्र कर रही थी कि वह दिन मेरी जिन्दगी के लिए एक नई शुरुआत थी । हम एक-दूसरे के आलिंगन मे बंधे दिन को ही चाँद तारे छिटका रहे थे । कभी मेरे बलम मुझे अपने हाथ से पिलाते तो कभी मैं अपने देवता के अधरों से भरलाया इमरत पीती । न जाने समय क्यों नहीं ठहर पा रहा था—जबकि मेरे जिन्दगार ठहरे हुए थे । दिन आँखों की पलकों पर ही ढल गया—उस क्षण मुझे ऐसा लगा कि किसी जलनफरोश सौत ने डाह के मारे आकाश म लटकते हुए सूरज की रेशमी रस्सी को अपनी तीखी नजरों से काट डाला—और मूर्छित सा सूरज धड़ाम कर समुद्र की गोद में जा गिरा ता फिर उठने की हिम्मत न कर सका । स या उसे उठा कर अपने घर न गई ।

—साँझ ने रंगमहल में पर्दा खैंच दिया । सितार वादकों के साथ चारण न महाराज के प्रशस्ति गीत गाते हुए कहा—'आप दुश्मनों की रमणियों के आँसों से मोती लुटा देते हैं उनकी मांग से सिन्दूरी छीन कर साँझ को भीख मे दान करने वाले यशस्वी हैं, आपका कीर्ति हंस आकाश में उड़ता हुआ इन्द्र की अमरावती म पहुँच कर आपके वैभव की गाथा सुनाता रहता है । आप इस धरती के सम्राट हैं आप ही के कारण यह वीरभोग्या कहलाती है ।"

— तभी द्वारपाल ने सिर झुका कर उनसे निवेदन किया—"अन्नदाता की चाकरी म शहर के लोग नजराना लिए दर्शन की प्रतीक्षा कर रहे हैं । यदि अन्नदाता का हुक्म हो तो ।

— कल सुबह के लिए खबर करदो । '

—' वनवती लौट गई ।"

—लेकिन अन्नदाता की जी हुजूरी मे दासियाँ खड़ी हुई और महाराजा स्नान घर की ओर एक युवती के कन्धे पर हाथ रखते हुए आगे बढ़ गये ।

—मुझे अपने महल में लौट कर आना था। यद्यपि मैं उनसे एक क्षण के लिए भी अलग नहीं होना चाहती थी किन्तु राजमहल का दस्तूर ही ऐसा है कि सामान्य आदमियों की तरह जिन्दगी नहीं जी सकते। काश! मेरे मालिक कोई मामूली आत्मा होते तो मैं उनके साथ छाया की तरह रहती। मुझे उनसे विदा लेनी ही पड़ी। मैं बांदियों से घिरी अपने महल की ओर लौट रही थी लेकिन मेरा मन उन्हीं की सूरत से अटका हुआ था। विकल हिरणी की तरह उनकी नजरों से टकटकी बाँधे चली आई।

—मैं महल में लौट आई। यद्यपि वहाँ भी अकेली न थी–दासियों बांदियों और बाइयों का हुजूम था। मेला सा जुड़ जाता। मुझे वह भीड़ पसंद न थी लेकिन उन सभी के अलग अलग काम थे–और वे सभी अपने अपने काम के प्रति सावधान थीं। कोई नहलाती कोई मेरा बदन पोंछती कोई हवा करती कोई बीड़ा रचाती कोई झारी लिए खड़ी रहती कोई चोटी में फूल गूँथती तो कोई महावर लगाती। किसी के हाथ में मोरपंख तो किसी के हाथ में चवर किसी के हाथ में आभूषण तो कोई परिधान लिए खड़ी रहती। किसी के हाथ में फलों की तश्तरी तो किसी तश्तरी में मेवे की कतरनें। वे सभी गूंगी बुत की तरह खड़ी रहतीं न हिलती न डुलती। निर्जीव सी देह मेरे चारों ओर था।

—वह वातावरण मुझे बेजान सा लगता और उन दर्दीली तसवीरों पर रहम आने लगता। लेकिन महल के कायदों को तोड़ना भी नामुमकिन है। बड़े घर के बड़े ही दस्तूर होते हैं और बड़ा बनने के लिए उन्हीं कायदों का खयाल रखना जरूरी है वर्ना शान पर दाग लगने का डर बना रहता है।

—उन दासियों में रतना भी थी। रतना से मेरा विशेष लगाव हो गया था। उसके सहज व्यवहार से मेरे मन में आत्मीय भाव जाग उठे और अपनेपन का एहसास होने लगा। आदमी अपनी जिन्दगी में एक जगह तो ऐसी बनायेगा ही कि जहाँ बैठकर मन की परतें खोल सके। मैं पलंग पर लेट गई और अपने थाकित बदन को आराम देने लगी। मैंने रतना से बैठने का इशारा किया–वह भी चौकी पर बैठ कर मेरे तालुओं को सहलाने लगी। उसने अपने स्मितहास को दबाते हुए कहा बेगम साहिबा थक गई होंगी?

— रतना! तुमने भी कभी किसी से प्यार किया है?

— वह मेरे सवाल को सुन कर अवाक् रह गई।

— और सच भी है कि उस नगरी में प्रेम का क्या अस्तित्व? वहाँ प्रेम की आग एक ओर जलती है।

— भगी ! पत्थर क्या हो गई ? कुछ तो जवाब दे ! क्या तुमसे किसी ने मुहब्बत नहीं की ?

—'उसने सिर झुका कर अपने होठो पर हल्की सी रेखा खींच दी।

— मत बताओ न तुमने भी कभी इस दर्द को जिया है ?"

— उसने पलकें उठा कर मेरी ओर देखा और फिर गहरी श्वांस के साथ अंधेरे में डूबने लगी।'

—'भगी ! क्या हो गया ?"

— आपने जख्म को जो कुरेद दिया।'

— कैसा दर्द ?"

—'आपने सवाल ही ऐसा पूछ लिया।"

— क्या कोई जबाव नहीं है ?"

—'बहुत लम्बी दास्तान है।"

— तुमने भी प्रेम किया है ?'

— आज भी आग मे जल रहा हू।"

— और वह ?"

— उसकी मैं क्या जानू ?'

— क्या तुम तेरा खाविंद प्यार नही करता ? '

— मालकिन ! मेरा आदमी कब मेरी परख कर सका ? उसके साथ माँ बाप ने बाध दिया और मैं इस घर म चली आई फिर उसे जी हुजूरी से फुरसत ही कहाँ है ?

— क्या कोई गैर आदमी है ? '

— हूँ।'

— कौन है ?

— उसने चारो ओर देखा और फिर धीरे से कहा—'किसी से जिक्र न कीजियेगा।'

— मैं क्यों कहने लगी ? '

—'एक खबरनवीस है।"

— बहुत सुन्दर है।

— मैं उसे बहुत चाहती हूँ।"

–"और वह ?"

– दूर भागता रहता है।

–"क्यों ?'

– जाहिर होने के डर से।'

–"कमजोर आदमी है प्यार की जलन जी कर भी डरता है।

–'मैं उसे लाख समझाती हूँ उससे कई बार कह दिया कि यहाँ किसी तरह का डर नहीं है।

– यह कैसे ?

—यहाँ प्यास का समुन्दर जल रहा है। यहाँ की हर औरत के जिस्म जिस्म मे प्यास की आग जल रही है। जलहीन मछली की तरह हर सुन्दरी तड़फ रही हैं। यहाँ कौन ऐसी औरत होगी जिसके दिल मे अरमानों क तूफान न घिर रहे हों और अन्धी वासना की आँधी सपाट के साथ देह को अग्नि कम्पन न दे रही हो। क्या बताऊँ मालकिन! मैं ही वासना की भूखी और प्यार की प्यासी नहीं हूँ – यहा की हर औरत अपने जिस्म मे दहकती आग को सुलगाये आदमी की इन्तजार म उम्र क दिन खो रही है। कौन यहाँ पाक-दामन है ? हर दामन पर बेहिसाब दाग हैं। यहाँ किसके दिल मे प्यार नहीं है ? कौन ऐसी है–जो किसी से न बँधी हुई हो ? हर कोई चोरी छिपे नौकर चाकरों की जूँठन को शरीर पर चन्दन की तरह लिपेट लेना चाहती है–लेकिन उसके लिए भी भारी कीमत चुकानी पडती है। कीचड को चन्दन बनाना चाहती है लेकिन न कीचड ही सिर पर चढना चाहता है और न यहाँ की हवा म ही वह दिलेरी–जो इस महक को हमेशा जी सके। एक-दूसरे के राज को हर कोई जानती है–लेकिन फिर भी अनजान बनी राज को छिपाये रहती हैं–कहती हुए रतना क मुँह पर उदासी घिर आई और उसके मुँह का जायजा कडवाहट से भर गया।

– 'रतना! मैं भी प्यार करन लगी हू ।

– किस स ?

– तरे अन्नदाता से। —मैंने अहं के साथ कहा।

– वह अट्टहास करती हुई चीख पड़ी — मालकिन! क्यों सच को आग म धकेल रही हो ?

– तुम मर पाक इरादा की मखौल उडा रही हो ? –मैंने खीजते हुए कहा।

भी इस नाम से डरते हैं, आप क्या गुनाह करने जा रही हैं ?'

—'मैं सच्चे दिल से प्यार करने लगी हूँ।'

—'दिल ? दिल में दर्द के सिवा कोई नहीं रह सकता। दिल और दर्द का दामन—चोली का साथ है। प्यार [और आपके दिल में प्यार !] यहाँ के इतिहास में ही यह शब्द नहीं है। मैं कैसे मानलूँ कि यहाँ प्यार का जन्म भी हो सकता है। इस शब्द को सुनते सुनते रतना पत्थर की बन चुकी है कान बहरे हो चले, आँखें अन्धी हो गईं। यहाँ हर आने वाली कमसिन प्यार का पौधा जन्म देती है—लेकिन इस पौधे की जहरीली गंध में घुटकर दम तोड़ देती है। मैंने यह शब्द आपसे पहिली बार नहीं सुना है हर आने वाली सुन्दरी प्यार प्यार चीखती है लेकिन यह पलंग इस बात का गवाह है कि प्यार की आग में जलती हुई लता भुनस जाता है और हवा में कोई फर्क ही नहीं पड़ता।

- मैं फिर शंकाओं के चौराहे पर खड़ी कर दी गई। मेरे मन की कोठरी में फिर भय आ बैठा, मेरा स्वयं का विश्वास लंगड़ा कर चलने लगा, उस घड़ी मैं अपने आपको बहुतेरा समझाती रही लेकिन हर आहट धोखा देती, फिर भी मैंने हिम्मत न हारी और रतना से दृढ़ विश्वास के स्वर में कहा— मैं इतिहास बदल दूँगी रतना !"

— जिन्दगी भर गुलामी करती रहूँगी इन कदमों की —"उसने मेरे कदमों पर हाथ रखते हुए कहा था।'

—'रतना ! वह औरत ही क्या ? जो अपने शौहर या अपने महबूब को वश में न करले। आखिर मुझमें ऐसी क्या कमी है ? अन्नदाता को मेरे दिल की डोर से बंधना होगा। अन्नदाता भी आखिर आदमी ही है—और आदमी के सीने में भी दिल होता है किसी न किसी से तो बंध कर ही रहता है। मैं अपने अन्नदाता को दिल से प्यार करूँगी, अपने देवता के कदमों को हर घड़ी पूजती रहूँगी, उनकी हर कामना के लिए उनकी देहरी पर फूल की तरह गंध भरती रहूँगी —तब भी क्या महाराज मुझसे दूर चले जायेंगे ? रतना ! मैं भी मिट्टी से नहीं बनी हूँ या चौखट में जड़ी खूबसूरत तस्वीर नहीं हूँ। रसकपूर अपने इरादे लेकर आई है

ग्रोर ग्रपने इरादों पर कामयाबी हासिल करना ही मेरी जिन्दगी है मैं प्यार कर के दिखाऊंगी।

—'बुरा न मानिये मालकिन! मैं उस दिन बहुत खुश हूँगी —जिस दिन ग्राप नजर के दिल पर राज करने लगेंगी। मैं ग्रापके दिल का खिलौना नहीं तोड़ना चाहती लेकिन जो बात होठों तक ग्रा ही गई उसे कहने के लिए तड़फड़ा रही हूँ। यह सच है कि ग्रन्नदाता भी एक ग्रादमी ही हैं-लेकिन ये ग्रलग मिट्टी से बने हैं, ग्रलग ही हवा में जिये हैं। ये उन ग्रादमियों में से हैं—जो ग्रपनी ब्याहता के साथ भी बंध कर नहीं रह सकते। हर साल जिन्होंने नया ब्याह रचाया ग्रौर ग्राने वाली हर राजकुमारी इन महलों में महारानी कहलाती रही लेकिन कभी उनके दिल का हाल पूछ कर देखो कि—वे महारानियाँ इस जिन्दगी से कितनी खुश हैं? उनके कलेजे पर कितने घाव हैं? फिर भी दर्द जीती हुई मुस्कानें बेचना ग्रादत सी बन गई है। ग्राज उन्हें कोई शिकायत नहीं है। महारानी बनना ही जिन्दगी का सुख रह गया है इसे ही वे खूबसूरत तस्वीर मानती हैं। वे खुद महाराजा की हर खुशी में शामिल होकर दिली खुशी जाहिर करती हैं लेकिन उस खुशी के नीचे ग्राँसुग्रों का जलता हुग्रा समुन्दर है—जिसे कोई नहीं देख पाता है। ग्रब ग्राप ही बताईये कि ऐसे मन चले निष्ठुर भंवरे किसी एक कलि के साथ जिन्दगी भर बंध कर रह सकेंगे?

—'हाँ रतना! मैं ऐसा ही करके दिखाऊंगी।'

'बांध लेंगी!

—वे खुद बंधे चले ग्रायेंगे।

— तब तो ग्राप किस्मत लेकर ग्राई हैं। ग्राप इस भूतों की नगरी में देवी की तरह पूजी जायेंगी क्या ग्रापने कोई मंत्र पढ़ दिया है या किसी फकीर से ताबीज लेकर ग्राई हैं? या किसी से जादू करवायेंगी?

— नहीं रे! मैं तो खुद जादूगरनी बन कर दिखाऊँगी। तू देख, मेरी ग्राँखों में क्या कम जादू है? यह ग्रसर नहीं करेगा क्या?"—मैंने विश्वास के साथ ग्रपने —ग्रापको समझाते हुए कहा।

—ग्रभी साँझ ढली भी न थी कि दासियों के हुजूम के साथ वहाँ रहने वाली ग्रौरतों के झुंड़ के झुंड भी उलट ग्राये थे। सभी मेरी ग्रोर ग्रचरज भरी निगाहों से देख रही थीं। कुछ के मुख पर हास के फूल ग्रौर कुछ की पलकों पर दर्द की रेखायें। एक ने भर वदन पर चिकोटी भरते हुए पूछ ही लिया '—क्या बाईजी, देख लिया सुरग?"

–मैंने उससे कुछ भी न कहा अपितु उस जिस्म को गौर से देखने लगी–चिकोटी के कारण जहाँ खून ठहर गया था ।

—'तभी दूसरी औरत ने आह भरते हुए कहा– अभी तो एक ही दिन बीता है दो चार दिन की तो चादनी हैं फिर वही लम्बी अंधियारी रातों का सन्नाटा ! क्यों सता रही हो बिचारी को ।'

–मैंने उसकी ओर क्रोध भरी निगाहों से देखा—लेकिन वह कुछ भी न समझी और वह हँस हँस कर मुझे चिढाती रही ।

– अरी ! अभी तो सुरंग में पधारी ही हैं यहाँ के रीति रिवाज से इसका क्या वास्ता ? – पीछे खड़ी एक बूढ़ी औरत ने फूहड़ हँसी के साथ कहा ।"

– तभी तो मुँह फुलाये बैठी है जैसे हमारी महारानी हो और हम इसकी दासियाँ ।"

– तुम अपनी भी देखो ! तुम भी तो इसी तरह रंग करती थी । गुलाब बाई ! बहुत जल्दी भूल गई अपना मिजाज ! यह भी तो रूठेगी जिद करेगी राज करेगी दो-चार दिन ? तुम्हें क्यों जलन हो रही है ? एक ओर खड़ी सूतन कुर्ती पहिने पान चबाती हुई एक औरत ने कहा ।

–सभी खिलखिलाकर हँस पड़ी ।

–मैं चुपचाप उसकी ओर देख रही थी ।

—मैं उस भीड़ से बेहद घबरा गई । उनके ताने तीर की तरह मेरे कलेजे पर चुभने लगे । वे जहरीले बाण मेरे अस्तित्व को डगमगाने लगे । मैं उन सभी को कह देना चाहती थी कि कुछ सब्र करो नतीजा सभी के सामने आयेगा । लेकिन उस घड़ी मैं इतनी घबरा गई थी कि उन सभी को विदा कर अकेले में अपनी घुटन जीना चाहती थी । उस भीड़ को चीरती हुई एक दासी भागती हुई आई और अपनी तेज श्वासों के साथ ही उसने कहा— 'बधाई बाईजी बधाई ! '

—सभी औरतें अचरज के साथ उस दासी की ओर देखने लगी ।

—दासी आगे कुछ न कह सकी ।

—एक ने पूछा— अरी ! इसे छुटकारा मिल गया क्या ?"

—दासी ने उन सभी की ओर उपेक्षा दृष्टि से देखते हुए कहा—महल को फूलों से सजाओ ! चाँद तारे जगमगा दो ! महक भर दो यहाँ की हवा में ।'

— भ्री ! हो क्या गया ?

—महल म चान्द निकलेगा।

— 'कुछ कह भी !' रतना ने सवाल किया।

– उसने मेरे आग सिर भुका कर कहा— आज रात अन्नदाता आपके महल म पधारेंगे।

—उसके स्वर म उल्लास था।

लेकिन उस भीड पर वज्र गिर गया।

वे औरतें बुझे चिराग की तरह धुँवा म घुटने लगी एक पल म हँसी उनका साया छोड गइ और मुह स्याह हो चले। वे अपना थूँक निगलती हुई एक-दूसरे के भाव पढने लगी उनके पास कोई शब्द न था— अपितु आश्चय म पड कर भारी भर कम शिलायें बन गई थी।

—मैंने उस घडी को हाथ से न जाने दिया—उस भीड के सामने ही गम्भीर रहते हुए भी हस पडी—और वह हँसी उनके सीने पर बादल की गडगडाहट थी। मैंने अपने हाथ से सोने का कडा उतार कर बान्दी को देते हुए कहा – यह तुम्हारा इनाम !

— उसने आगे बढकर सोने के कडे को हृदय से लगाकर अपने आँचल मे छिपाते हुए कहा— मालिकन ! आप अन्नदाता के दिल पर बरसो राज करें ! आपको किसी की भी नजर न लगे !'

—भीड की दृष्टि म अन्तर आ गया और स्वर का रुख भी बदल गया। उनम से एक ने आगे बढकर कहा— किस्मत पर घमड मत कर यहाँ क उसूल उल्टे है।'

–मैं मुस्करा कर रह गई।

—एक एक करके वे सभी महल से खिसकने लगी। मैं उनकी गति देख रही थी—पाँव भारी हो चले थ और कदम उठाने पर भी नही उठ पा रहे थे।

— मैं अकेली थी और रतना मेरी किस्मत पर गव करने लगी थी। उसने अपनी नम कलाईयो से मेरे बदन पर भाँवरे डालते हुए अज किया था—'वाकई आपने तो जादू ही कर दिखाया वर्ना आज तक भी इस महल की एक भी रात सुहागिन न हुई। अन्नदाता ने कभी इस ओर कदम भी नहीं रखा था।

— मैं अपनी विजय पर मोरनी की तरह झूम उठी और शीशे के सामने खडी होकर अपने आप से बतियाती हुई कहने लगी—नाच आज जी भर कर नाच ! आसमां को अपनी बाहुओ मे भरले ! ९गो म बिजलिया बाँध कर उनके दिल मे अपने रूप का खजाना भर दे कि वे जिन्दगी भर कभी तुमसे दूर न हो सकें। मैं अपने मह बब पर नाज करने लगी उनकी नजरों से मुझे प्यार के सावन झरते हुए दिखाई दिये उनका दिल प्यार का तलाव दिखाई दिया—मैं उन पर झूम उठी और उनके बदन मे लता की तरह लिपट जाने को बेचन हो उठी।

—मैं दीवानी हो गई। उनकी एक नजर पर अपने आप को लुटा दिया था, मेरे सनम तक को खबर भी न थी। मुझे मौसम म इन्द्र धनुषी रग उभरते दिखाई दने लगे। फूलो का रग मेरी आखो म उन्माद भरने लगा। मैं अपने आप से ही बतिया रही थी कि—रतना का स्वर मुझे छेड गया—'कहीं खुशी ही खुशी म साँझ न ढल जाये ! महाराज पधार आयें और आप यू ही खडी रह। मैंने अपने खुले गेसूओ को झकझोरा और अपने प्रतिबिम्ब की ओर आँख स इशारा करते हुए रतना की ओर देखा। रतना के पीछे अगिन बाँदियाँ सिर झुकाये खडी थी। मुझे एहसास होने लगा कि मैं अपने इरादा म कामयाब होकर रहूँगी।

—मुझे प्रात काल की तरह फिर नहान घर की ओर ले जाया गया। उस समय मैंने खुद स्नान किया। सुवासित जल स भरी विशाल तामडी मे अपनी देह को डुबो दिया—जसे चन्दनिया झील म कोई हसिनी अपने-आपको डुबो दे ! शीतल सुवासित जल का स्पर्श मेरे रोम राम म ताजगी भर रहा था। उस दिन मने अपनी हिमानी देह पर फिरोजी लहगा और पालसाई चुनरिया पहिनी। ओढनी पर मोती जडे हुए थ। मानो फानसे की भरी टहनी पर तारे खिलखिला रहे हो। बाला को धूप की धुँवा से सुखाया लेकिन बाँधा नहीं। खुले गेसूओ के बीच गुलाब का फूल अपने हाथो से टाँका। हाथ म कुमुद लिए उनकी इन्तजार करने लगी। मरा जी बहलाने के लिए बाँदियाँ सितार पर मधुर धुन छेडती हुई मेरे दिल के तारो को छेड रही थीं।

—आखिर वह घडी भी आ गई—जिसका मुझे बेसब्री से इन्तजार था। जब मुझ सुहागिन का अमरदीप आलोक बिखराता हुआ मेरे महल की ओर आया। एक बाँदी—जो कि अपनी कमर पर लाल दुपट्टा बाँधे थी—उसने सिर झुकाकर अर्ज किया था— रियासत के बादशाह, अन्नदाता तशरीफ ला रहे हैं ! सावधान! महाराज पधार रहे हैं !"

—यद्यपि मैं उनसे दो बार मिल चुकी थी, उनकी बाहुओं में झूलते हुए श्वांस लिये थे। वे मेरे लिए अपरिचित न थे सम्बन्ध जुड़ चुका था—फिर भी न जाने क्यों उस रात के उन क्षणों में मेरा मन तो मनमान की तरह घबराने लगा।

—वे आये मैं भी उनके अमित-सौन्दर्य पर मुग्ध थी। सफेद—चूड़ीदार पायजामा—जिस पर जरी का अचकन—जो घुटनों तक झूल रही थी—जिसकी हर घुंडी पुखराज से जड़ी हुई थी। गले में पन्ने का हार—जिसके नीचे मोतियों की माला—माला के बीच चमकता हुआ हीरा—जैसे तारों की महफिल में चाँद की रोशनी। गले में पचमणियां एक बंधा हुआ था—जैसे देह के साथ ही जन्म लिया हो। कसूमल रंग की जरी का पेच—जिस पर मिथुरंगिछी की भांति रत्नों से जगमगाती कलंगी उनके सरमौर होने का सबूत दे रही थी। उस क्षण उनकी देह का गठन उभर कर राजकुमार होने की बात दुहरा रहा था। कोई नहीं कह सकता था कि उनकी उम्र जवानी के दूसरे कदम पर हो। उनके चेहरे पर अनूप तेज बिखरा हुआ था—हाथ घुटनों से भी नीचे तक झूल रहे थे—उन हाथों में हीरों से जड़े हुए कड़े थे तथा अंगुलियाँ अंगुठियों से शोभित थी।

—उनके आगमन पर मैंने अपने हाथ से नील-गुलाब का गजरा पहिनाकर स्वागत किया था—तथा अपनी अंगुलियों में उलझे कुमुद को आगे बढ़ा दिया—मेरी कलाई थाम कर कुमुद को अपने अधर तक ले गये तथा धीमे से नयन मूंद कर उसे चूम लिया। उस कुमुद को स्वीकार करते हुए उसका सौरभ से उन्होंने मेरे बदन पर स्पन्दनों से भरा गीत लिख दिया।

—मेरा हाथ थाम हुए वे गलीचे पर मसनद का सहारा लेकर विराज गये। स्वर्णथाल में तबक लगे सुवासित पान के बीड़े थे-मैंने अपनी गुलाबी अंजुरी में रख कर अन्नदाता के सामने पेश किये। उन्होंने मेरी ओर इशारा किया लेकिन मैं शरमा कर रह गई। वे क्षण मेरे लिए सौभाग्यशाली थे—मेरा काजल दर्प से बोझिल हो चला और आंखों में उल्लास के फूल खिलखिला कर मुस्कान बिखेरने लगे।

—सितार का स्वर प्राणों में घुलने लगा-मन धुन पर बेसुध था-श्यामें राग छेड़ने को विकल। तभी सकेत पाकर एक वादिका ने तबले का तन गुदगुदाया और मेरे घुंघरू झनझना उठे। मैं अपनी उमंग लिए उठी और मेरे हमदम को तसलीम कहती हुई महल में रोशनी की तरह बिखर गई। मुझे आज भी याद है कि मैंने उस दिन हृदय से नृत्य किया था—मानों मैं नहीं नाच रही थी बल्कि मेरा दिल अपनी उमंगों के घुंघरुओं पर नाच रहा हो।

—नृत्य करते हुए मैंने महाराजा को शराब के जाम पिलाये। मैं उनकी सकी थी—और प्याला मेरे हाथ में, लेकिन शराब आँखों से टपक रही थी। वे बार बार उन्मादित हो उठते—और मुझे अपनी बाहुओं में सिमेट लेने को विकल हो जाते।

—उनका मादक स्पर्श पाकर मैं आनन्दित हो उठती लेकिन विकल न हो पाई—गति को विराम न दे सकी। मैंने प्याला उनके हाथ में थमा दिया और झूम उठा अपनी मदमस्त गति पर। साजिन्दा दासियाँ थक कर बदल गई लेकिन मैं नहीं थक पाई मेरे कदमों का उन्माद न ढल सका—अपितु तनाव बढ़ना ही चला गया। ज्यों ज्यों घुंघरुओं की झंकार तीव्र गति से झनझनाती—त्यों त्यों कदम अधिक से अधिक कम्पन जीते और बन्न लता की तरह भ्रगड़ाइ भरता हुआ उन पर झूमता।

—मैं लहरों की तरह समुद्र पर नृत्य करती रही—न रुक पाई। वे स्वयं उठकर आये—और अपनी बाहुओं में उठाकर मुझे रोक पाये उन्होंने उस घड़ी फरमाया था—'रमा आज हम तुम पर बहुत प्रसन्न हैं रूप ही नहीं कला भी पाई है दोनों एक दूसरे से बढ़कर हैं। तुम रसवती ही नहीं गुणवती और कलावती भी हो। लेकिन तुमको देने के लिए आज हमारे पास अपना कुछ भी नहीं है। हम राजा हैं, इस रियासत पर राज करते हैं—लेकिन आज से इस महाराजा पर तुम राज करोगी। तुम हमारे ऊपर हुकूमत करोगी और हम तुम्हारे इशारे पर तुम्हारी बंदगी करेंगे। कहो ! मंजूर है हमारा यह छोटा सा नजराना।"—कहते हुए उन्होंने मेरी कमर पर अपने दृढ़ हाथों का कसाव बढ़ा दिया था—साथ ही मेरी कलाईयों का कसाव भी कसने लगा था।

—वह दिन मेरे लिए परिवर्तन-पूर्ण था, किन्तु रियासत के लिए सिरदर्द और जनानी ड्योढ़ी के लिए हंगामा !

◻ सात

—दिन बदलते हैं तो आंख झपकते ही। रसकपूर चर्चा का विषय बन गई। जनानी ड्योढी से हवा बहने लगी और सारे शहर म घूम आई। गली गली मुहल्ले मुहल्ले के आम आदमी की जुबान पर मेरा नाम तीर की तरह चढ गया। हर दरबारी की आंख म मेरी सूरत समा गई और मेरी उनकी प्रेम कहानी हर सुबह के लिए मगलाचरण बन गई। अब मैं कोई मामूली औरत न थी बहुत बडी हो गइ थी, एक रात ने मुझे आसमा पर बिठा दिया मैंने अपने-आपम बडप्पन का अनुभव किया। मेरा महल हुजूर के कदमो से गन्धायित होने लगा रातें सुहागिन बन गई और मैं उनके दिल पर राज करने लगी।

—मेरी खिदमत म बडे बडे आदमी नजराना लाने लगे। मेरे दशन के लिए भीड उमडने लगी—उनकी ओर से कोइ बदिश न थी। मेरे लिए अन्य रानियो की तरह न कोई प्रतिबध और न पर्दे की जरूरत ही। मैं तो उनके साथ घूमने, फिरने दरबार मे आने जाने तथा हर किसी से मिलन के लिए आजाद थी—जबकि उनकी महारानिया, ब्याहता रानिया पर्दे से बाहर भी नही झांक पाती हैं—उनका पर्दा उठना भी गुनाह है। यह सच है कि मेरी महत्वाकाक्षाओ ने उन पर विजय प्राप्त की लेकिन वे भी मुझे पाकर बेहद खुश थ—अपने आपको खुशनसीब समझते-

सब कुछ भुला दिया था। जनानी ड्योढ़ी ने कबूल कर लिया था कि रसकपूर कोई जादूगरनी है। अब वे मुझसे आँख मिलाती हुई भी कतराती—बोलन की बात तो बहुत दूर थी। एक पछतावा जो रही थी—या जलन म जलती हुई मेरी नाकाम याबी के खातिर अल्ला ताला से दुआयें करती थी ?

—मैं कुछ दिन ही आमेर के महलों मे रही लेकिन जब तक रही—व मेरे साथ रहे, दरबार तक उन्हीं महलों में लगता छोटे-बड़े मुसाहिब महल के बाहर खड़े रहते—मुझे उनकी परवाह न थी। रियासत के सारे काम काज वहीं होते छोटे बड़े राजा, सेठ-साहूकार, जागीरदार आदि सभी उनसे वहीं भेंट करते। अक्सर मैं उनके साथ रहती।

—वे मुझे अपने पास मे रखना चाहते-और मैं भी उनसे दूर रहने पर गमगीन सी हो जाती मौसम का नजारा भी फीका लगने लगता। जब मैं उनके पास मौजूद रहती तो जमाने की आँख म काँटे सा चुभती रहती। मेरी दखल-दाजी या मौजूदगी के कारण ही रियासत भर मे हंगामा खड़ा होगा-राजमहल मे तूफान उलट आया और दरबारी दो हिस्सों म बँट गये। जो लोग पहिले स ही मुसाहिब से नाराज थ-उनके लिए मैं मेहरबान थी जो कल तक हार कर बैठ गये थे वे सभी मेरे साथ थे। जिनके लिए मेरी मौजूदगी मुसीबत बन गई-वे सभी मेरे दुश्मन बन बैठे और राजघराने म राजनीति के दाव पेच खेलने लगे। उनकी जनानी ड्योढ़ी में दखल थी-महारानियों की मेहर थी-उनके इशारों पर वे आये दिन मुखालफत खड़ी करने लगे। इस तरह बिना किसी वजह क ही मैं दोस्त और दुश्मनों म घिर गई। शहर की जनानी ड्योढ़ी अन्दरूनी राजनीति स घिर गई—इसकी खबर अन्नदाता के खास खवासवाल ने आकर दी तो यह लाजिमी हो गया कि अन्नदाता आमेर के महल छोड़ कर चन्द्रमहल की ओर प्रस्थान करें। उन्होंने मुझसे कहा था—'हम शहर जाना होगा।"

—'क्या मुझे यहीं तरसना होगा ?"

— नहीं।"

—'मैं भी हुजूर का साथ प्राप्त कर सकूँगी।

—'रस! कोई जगह ऐसी नहीं होगी-जहाँ तुम हमसे दूर रह सको।"

—'मैं निहाल हो गई थी।

—"महाराज के लवाजमे के साथ मेरी भी पालकी थी।"

—जब मैं उनके साथ जयपुर के राजमहल म आई—तो वहाँ के वातावरण

म हलचल मच गई समुन्दर म ज्वार आ गया हो ! जसे मैं कोई अनोखी औरत हूँ—उनके लिए मुसीबत बन कर आ गई हूँ। हर नजर मुझे घूर कर बेचैनी से देखती मेरे नाम का भय हर किसी म भर दिया गया था, कई नजर तो मेरी ओर इस कद्र उठती जस मैं कोई नगीना हूँ—और वे मेरी परख करने म जुटी हुई हो। मैं उन सभी की ओर स्नेह की दृष्टि से देखती लेकिन उनके लिए मेरी दृष्टि कोई अर्थ न रखती। म जान उन निगाहों ने मेरी क्या कीमत आँकी ? लेकिन यह सच है कि उनकी नजरो म मैं गली की गन्दगी थी लेकिन उनका स्वर दबा हुआ था वर्ना व मुझ उठा कर बाहर फिकवा देते या उस घडी ही मुझे मौत की सजा सुना देते ! यह मैं भी नहीं जानती कि वे मुझसे क्या चाहते थे अथवा मेरे भीतर क्या तलाश रहे थे ?

—सभी लोग यह चाहते थे कि मैं महाराज से अलग कर दी जाऊँ। मेरे दुश्मनो न एक साथ जिहाद शुरु कर दिया कि—मैं उनके साथ न रह सकूँ। मुझे जनानी ड्योढी म भिजवाने के लिए अनेक प्रयास हुए दलीलें पेश की गई महाराज क कान भरे गये—लेकिन मेरे मालिक ने एक भी न सुनी और मुझे मर्दानी ड्योढी म ही रहने क लिए जगह मिल गई। मेरे दुश्मनो के लिए मैं नासूर बन गई। महाराजा क महल के करीब ही मेरा महल था। यद्यपि मर्दानी ड्योढी मे आदमी ही ठहर पाते हैं किसी औरत का ठहरना बहुत ही मुश्किल था, वहाँ के रीति रिवाज और कायदे इस बात की कभी इजाजत नही देते। लेकिन मैं एक ऐसी औरत रही हूँ—जिसने कायदे की दीवार को तोड कर अपनी मनमानी की। इसी कारण मेरा रौब भी बढ चला और दुश्मनी भी !

—महल म सभी प्रकार की सुख सुविधाय थी फिर भी खासतौर से उनकी हिदायत थी—अत महल को बहुत सजाया गया सवारा गया वर्ना वे मुझे एक तग कोठरी म बन्द करने स नही चूकत। महारानियो से भी बढकर मेरे लिए प्रबन्ध किया गया ! नौकर चाकर नाजर, दासियाँ बादिया चोपदार, पहरेदार व साजिन्दे आदि सभी तो अपनी अपनी जगह पर तनात थे।

—यद्यपि मैं महारानी न थी और न उनकी ब्याहता ही। फिर भी उस रियासत म पटरानी की तरह राज करने लगी। व मेरे साथ ही रहते, कभी वे मेरे महल म पधार आते तो कभी मैं उनके दीवाने—खास म पहुच जाती—जी म आता, दीवाने आम म भी पहुच कर दखलन्दाजी कर आती उन्होने कभी ऐतराज जाहिर न किया। वे मेरे साथ विलासमय जीवन व्यतीत करने लगे—प्रेम का धागा दिन ब दिन भीगता ही चला गया।

—मैं उनके दिल की रानी थी—फिर भी अनेक दरबारतियाँ उनकी रातों में आई। मैंने भी कभी नाराजगी जाहिर न की, अपितु राजमहल के कायदों को कबूल कर जिन्दगी जीने लगी। दुश्मनों ने कई रूपा ऐसे गुरु र तोहफे नजराने में भेंट किए—जिन्हें देखकर मयम डिग जाये। महाराज उन सभी नजरानों को भोगते रहे लेकिन रसकपूर को कभी न भुला पाये—इसी कारण मैं अपने आपको खुशनसीब मानती रही।

—एक रात अन्नदाता ने मुझसे सवाल किया—'हम कौन हैं?'

—'इस गुलिस्ता के महकते फूल!'

—'और तुम!'

—फूल पर बरसती शबनम!'

—'तभी तो हम तुमसे जुदा न हो सके!'—कहते हुए उन्होंने गले से लगा लिया।

—महल में देश की नर्तकियाँ बुलाई गईं महाराज उनका नृत्य मेरे साथ देखते—और उन्हें स्वर्णमुद्रायें देकर विदा कर देते। वे किसी के साथ भी न बंध सके। मेरे रूप और नृत्य की तुलना में उन्हें वह सब कुछ फीका लगता।

—मेरे मगार में वहारों की बस्ती जमने लगी। हर दिशा महमा गाकर मेरी जो बहलाती मदहोश हवा तरन्नुम छेड़कर हृदय को मोहित कर जाती। मेरी जिन्दगी में अभाव नाम था ही नहीं। एक औरत को चाहिए भी क्या? सुन्दर सा हमराही, हमेशा दिल के साथ रहने वाला खाने पीने के लिए सबको व्यंजन पहिनने को नित नये परिधान और कीमती आभूषण!

—मैंने जो कुछ भी उनसे कह दिया—वही हुआ। जो कुछ मैं करना चाहती—वही होता। लेकिन मेरी दखलदाजी के कारण राजघराना में दहनी आग में जल उठा। बाहर और भीतर अनेक षडयन्त्र जन्म लेने लगे। हर सुबह नई अफवाह फैलने लगी। वहाँ रह कर मैंने यह अनुभव किया कि जनानी ड्योढ़ी और वेश्या के कोठे में कोई खास फर्क नहीं होता है। दोनों की मूल वृत्ति एक ही सतह से जन्म लेती है। कल तक जिसका सम्मान था कद्र थी—वही आज बेआबरू किया जाकर उस घर से निकाल दिया जाता है।

—कोठे में धन की कद्र है तो राजघराने में नजर का सवाल!

—राजनीति का तो खुला अखाड़ा होता है राजघराना। राजनीति और राजघरानों में राज होता है मुसाहिब का। मुसाहिब का महत्व बहुत ही अधिक रहता

आया है। राजा महाराजा तो नाम के होते हैं ऐश आराम और अय्यारी करने के लिए ही जन्म लेते हैं मूलशक्ति तो परिकारिया के हाथ म रहती है। मुसाहिब की मर्जी का बहुत बडा महत्व है वह चाहे जिस गद्दी पर बिठाये और चाहे जिसे सिंहासन से उतार फेंके। वह राज्य का नियामक है राजा तो उसके हाथ की कठपुतली है—वह उसे अपनी मर्जी के अनुसार नचाता रहता है। राजा महाराजा भी इसी एक आदमी के विश्वास पर भला बुरा कर बैठते हैं। ऐसे बहुत कम चतुर होते हैं—जो इनके जाल म न फसते हो। स्वय का विवेक खोकर लोगो के घर बसाते और उजाडते रहते है। इन्ही मुसाहिबो के कारण राजघराने म अनेक षडयन्त्र हुए हैं राजघराने के इतिहास बदल जाते हैं, राजा महाराजाओ के सूरज डूबो दिये जाते हैं, ये अपने घर सोने चाँदी से भर कर दुराचार करते हैं मनमानी करते हैं और सारा दोष राजा के सिर पर मढ दिया जाता है।

—मेरे सरकार इस बात से भली भाँति परिचित थे वे राज धर्म के हर मर्म को पहचानते मुसाहिबो की नब्ज पकड कर परिवर्तन लाते। व अपने जीवन म कुशल राजनीतिज्ञ एव साहसी योद्धा के नाम से विख्यात रहे हैं। उन्होने अनेक आदमियों को वक्त पर परखा और समझने का यत्न किया—यही कारण है कि वे सहज म किसी भी आदमी पर विश्वास नही करते और अपने विश्वासी पर भी अविश्वास की दृष्टि रखते। अधिकारियो तथा परिवार के सदस्यो पर भी शक की नजर रखते तथा उन्हे शक म ही निगाह से देखते। इनसे हमेशा डर बना रहता तथा आशका का दामन कभी नही छोड पाते। हर छोटे बडे मुसाहिब के पीछे एक खबरनवीस को तनात रखते और हर खबरनवीस की मिली भगत की जाच के लिए अपने खास आदमी तनात करते।

– उनम भी एक बहुत बडी कमी थी जिसे मैं भी दूर नहीं कर सकी। वे अपने खास चुनिन्दा आदमियो पर पूरा ऐतबार करते लेकिन ये लोग ही उनके दोस्त बन कर भी आस्तीन के साप बने हुए थे। कभी कभी तो खबरनवीसो की बात पर ही विश्वास कर बैठते सच झूँठ का निर्णय किये बिना ही हुक्म फरमा देते मामूली सी बात पर ही मौत की सजा का हुक्म सुना देते। जिद के बडे धुनी हैं अपनी बात पर दुबारा विचारने की आदत ही नही है।

— उनकी इस आदत स मैं स्वय भी भयभीत हो चली थी। बहुत बार समझाया उन्होंने मेरी हर बात को अपनाया लेकिन जिद न छोड सके। सहज विश्वास और कानो के कच्चे होने के कारण ही मेरे सरकार ने अपनी जिन्दगी मे अनेक असफलतायें प्राप्त की और जनता से बहुत दूर हो गये। आम आदमी महाराज के

नाम स डरता है तथा अपने आप को उनके समक्ष प्रस्तुत करने मे हिचकिचाता है। सभी को एक ही भय लगा रहता है कि न जाने किस घडी किस आदमी के गले म मौत का फंदा झूल जाय। हर आदमी मृत्यु से भयभीत रहने लगा।

—जब मैं जयपुर के महल म थी—तब एक रात मैंने उनसे सहज भाव म अर्ज करते हुए कहा था— मेरे हुजूर! आपके हृदय म करुणा का अथाह सागर फैला हुआ है।"

— मेरे अधरो पर गुलाब की पखुरियाँ फकते हुए जवाब दिया था—'तुम्हे क्या चाहिये ?"

—'मुझे सिर्फ आपकी इनायत चाहिये। फिर भी जान बख्शें तो अर्ज करूँ?"

— रस! हमारे प्राण ही तुम्हारे हाथ म है।"

—'हुजूर! यदि मेरे हाथ म राज की बागडोर होती तो मैं किसी को सजाए मौत नहीं सुनाती कभी किसी भी गरीब को रोटी रोजी से मोहताज न करती आप हमारे मालिक हैं आप से एक ही प्रार्थना है कि किसी गरीब बेगुनाह आदमी को इतनी कठोर सजा न दें।

—'रस! तुम नहीं समझ सकती। यहाँ का हर आदमी खतरनाक भेडिया है, उसके दिमाग में हमारे खून की साजिश है, हमारे सिंहासन के लिए वह षडयन्त्र रचता रहता है वह सेवक नहीं मालिक बनना चाहता है। हमारे ही खून पर एतबार नहीं है। हमारी नजर क सामने हर कोई वफादार है, अपना है लेकिन नजर हटते ही हमारे खून का प्यासा है, वह हमारे खून से हाथ रगता हुआ भी नहीं हिचकेगा। तब भला हम इन हत्यारो पर कैसे विश्वास करें ?"

— मेरे हुजूर! हर आदमी तो ऐसा नहीं हो सकता ?"

— कौन जाने किसी घडी किसकी नीयत बदल जाये ? कौन रग बदल ले ? कौन हमारे लिए आस्तीन का साँप बन बैठे ? हम दुश्मन को पैदा ही नहीं होने देना चाहते, जन्म लेने से पहले ही कुचल देना चाहते हैं।'

—'हुजूर ने इस बाँदी पर भी तो विश्वास किया है।"—मैंने स्मित हास के साथ अर्ज किया।

—'क्या तुम भी हमारे साथ अविश्वास कर सकती हो ? हमें अपने इन कोमल हाथों से जहर पिला सकती हो ? शराब में कुछ मिला कर हमारी जान

की गाहक बन सकती हो ? रसकपूर ! हमने तुम पर विश्वास किया है, तुम पहली औरत हो—जिस पर हमारे दिल ने शक नहीं किया वर्ना हमने महारानियों पर भी कभी विश्वास नहीं किया है। यह सच है कि औरत आत्मा का खून कर सकती है क्योंकि इन औरतों के कारण ही इतिहास बदल गये तख्त उलट गये, ताज छिन गये और शहंशाह सीकचों में बंद होकर घुट घुट कर दम तोड़ बैठे। इसी औरत–जाति के कारण बड़े बड़े राजा महाराजा गलियों के भिखारी बन गये अथवा फाँसी के तख्ते पर झूल गये लेकिन तुम औरत होकर भी ऐसा अविश्वास नहीं कर सकती हो !

— महाराज ! मैं भी उसी मिट्टी से बनी हुई हूँ—जिसमें आम औरत का जिस्म ढलता है।

— तुम्हारी इस देह में कुछ अलग ही है—वह उन मक्कार घोमबाजों से मेल नहीं खाता। हमने अपनी जिन्दगी में कई औरतों को परखा है लेकिन तुम उनसे अलग हो। जानती हो क्या ? तुम्हें प्रेम की प्यास है वासना की भूख नहीं प्रेम का पुजारी कभी अविश्वास नहीं कर सकता है। आज से तुम हमारी सलाहकार हो ! तुम्हारी इजाजत के बिना किसी भी गले में फन्दा न होगा अब मौत की सजा भी तुम्हारी ये कोमल अंगुलियाँ ही लिखा करेंगी।

—मैं अपने मालिक से कुछ भी न कह सकी अपितु उनके वक्ष पर झूलते हुए अपने काले घुंघराले केशों की मादक-छाया में उनको ढाँप लिया—जैसे कामदेव वक्ष की छाया में कृष्ण बैठा हुआ हो। न जाने इस तरह कितनी ही रातें गुजरती रहीं और कितने ही दिन ढलते गये—लेकिन हम एक दूसरे से कभी एक दिन के लिए भी दूर न हो सके। एक तरह से मेरे हुजूर रसकपूर के बन्दी हो चले नजरबन्दी की तरह उनकी जिन्दगी बन गई। मैं उनको इसी तरह अपने आगोश में सिमेटे रखना चाहती रही ताकि वे कभी मुझसे दूर न हो जायें। प्रेमी युगल उन्माद की नदिया में बहता चला और दुश्मन किनारे पर खड़े अवसर तलाशते रहे।

—यदि किसी मुसाहिब ने उनका मेरे बारे में शिकायत की अथवा कुछ भी कहा तो वह अपने पद से ही हाथ धो बैठता था। एक मुसाहिब जिसका नाम लेना भी मैं पसन्द नहीं करती वह मेरे कोप का भाजन बना यद्यपि वह बहुत ही दूरदर्शी व्यवहार कुशल और ईमानदार आदमी रहा लेकिन उसके गले में भी फाँसी का फन्दा झूल कर ही रहा वह भला आदमी सिर्फ मेरे कारण ही अपने प्राणों की बाजी हार बैठा।

—जब वह मुसाहिब बना तो रियासत की दशा अजीबो-गरीब थी। जागीरदार असन्तोष की आग में जल रहे थे। आम जनता गरीबी के मारे दुख के दिन देखने लगी थी। लुटेरे रियासत को लूटने में व्यस्त और ओहदेदार जनता का खून चूसने में जोंक की तरह जुटे हुए थे। आये दिन शहर के आस पास डाके पड़ने लगे और जनता किसी के आगे अपना दुख भी नहीं रो सकती थी। आम आदमी के मन में भय का वातावरण और अपने आपको असुरक्षित समझने की भावना जन्म ले बैठी थी। जब कभी मैं भी रियासत की गिरी-हालत के हालात सुनती तो मुझे बहुत दुख होता उस समय एक ही कल्पना करती कि नूरजहाँ की तरह रियासत की बागडोर अपने हाथ में ले लूँ तथा उन सभी मुलिजमों को कड़ी से कड़ी सजा दूँ ताकि मेरे हुजूर की बदनामी न बढ़ने पाये। लेकिन यह नामुमकिन था।

—मेरी सलाह से नया मुसाहिब लाकर बैठाया गया। उसने रिश्वतखोर भ्रष्ट आदमियों को नौकरी से अलग कर दिया तथा ईमानदार आदमियों की भर्ती कर रियासत को सम्भाल लिया। जागीरदारों के मन का वहम दूर कर उन्हें राज्य में पद दिये। एक दिन मौका पाकर वह मेरे महल में आया और अनुनय के स्वर में मुझसे कहा—"बाईजी! रियासत में जो कुछ भी असन्ताप व गड़बड़ी है वह आप ही के कारण है।

— क्या कहने जा रहे हो?"—मेरा स्वर तीव्र हो चला।

— यह सच है! और सच को कभी झुठलाया नहीं जा सकता है बाईजी! ठाकुर, कुँवर जागीरदार व जमींदार सभी अपने महाराजा को पाने के लिए बेचैन हैं अपने अपमान का बदला चुकाने के लिए इकट्ठे हो चले हैं। न जाने कब षड्यन्त्र बिखर पड़े कब आग फैल जाय?"

—"मैंने आपके महाराजा को बाँध कर तो नहीं रखा है! —मुसाहिब की ओर कुटिल दृष्टि से देखते हुए मैंने जवाब दिया।

— यह सच है कि महाराजा आपके बिना नहीं रह सकते! लेकिन उनकी जिन्दगी में जितनी आपकी जरूरत है उससे कहीं अधिक जनता को अपने अन्नदाता की आवश्यकता है! मेरी आपसे अर्ज है कि राज्य-हित में आपको अपने कदम इस राह से हटा लेने चाहियें।"

—"तुम कौन होते हो, मुझे इस राह से हटाने वाले?"

— बाईजी! बुरा न मानिये, आपको समझाना मेरा फर्ज है, मैं तो इतना

ही कह सकता हूँ कि आपके रहते हुए यह राज्य कभी सुख की श्वास नहीं ले सकता है।'

—मुसाहिब के अल्फाज सुन कर बेहद गुस्सा आ गया। उस घडी मेरे जी मे आया कि तलवार की तीखी धार से मुसाहिब का सिर धड से अलग कर दूँ, लेकिन होठ काट कर रह गई। मुझे उसके भीतर से षड्यन्त्र की बदबू आने लगी और भावावेश म मैं अपने आप पर सयम न रख पाई और उसे फटकारते हुए कह ही दिया—'तुम भी जनानी डयोढा से मिली—भगत कर बैठे हो। लगता है उन डायनो ने भारी रिश्वत तुम्हारे हाथ मे थमा दी है कितनी मुहरें मिली हैं?'

— बाईजी! समझ से काम लीजिये —उसका स्वर भी तीव्र हो उठा।

—मुझे उसका बाईजी कहना खल रहा था यद्यपि मैं चाहती नही थी लेकिन फिर भी मेरा अस्तित्व कम न था। दरबारी मुझे उसी नजर से देखे या सम्बोधित करे तो मेरा मन क्रन्दन करने लगता। मैंने उस पर प्रहार करते हुए कहा - जानते नही हो! किससे मुँह लडा रहे हो!

—"जानता हूँ बाईजी! महाराज की एक रखैल से बतिया रहा हूँ जो कल तक मुहरों की भनभनाहट पर अपना तन बेचती थी—लेकिन किस्मत से महल की रानी बन कर वैभव के मद मे सब कुछ भुला बैठी और अपने-आपको अधीश्वरी मानने लगी है। बाईजी! आज महाराज तुम्हारी मुट्ठियो म कैद है लेकिन कल का किसी भी पता नही है! कही आप सीकचो मे बन्द होकर बीते दिन न याद करती रहें।

— 'नीच! कमीने! बेईमान! तेरी यह मजाल! मैंने तो कभी विचारा भी नही कि तुम इस कदर कमीनी हरकत पर उतर आओगे। मुसाहिब के ओहदे पर बैठकर आदमियत को गँवा बैठे हो। हमारी ही रोटियो पर पलने वाला कुत्ता पूछ हिलाने की बजाय दात दिखाने लगा। लगता है—अनाज से बैर हो गया है।'

— बाईजी! क्यो अपनी जुबान खराब कर रही हो?'

— कल का सूरज देखने की तमन्ना नहीं है शायद!'—मैंने कुटिल मुस्कान के साथ देखते हुए उससे कहा।

— एक तवायफ के हाथ मे रियासत की ताकत आ जाने पर यह भी सम्भव है कि मैं कल का सूरज न देख सकूँ—लेकिन उस मौत म भी स्वाभिमान

झलकता कि मैं अपने धर्म के लिए प्राण छोड़ रहा हूँ लेकिन बाईजी ! वह दिन भी दूर न होगा – जब तुम्हारे चांद-सितारे अंधेरे में डूब जायेंगे—और महल का खुशबू तो दूर कोठे की गन्दगी भी नसीब में न होगी।'—कहता हुआ वह आवेश के साथ महल से बाहर निकल गया।

—वह चला गया लेकिन महल में जहरीली घुटन छोड़ गया—जिसकी घुटन में मेरा तन टूटने लगा और मन सर्पिणी की तरह फन उठाकर फूँकार मारने लगा, साथ ही दिमाग पर पागलपन का भूत सवार होने लगा। मैंने अपनी काया से सभी जेवर उतार फेंके तथा शराब में बगैर डाल कर जाम पर जाम उड़ेलने लगी। एक एक पल बोझिल हो चला, उस दिन मैंने रतना से हुक्का लाने का हुक्म दिया—और वह शीघ्र ही आश्चर्य करती हुई हुक्का भर लाई—मैं उस धुंवा में विनाश के दृश्य रचने लगी। मेरी आँखों के सामने मुसाहिब की मौत नाचने लगी। उस क्षण मैं अपना वास्तविक रूप भूल बैठी और अपने मद में पागल होती हुई प्रलाप करने लगी।

—साँझ ढलने पर मेरे हुजूर आए तो मैंने बेमन से उनको आदाब किया, वे भी मेरा उदास चेहरा और रूखे रूख से सहम गये। मैं अपने आप में ऐंठी हुई उनके हर सवाल का जवाब बेरुखी से दे रही थी। मैंने दशरथ के सामने कैकयी का रूप धारण कर लिया था—काश ! मैं कैकेयी ही बन पाती ! हमारी मेरी बदकिस्मती ! इतिहास में खलनायिका कहलाती रहूँगी इसके सिवा कुछ नहीं। वे मुझे मनाने में लगे हुए थे और मैं बलखाई रस्सी की तरह भीगती हुई ऐंठी जा रही थी। उन्होंने मेरे बालों को अपने हाथों में उलझाते हुए कहा—'हमसे क्या कसूर हो गया ?'

—'आपने कोई गलती नहीं की, आप कर भी कैसे सकते हैं ? गलती तो मैंने खुद की है जो इस रियासत के राजाधिराज को अपने साथ उलझा लिया। आपकी महारानियों से आपको बिछुड़ा दिया उन बेचारियों के हृदय पर क्या बीती होगी ? आपके मुसाहिब भी मुझसे नाराज हैं, मैं आपके लिए ही नहीं अपितु इस रियासत के लिए दधकती चिनगारी बन गई हूँ। हुजूर ! मेरी आपसे अर्ज है कि मुझसे दूर रहें !'

– 'रस ! आज रात कैसे बहकी बहकी बातें कर रही हो ? तुम तो हमारे हृदय की रानी हो !'

—नही अन्नदाता ! इस तवायफ का यह भाग्य कहाँ ? आप मुझे इतना सम्मान न दीजिए मैं तो सिर्फ एक तवायफ हूँ और तवायफ ही रहूँगी। गलियों की गन्दगी को सोने के सिंहासन पर रखने से वह सोना नही बन सकता है। मेरे मालिक ! मेरे हुजूर ! मैं तो आपकी पगरखिया की धूल हूँ दासी हूँ चाहती थी कि आपके कदमो की धूल सिर पर रख कर जिन्दगी गुजार दूँगी लेकिन मेरी किस्मत को यह मजूर नही है। आपका मुझ पर बहुत बडा एहसान है आपने मुझे हृदय से प्यार किया है—जिसे यह जिन्दगी आखिरी घडी तक नहीं भुला सकेगी। मैं आपकी हू और सदा आपकी रहूँगी—लेकिन मुझसे भी एक और बडा धर्म है—राज्य ! कुछ लोग कहते हैं कि मैं राज्य की अडचन हूँ मेरे कारण जनता दुखी है और मेरे अन्नदाता पर मैं विपत्ति की बदली बन कर मडरा रही हूँ। मैं नही चाहती हूँ कि मेरे विश्वास की चुनरिया पर दाग उभरे ! आपको कुछ हो जाय ! मैं हाथ जोड कर आपसे अर्ज कर रही हू मुझे इस स्वर्ग से विदा कर दें —कहते हुए मेरी आँखो से आँसू बह निकले।

—महाराजा मेरी विकलता के कारण स्वय उद्विग्न हो गये। मेरे अश्रुओ को मोती की तरह चुगते हुए आवेश के साथ कहने लगे— रस ! आज तुम्हे क्या हो गया है ? आज से पहिले तुमको इस तरह बहकते कभी न देखा था। तुम्हारे सामने यह राज्य ! हमें इस राज्य का मोह नही है वह राज्य-सुख कैसा ? जो आत्म-सुख को छीन कर ले जाये ! हम तुम्हारे बिना एक क्षण नही रह सकते किसने तुमको बहका दिया है ? सच बताओ तुम्हारा अपमान करने की किसने हिम्मत की ? ऐसा कौन हमारा दुश्मन बन बैठा—जो महाराजा जगत सिंह की खुशियो का सरसब्ज चमन उजाडना चाहता है।

—'कोई भी इज्जतदार आदमी महाराज के साथ तवायफ को देखकर खुश नही हो सकता है। राजा महाराजा के लिए इस पृथ्वी ने अनेक रत्न उडेले हैं वन देवियो ने सुन्दर से सुन्दर फूलो की वर्षा की है, प्रकृति ने सुकुमार उपहार दिये हैं एक रसकपूर ही नही अस य रसकपूर आपकी खिदमत म हाजिर हो सकती हैं। यह कौन बर्दाश्त कर सकेगा कि बहता हुआ पानी किसी एक ही जगह पर ठहर जाये। महाराज ! मैंने आपको अपनी बाहुओ मे बाँध लिया है—और यह बधन ही मुसीबतो का मेला बन गया है।

—'तुम इस राज्य की अधीश्वरी हो ! कौन कहता है कि तुम तवायफ हो ! तुम राजरानी हो !'

—'आप कुछ भी कह लेकिन आपके मुसाहिब यह कैसे बर्दाश्त कर सकते हैं कि हुजूर एक नाचीज तवायफ के साथ रहें।'—मैंने अवसर देख कर अपने प्रतिशोध का शोला भड़का दिया था।

—'यह उस दुष्ट मुसाहिब का षड्यन्त्र है! आश्चर्य कि वह इस तरह रंग बदलता है? हम तो उसे नेकनीयत और समझदार समझ रहे थे वह इस सीमा तक पहुँच जायगा कभी विचार ही न किया। हमारी व्यक्तिगत जिन्दगी में दखलन्दाजी करके उसने बहुत बड़ा गुनाह किया है,—हम उसे कभी क्षमा नहीं करेंगे।'

—मैंने उस क्षण स्वाभाविक से अस्वाभाविक में उड़ती और महाराजा के अधरों तक न आकर हँवास स्वर में कहा—'आप नाराज न होइये अपने दिल का कष्ट न लीजिये। आपको इस बाँदी की कसम है आप तनिक भी ध्यान न कीजिए। वह बेचारा क्या कर सकता है? उसने मेरा ही तो अपमान किया है तवायफ का अपमान कोई खास बात नहीं है न जाने इस जिन्दगी ने कितनी दफा अपमान के जहरीले घूँट गले से नीचे उतारे हैं और न जाने कब तक उतारने होंगे। आज मुसाहिब ने भला बुरा कहा है कल प्रजा भी कहेगी। कोई सामने कहेगा तो कोई पीछे से गन्दगी उछालेगा कहने दीजिए!'

—हमारे रहते हुए हमारी रस को आर कोई आँख उठाकर भी नहीं देख सकता है भला बुरा तो कहना बहुत दूर की बात है! आज के बाद कोई भी शख्स तुमको तवायफ कहने की हिम्मत न कर सकेगा। कल के सूरज के साथ ही तुम इस रियासत की अधीश्वरी कहलाओगी तुम्हारे सिर पर स्वर्ण मुकुट होगा—और तुम्हारे कदमों में रियासत सिर झुकायेगी। हमारे हुक्म के साथ तुम्हारा हुक्म चलेगा।''—यह कहते हुए उन्होंने रेशमी डोर आवेश के साथ खेंच डाली—महल का वातावरण गूँज उठा—दीवारें झनझना उठीं। उसी क्षण प्रधान अंगरक्षक तलवार झुकाये उपस्थित हुआ। वह सिर झुकाये महाराज के आदेश की प्रतीक्षा में था।

— मुसाहिब को गिरफ्तार कर किले में भिजवाओ। उस नीच ने हमारा अपमान किया है, उसका सिर हाथियों के पैरों से कुचला दो!''

—'अंगरक्षक सिर उठाकर भी न देख सका। अपने कदमों को पीछे की ओर हटाते हुए अपना सिर झुका कर जाने की इजाजत चाही तो फिर उन्होंने भावावेश में कहा—ठहरो मानसिंह! सुनो और सभी से कह दो! महाराजा जगतसिंह के हुक्म से यह फरमान ऐलान करवा दो कि रसकपूर इस राज्य की अधीश्वरी है। इनके नाम के सिक्के जारी होंगे, इनका हुक्म सभी को मान्य होगा। जो कोई विरोध करेगा

वह बागी होगा और उस बागी के लिए सजा होगी मौत ! आज रात ही सारे शहर म ढिंढोरा पिटवादो !'

—"हुजूर ! गुस्सा थूँक भी दीजिए। आप इस बांदी के कारण बहुत तक लीफ उठा रहे हैं, आप जो कुछ करने जा रहे हैं—उस योग्य मैं नहीं हूँ। मेरा अधिकार सिंहासन पर बठने का नहीं है। मेरी जगह तो अन्नदाता के कदमों म है।

—'रसकपूर ! हम रोको मत, यह हमारा हुक्म है।"

—मैंने उस क्षण किसी प्रकार का प्रतिवाद न किया। हुजूर के सामने सिर झुका कर उनके हुक्म को चुपचाप स्वीकार लिया।

—प्रधान अंगरक्षक महाराज की इजाजत पाकर महल मे बाहर हो गया।

— *रस ! कल तुम भी किले म जाओगी !"*

— हुजूर का हुक्म ! '

- 'तुम अपनी आंखो से उस दुष्ट मुसाहिब का कुचला हुआ मह देख सकोगी ! हमारे अपमान का क्या नतीजा है ? यह देखकर तुमको खुशी होगी।

—वह रात बहुत मुश्किल से गुजरी। एक ओर खुशियो का सागर लहरा रहा था दूसरी ओर आशका का घोर सन्नाटा। रसकपूर के भाग्य का सितारा चमकने लगा। मेरी आकांक्षायें आकाश म कुलाचें मारने लगी। मैं दरबार के साथ खुशियाँ बाँटने लगी। *मेरी देह का उन्होने अपने हाथ से शृंगार किया। बाजोट पर* रसनारी बतक और स्वर्णप्यालियां मे मदिरा तिरने लगी। मैंने डगमगाते कदमो से नृत्य किया। न उन्हे चेतना थी और न उस रात मुझे ही सुध ! समय आँख मिचौनी खेलता रहा—मैं जगमगाती दरगी झाड की रंगीन पत्तियो मे अगडाई तोडती हुई अपने हजार स्वप्न साकार करने लगी। मैंने वह स्थान पा लिया—जो एक महारानी भी न पा सकी थी। वह रात उमगो से भरी मेरी पलको पर रास करने लगी। हुजूर मेरी गोद मे ही सो गये- मैं न सो सकी, सारी रात उनके पौरुषयुक्त सौन्दर्य को देखती हुई उनके विश्वास पर मुग्ध होती रही।

—दूसरे दिन सूरज की प्रथम किरण के साथ ही मैं अधीश्वरी बन गई। चारण गीत गाकर मुझे जगाने आये—बान्दियो ने सिर झुका कर मुझे बधाई दी। रियासत पर मेरा हुक्म चलने लगा हर हाकिम सिर झुका कर इज्जत देता। मेरे नाम का पहिला सिक्का टकसाल से ढल आया – और मुझे भेंट किया गया। उस क्षण तो मेरा अहं सिर पर चढ़ कर नाचने लगा। ससार की ऐसी कोई रखल नही

होगी—जिसे इतना बड़ा सम्मान मिला हो ! मैं नूरजहां से भी बाजी मार गई थी ।

रियासत के ठाकुर जागीरदार मुझे नजराने में अमूल्य वस्तुएँ देने लगे । सेठ साहूकार मुझसे भेंट करने आये, कई सेठानियाँ भी पर्दे में सिमटी हुई मुझसे मिलने आईं और हीरे-जवाहरात भेंट करने लगीं । देखा आपने रसकपूर के भाग्य का सितारा ! पर्दे की इज्जत मेरे कदमों को छूने लगी थी । जो नफरत करते थे—कदमों में सिर झुका कर दया की भीख मांगते हुए भिखारी से दिखाई देने लगे ।

—जो जल भुन कर मेरे लिए षडयन्त्र का जाल बुनने के आदी हो गये थे—वे भी मेरी खिदमत में हाजरी देने को विवश हो चले । पड़दायतें और पासवानें भी जनानी ड्योढ़ी की दीवार उलांघ कर मुझे बधाई देने आईं । मैं भी पासवान रही और वे भी पासवानें ही थीं लेकिन रात दिन का फर्क । उन्हें सूरज की किरण देखने पर भी पाबन्दी और मुझे सूरज की रोशनी उछालने का भी हक ! स्वाभाविक था कि वे मेरे प्रति नफरत को जन्म दें ।

—सबसे बड़ा आश्चर्य यह था कि महारानियों ने भी बाईयों के साथ बधाई का संदेश कहलाया । भटियानी रानी ने तो मुझे इज्जत के साथ अपने महल में बुलवाया । मैंने भी उस प्रस्ताव को अपमान न समझा—और रानी जी से मिलने गई । यद्यपि उनके अधरों पर बधाई के शब्द थे लेकिन आँखों में प्रतिशोध की दहकती आग । उन्होंने मुझ पर व्यंग्य भी किये—लेकिन मैं अपनी औकात से परिचित थी—मैंने हँसते हुए उनके प्रहार सहन किये और महल से विदा ले आई ।

—मिलने वालों का तांता बंध गया । मैंने मिठाईयाँ बँटवाई मंदिरों में ध्वजा चढ़वाई, गरीबों को कपड़े बंटवाये फकीरों को भोजन करवाया । मन्दिरों के मुखिया मुझ से मिलने आये । वे अपने साथ भगवान के प्रसाद से भरी चंगेड़ी, पान के बीड़े तुलसीदल और माला लाये—मैंने खुद आगे बढ़ कर प्रसाद को सिर से लगाया । आम आदमी खुशी व्यक्त करने आया—वह खुशी कितनी बनावटी थी ? मैं कुछ नहीं कह सकती । उस दिन तो हर अधर भगवान से मेरी खुशी के लिए प्रार्थना कर रहा था हर जुबाँ से दुआ की आवाज निकल रहे थे । मेरी चिन्ता हर किसी को थी, हर आदमी विश्वासी बनने के लिए जी जान से कोशिश करने लगा ।

—रतना ने कुछ भी न कहा था । वह चुपचाप सारा दृश्य देख रही थी । मैंने उसके मौन को तोड़ते हुए प्रश्न किया— तुमको खुशी नहीं है क्या ?'

—'क्या फरमा रही हैं रानीजी !''—उसने तटस्थ भाव से कह दिया ।

–' फिर तुमने अपनी खुशी भी जाहिर न की ।"

–'रानीजी । आप जुग जुग जीयें ।

–"क्या विचार रही हो रतना ? '

– कल के बारे मे !"

–' क्या ?

–'कल आप क्या थीं ? आज क्या हैं ? और कल ? '

–'कल भी मैं यही रहूँगी ।'

– यह राज घराना है यहाँ हर सूरज नई रोशनी बिखेरता है !"

– तू तो यो ही वहम पर वहम जीती रहती है ।

– रतना कुछ भी न कह सकी । वह चुपचाप मुझे देखती रही । इसी समय कोतवाल ने अर्ज करवाया कि पालकी तयार है ।

– मैं रतना के साथ किले मे पहुँची । मेरी आँखों के सामने बनी मुसाहिब सांकलियो से बँधा मौत की इन्तजार कर रहा था । मैंने वह को सताते हुए कहा— रसकपूर का अस्तित्व समझ म आया ?"

– उसने सिर उठाकर मेरी ओर देखा फिर एक बनावटी हँसी के साथ आकाश की ओर देखने लगा ।

– अब भी मौत से बच सकते हो ?'

– तुम्हारी मेहरबानी से तो मौत अच्छी है ।'—उसने सिर उठा कर कहा था ।

– अपने परिवार के बारे म भी नही विचारते हो ? '

–'शहीदों को कसा मोह ?'

–' शहीद ! कीड़े की मौत मरेगा !'–कहती हुई मैं हँस पड़ी थी ।

–"बाईजी ! तुम्हारी हँसी मे तुम्हारा विनाश अट्टहास कर रहा है आज मैं इस मिट्टी मे लोटूँगा, लेकिन यह मिट्टी ही तुम्हारी मौत को कल आमन्त्रित करेगी ।

– चुप रहो बनी !

–'वह सिर उठा कर देखता रहा ।"

—मेरे एक इशारे के साथ ही महावत न हाथी को आगे बढाया—वह कुचल दिया गया—लेकिन उसकी एक भी चीख हवा मे न तिर पाई । मैं अपने मद म भटकी हुइ विजय पर हसने लगी लेकिन मेरा मन रो पडा था । वस्तुत उस दिन मैं पिशाचिना बन गई थी वर्ना इन हाथों पर ये लोहे के फूल खून से कभी नही भीजते !

———

□ आठ

रियासत के इतिहास में यह घटना नई नहीं थी, लेकिन मेरे इशारे पर की जाने वाली पहली हत्या थी। दरबारियों में भय व्याप्त हो जाना स्वाभाविक था, नतीजा यह हुआ कि अंधेरे को उजाला कहने वालों की खासी भीड़ जमा हो गई। सच्चाई अंधे चरित्र के पीछे छिप कर रह गई। आये दिन मुसाहिब, मुंसिफ हाकिम यहाँ तक कि मुंशी भी बदले जाने लगे। ईमानदारी का अर्थ सिर्फ वफादारी रह गया—वफादारी मेरे इशारे के साथ बँधी हुई थी। हुजूर तो शक्ती थे ही, साथ ही मेरा मह भी लोगों के लिए खास तौर से मुलाजिमों के खातिर फांसी का फन्दा बन गया। रियासत के भीतर—तहलका मच गया कि न जाने कल क्या होगा? बाहरी ताकतें रियासत को सोने की चिड़िया समझ कर अपने जाल में फांसने के लिए डोरे बिछा रही थीं और जनानी ड्योढ़ी के भीतर आग जल रही थी—जो मेरे वर्चस्व को जला देने के लिए बेचैन थी।

रानी भटियाणी मेरे अस्तित्व को समाप्त करने के लिए सामन्तों तथा मुँह चोंचे जागीरदारों के साथ सांठ-गांठ कर चुकी थी। उनकी नजर में रसकपूर सिर्फ एक बेशर्म पातुर था। पातुर और अन्नदाता के साथ राजरानी की तरह? यह बर्दाश्त के बाहर की बात थी।

—मुझे तो अचरज इस बात पर है कि जिस जनानी ड्योढ़ी का मैंने सम्मान बढाया और यह साबित कर दिया कि औरत का जन्म ऊँची दीवारों के बीच कैद होने के लिए नहीं अपितु आदमी पर राज करने के लिए होता है उसी औरतों ने मुझे नफरत की निगाह से देखा उनकी आँखों म काँटे की तरह चुभने लगी—और वे मेरी सहेलियाँ हमजात ही मेरी दुश्मन बन बैठी।

—मैं आपसे अर्ज कर चुकी हूँ कि अन्नदाता मुझ पर बहुत खुश थे। मुझे राजरानी का ओहदा देकर वे खुद को खुशनसीब मान रहे थे लेकिन जनानी ड्योढ़ी और सरदारों की नजर में रसकपूर सिर्फ भगतण थी। रियासत में नर्तकी को भगतण कहने का रिवाज है। मेरे से पहिले भी कई नामी भगतणें अन्नदाता की कृपा पात्र रह चुकी थीं। मेरी ही तरह एक और भगतण थी—कुन्दन बाई। ड्योढ़ी म कुन्दन भगतण के नाम से ही अखाड़ा प्रसिद्ध रहा। वक्त के साथ कुन्दन की कीमत घट गई और उसे केवल यह अधिकार रह गया कि वह अन्नदाता के कदमों तक ही अपनी नजर रख सके।

—एक अजीब रिवाज! औरत के साथ बेवफाई! जिन्दगी म खौफनाक सी दहशत! लेकिन बेवशी के साथ उम्र गुजार देने के सिवा कोई चारा नहीं! फिर भी उन दीवारों के दिल पर क्रोध ईर्ष्या और नफरत की खरोंच? जीने की तमन्ना और साजिश के खातिर सूझ पर सूझ!

—मेरी इज्जत बढ़ने से कुन्दन बाई कुढ़ गई और भटियाणी रानियों के बहकावे में आकर मेरी दुश्मन बन गई।

—रनिवास मे भटियाणी रानियों की संख्या ज्यादा थी। उन मे लाडी भटियाणी महाराजा की चहेती रही। जब अन्नदाता मेरे मोह जाल में उलझकर उधर देखना भी पसन्द न करने लगे तो लाडी के दिल पर चोट लगना स्वाभाविक था। वह भी औरत और मैं भी औरत लेकिन अन्नदाता को अपने तक ही बाँध कर रखना—हम सभी की आदत! लाडी ने बड़ी भटियाणी जी से मिलकर मेरी शिकायत की और खिलाफत करना शुरु कर दिया। एक साजिश रची गई—जिस म बीकावतजी उदयभानोतजी, चापावतजी सीसोदियाजी और छोटी तौरजी शामिल हुईं। वे सभी मुझसे नाराज रही थीं। लाडी के इशारे पर सभी मेरे खिलाफ आग उगलने लगीं। कुन्दन तो लाडी के कदमों की धूल बन कर मुझे इस तरह देखती मानों मैंने ही उसकी जिन्दगी बर्बाद की हो!

—कुन्दन के लिए कुछ नया न था। उसने राजमहलों का माहौल जिया

था, न जाने कितनी मानिओं को जन्म देकर उसने अपने आपको संतुष्ट किया होगा ? वह अवसर की तलाश में रहने लगी। मुझे अपमानित करने के लिए हर सम्भव यत्न करती।

——मैं बेखबर न थी लेकिन बिना वजह बात को उछालना भी ठीक न समझा, उस दिन मैं चाहती तो कुन्दन भगतण ता क्या ? लाडो भटियाणी भी मेरे एक इशारे पर इन्तकाल की घड़ी गिनती नजर आती, लेकिन मैंने कभी किसी औरत के खिलाफ साजिश न करना चाहा, न कभी किसी औरत के लिए अन्नदाता के कान ही भरे और न किसी को नफरत की नजर से ही देखा——जबकि रतना पल-पल की खबर मेरे कानों तक पहुँचाने मे देर न करती थी।

—"उसे मेरा बहुत फिक्र था—जबकि मैं बेफिक्र थी।'

—मैं नहीं चाहती थी कि मेरे कारण रनिवास में आग की लपटें उठें। लेकिन होनी को रोकना किसके हाथ ? एक ऐसी ही घटना घटी— जिसके कारण मैं सभी की दुश्मन बन गई।

—दशहरा का उत्सव। राजमहल में सुबह से ही उत्सव की तैयारियां होने लगी। इस दिन महाराजाधिराज की यात्रा बाजार से निकलती और प्रजा अपने ईश्वर के दर्शन पाकर स्वयं को कृतार्थ मानती। राजाओं रजवाड़ों से विशिष्ट आदमियों का सम्पर्क तो सम्भव है किन्तु आम आदमी से मिलना बहुत ही मुश्किल। प्रजा ऐसे ही अवसरों पर अपने भगवान के दर्शन पाकर अपना जीवन धन्य समझती रही है।

—उस दिन महाराजा की यात्रा का कार्यक्रम था। मुझे बेहद खुशी थी कि आज मेरे उनको देखने के लिए आदमी-औरतों का समुन्दर उमड़ेगा। मैं आपसे सच कहती हूँ कि मैंने कभी न चाहा था कि अन्नदाता के साथ मेरी भी सवारी निकले और जनता मुझे भी उसी तरह का सम्मान दे। यह ठीक है कि मुझे अघोषित रानी बना दिया गया था लेकिन मैं सिंहासन पर कभी राज न करना चाहती थी। मैं तो मेरे उन पर ही अधिकार चाहती थी और इसी में मेरा सौभाग्य था। लेकिन महाराजा का हुक्म था कि उनकी राजरानी भी उनके साथ सवारी में रहेगी।

—मैं क्या जवाब देती ? अन्नदाता की इनायत और मेरी तकदीर। उस दिन मैंने अपने हाथ से अपना शृंगार किया। गोलियाँ और बांदियाँ दूर खड़ी हुई मेरे रूप पर नयनों से समीक्षा कर रही थीं। दर्पण के भीतर मेरा अहं अट्टहास कर

रनिवास की हँसी उड़ाने लगा। जिन राजकुमारियों ने राजमहलों में जन्म लिया, सोने के पालनों में मोतियों के साथ खेलते हुए बचपन बिताया और राजमहलों में ही अपने मेंहदी लगे कदमों को रंग कर रानी का खिताब पाया—उनकी तकदीर में भी यह सौभाग्यपूर्ण दिन न आ सका था। मेरे मन ने विहँस कर कहा—वाह रे! रसकपूर भगतण! नर्तकी होकर भी अधीश्वरी बन बैठी और अपना इतिहास बनाने में कामयाब हो गई। आने वाला युग तुझे अचरज के साथ पढ़ेगा और तेरे भाग्य पर इतरायेगा। मैंने ईश्वर से हाथ जोड़ कर मन ही मन प्रार्थना की कि उनकी इनायत हमेशा बनी रहे और मेरे देवता की उम्र हजारी हो!

—जब चन्द्रमहल से यात्रा आरम्भ हुई तो मैं एक ओर खड़ी हुई अन्नदाता के उद्दाम यौवन पर अँगड़ाईयाँ तोड़ रही थी। मेरे देवता चूड़ीदार पायजामे पर काली मखमली अचकन पहिने हुए ऐसे लग रहे थे मानों कमलवन पर कानन के भार में भँवरे छा गये हों। सिर पर कसूमली जरी का साफा साफे पर चन्द्रमणि का पेंच और मोतियों की किलंगी। ललाट पर चन्दन का हल्का लेप—जिस पर मोतियों का झलझलाहट प्रकाश फैला रही थी। गले में पन्ना और माणिक के हार, मुँह में महकता बीड़ा! उन्होंने कजरारी आँखों से मेरी ओर देखा क्षण भर के लिए मेरी देह में मदिरा की नदी बह गई। नयनों की सारिकायें शराब के कुण्ड में पंख छितरा कर आकाश में गंध भरने लगी।

—यात्रा का आरम्भ राजध्वज से हुआ। पचरंगा झण्डा लिये महावत ने अपने हाथी को सबसे आगे ला खड़ा किया। उसके पीछे एक कतार में खड़े हो गये इक्कीस हाथी—जिन पर रंग बिरंगी झूलें झूल रही थीं। उस क्षण ऐसा लगा—अरावली अपनी समस्त दौलत उपहार में लुटाने के लिए अन्नदाता के कदमों में आ खड़ी हुई हो। ग्यारहवें हाथी पर नगारखाने का शहनाईवाज मधुर रागिनी के साथ कूर्मवंशियों के साम्राज्य का जयगान कर रहा था। पीछे बैठा हुआ नगारची बहुत ऊँचा हाथ उठाकर नगारे पर डंका मार कर कह रहा था हमसे कोई ऊँचा नहीं है।

—जब हाथियों का दल अपनी मस्तचाल से आगे बढ़ा तो उनके गले में लटकती हुई पीतल की घंटियाँ घनघनाने लगी—जिससे संगीत की स्वरलहरी हृदय में आनंद भरने लगी। सभी महावत लाल अचकन और लाल ही पगड़ी बाँधे हुए हाथियों पर सवार थे—उनके साथी हाथियों के साथ आगे बढ़ रहे थे।

—हाथियों के दल के पीछे आतिश के घोड़ों की खासी भीड़ थी—अरबी घोड़े जब हिनहिनाकर दुम हिलाते तो उनके सिर पर खड़ी सोने की किलंगी मोतियों

की रुनझुन से खुश हो पल छितरा देती। किलगी में जड़े माणिक की आभा उनके ललाट पर तिलक की शोभा को व्यक्त करती। पीठ पर मखमली गद्दियाँ - जिन पर सुनहरा काम—ऐसा लग रहा था जैसे किसी जौहरी की चौकी पर नगीने बिखरे हुए हों। घोड़ों की पदचाप मधुर स्वर छेड़कर शहनाईवाजों के स्वर के साथ तबले की ध्वनि की तरह ताल दे रहे थे। मंत्रमुग्ध सा दृश्य और संगीत की लयात्मकता घोड़ों की कतार के पीछे पालकियों का हुजूम—लालपगड़ी बाँधे कहार अपने कंधों पर उठाये आगे चल रहे थे। अगल-बगल चाँदी की छड़ी हाथ में उठाये चोपदार चल रहे थे। पालकियों में मखमली गद्दी और मसनद—जिन पर सोने के तारों का जाल। किसी में कश्मीरी गलीचा और कश्मीरी ही मसहरी। पालकी के चारों ओर रेशमी झालर और झालर पर मोतियों की लटकन। मानो की लड़ियाँ आपस में मिलकर रुन-झुन की झंकार पैदा कर किसी अप्सरा के घुंघरू-बंधे कदमों का भ्रम पैदा कर रही थी।

—पालकियों की कतार के पीछे नागा साधुओं की जमात। हृष्ट-पुष्ट भीमकाय से साधु अपनी कमर में चमड़े का पट्टा कसे हुए अपने शरीर का प्रदर्शन कर रहे थे। किसी के हाथ में तेज धार वाली तलवार की मूठ तो किसी के हाथ में तीखा भाला, तलवार का अचूक वार लेकिन ढाल की पीठ में बचा लिया—और फिर आवाज करती हुई तलवार को चमक किन्तु फिर झेल लिया ढाल ने। अजीब सा रौंगटे खड़ा कर देने वाला दृश्य।

—इस यात्रा में शहर के प्रमुख अखाड़े भी सम्मिलित हुए थे। अखाड़ों के महाराज और उनके खलीफे अपने पोट्ठों के साथ लाठी भाला का प्रदर्शन करते हुए चल रहे थे। शहर के जाने माने पहलवान लंगोटी कसे अपने बलिष्ठ शरीर का प्रदर्शन कर रहे थे, मानो गजराज किसी नदी के बालुई किनारों को दांतों से ध्वस्त कर विजय का उन्माद जीते हुए चल रहे हों।

—एक अजीब सा दृश्य और मीठा सा सपना! जिसे आज तक भी नहीं भुला पाई हूँ।

—रियासत के मुलाज़िम—चोबदार, छड़ीदार, पहरेदार, खवरनवीस, तोशखाना, नगारखाना आदि के नौकर चाकर एक ही पोशाक में सजे हुए चल रहे थे। इस हुजूम के पीछे बग्गियों की कतार किसी बग्गी में सफेद और किसी में श्याम वर्ण के अश्व जुते हुए थे। ऊँचे आसन पर बैठे हुए कोचवान यात्रा की शोभा बढ़ाते हुए थे। उनके पीछे ताजीमी सरदारों का समूह जिसमें लालजी कँवरजी

भवरजी जागीरदार ठिकाने के रावराजा राजगुरु राजपुरोहित, राजव्यास, राजमिश्र राजकथाभट्ट, सुखियाजी, मुखियाजी और वे सभी लोग शामिल हुए थे— जिन्हें रियासत की ओर से सोने का कड़ा व सीख मे मिला हुआ था। वे सभी सरदार और घरानो के बड़े आदमी राजसी वेशभूषा में पदल चल रहे थे। ठिकाने के ठाकुर कमर मे तलवार लटकाये मूँछो पर मरोर देते हुए अपनी किस्मत को सराह रहे थे।

– यात्रा के आखिरी छोर पर हाथी अपनी लम्बी सूँड उठाये अन्नदाता का अभिवादन कर रहा था। जिस पर सोने का हौदा—मखमल की गद्दी और मसनद। महावत हुक्म की इन्तजार मे अन्नदाता की ओर नजरें उठाकर बार-बार देख रहा था। अन्नदाता ने मेरी ओर निगाह उठाकर बठने के लिए इशारा किया।

—मैं झिझक कर खड़ी रह गई।

—अन्नदाता ने फिर इशारा करते हुए कहा — रसकपूर! देर क्या कर रही हो ?

— क्षमा करेंगे दासी को पहिले आप विराजें! —मैंने कदम आगे बढाते हुए कहा।

— तुम रियासत की मलिका हो। आज सारा शहर तुम्हारे दीदार पाकर निहाल हो जायेगा।

—'अन्नदाता!' —और मैं कुछ न कह सकी। बाँदियो ने सहारा देकर मुझे हौदे पर बिठा दिया। हौदे के पिछली ओर बठी दो दासियाँ चवर डुलाने लगी।

—महाराजा रत्नजडित हौदे पर विराजमान हुए। सवारी आगे बढने लगी। महाराजा के हाथी के पीछे चालीस घुड़सवार चल रहे थे—जिनके पीछे एक हाथी चल रहा था। झरोखे से देखने वालो आँख अगारे बरसाने लगी। मैंने तो कभी न चाहा था कि मेरे मालिक मुझे इतना सम्मान देकर उन महारानियो का कलेजा छलनी कर दें! लेकिन इत्तफाक था - जिसे कभी भुलाया नहीं जा सकता है। झरोखो में भादड़ मच गई और कानाफूसी होने लगी। मेरी नजरें सब कुछ पढ़ रही थी लेकिन मुझमे इतनी हिम्मत कहाँ थी—जो कि अन्नदाता के हुक्म का पालन न करती। मैं मनका–ए रियासत नूरजहाँ बनकर अपनी तकदीर से सवाल करने लगी— आगे क्या लिखा है ?' लेकिन तकदीर दूर इठलाकर औरो की हँसी उडाने लगी। वह मेरे सवाल का जवाब कहाँ से देती! रियासती सरदारो ने मेरी ओर नजर उठाकर अपनी अगुलियाँ मुँह मे रख अचरज प्रकट किया तो कभी अपनी बेइज्जती समझ कर शर्म से मुँह झुकाये कदम बढाने लगे। मेरे इस आचरण से शहर की प्रजा भी खुश नजर नहीं आई। हर नजर के लिए मैं तमाशा

बन गई और हर आंख म किरकिरी की तरह चुभने लगी । उस समय शहर मे ऐसी हलचल मच गई—जसे शान्त समुन्दर के किनारे पर किसी ह्वेल मछली ने गरदन उठा कर भीड की ओर देखा हो !

—सिरह् डयोढी दरवाजे के बाहर खासी भीड जमा थी । सवारी चांनी की टक्साल होती हुई आमेर माग की ओर आगे बढी तो प्रजा महाराज की जय जयकार करती हुई पीछे हो चली । वह पहिला अवसर था जब किसी महाराजा ने अपनी पातुर को इतना सम्मान दिया ।

—सवारी की घटना को लेकर रनिवास म हंगामा मच गया । लाडो भटियाणी ने सभी रानियों पडदायतों और डयोढी की खास औरतों को बहकाकर अपने हक म कर लिया । जिस दिन को मैं अपनी खुदकिस्मती समझती थी वह घडी ही जिन्दगी के लिए बदकिस्मती साबित हुई । मेरे खिलाफ साजिश रची जाने लगी । मैंने कभी अन्नदाता से इस बारे मे शिकायत न की और न उन रानियो के खिलाफ ही नाराजगी जाहिर की । वे सभी मुझसे नफरत करती रहीं लेकिन् मैंने मेरे मन के किसी कोने मे भी उनके प्रति ईर्ष्या को जन्म न दिया । रतना मुझसे हमेशा कहती रहती—"आप तो बेखबर हैं ।"

—"नहीं, रतना ! मैं नजर पहचानती हूँ ।"

— आज एक नई खबर है ।

—'क्या ?"—मैंने उत्सुकता से सवाल किया ।

—"दूनी के राजा चांदसिह महारानी से मिले थे ।'

—'मिले होंगे ! मुझे इससे क्या ?"—मैंने लापरवाही से जवाब दे दिया ।

—'आपके खिलाफ एक नई साजिश !

—मैंने प्रश्नभरी नजर से उसकी आंखों को पढना चाहा ।

—लाडो भटियाणी ने रावराजा को लाख का चूडा भेंट किया तो चांन्सिह हक्का-बक्का रह गया । उसने चौंक्ते हुए सवाल किया—'रानीजी ! यह सब क्या है ?'

—'लाडो ने अपने घायल दिल को दिखाते हुए कहा—"अब भगतणा का राज है ।"

—चांन्सिह कुछ न कह सका और सिर झुका कर खडा रह गया ।

—'चुप क्यों हो गये राजाजी ! आपकी तलवारों पर पानी न रह सका क्या ? आपकी नसों में खून की जगह शराब बहने लगी है क्या ? आज भगतण सिंहासन पर बैठ कर महाराणा पर राज कर रही है और कल हम सभी उसके इशारे पर फाँसी के तख्ते पर झूलते नजर आयेंगे।"

—'मैं क्या अर्ज करूँ ? जग हो तो माँ भवानी की सौगन्ध ! तलवार का जौहर दिखाऊँ ! लेकिन अन्नदाता ने ही जब उसे खुली छूट दे रखी है तो हम क्या कर सकते हैं ?'

—क्या आप सभी इतने कायर हो चुके हैं कि अन्नदाता से अपने अपमान की बात भी नहीं कह सकते ?

—'बागी बनकर ?"चाँदसिंह का मुख क्रोध और वितृष्णा से विकृत हो चला।

— अरी रतना ! कोई जलता है तो उसे जलने दे ! मैं क्या कर सकती हूँ ? उनका फर्ज नफरत है और मेरा मोहब्बत। मैं दुनियाँ को दिखा देना चाहती हूँ कि मोहब्बत का पैगाम लेकर जिन्दा रहने वालों के साथ मौत किस तरह खेल खेलती रहती है ?'

— कहीं ये लोग ? '—वह भयभरी निगाहों से आशंका प्रकट करने लगी।

—'मैं बुलन्द किरदारी के साथ मौत का फंदा पाकर भी खुशी जाहिर करूँगी, मुझे जन्नत मिलेगी और गुनहगारों की आँखों में हमेशा इकबाल रहेगा। रतना ! मैं तुमसे हकीकत कहती हूँ कि दुनियाँ पर राज करने की तमन्ना नहीं है केवल उनकी मोहब्बत के समुन्दर के किनारे खड़ी न रह कर गहराई में डूब जाना चाहती हूं। अपने-आपको मिटा देने की तमन्ना है कुछ पाने के नहीं, खोने के इरादे हैं। मैं अपने-आपको खोकर खुशनसीब समझूँगी।

— मुझे शक हो चला है इन चालाक नजरों पर रानी भटियानी चाँदसिंह को महल के भीतर ले गई। न जाने क्या साजिश की होगी ? '—रतना ने कम्पित स्वर में कहा।

— रतना ! तू फिक्र मत कर। मैं नहीं चाहती हूँ कि दरबार से कभी किसी की शिकायत करूँ ? बात आगे बढ़ने दे। एक इशारा ही खंजर का काम ' मैंने कुटिल मुस्कुराहट के साथ उसे समझाया।

—रतना मेरी हिम्मत पर दंग थी।

—उस दिन मेरे शहजादजान नजराना पेश करने आये थे। जब उन्होंने सिर झुका कर आदाब अर्ज किया तो मेरी छाती में दर्द कराह उठा। मैं माँ बाप के प्यार के लिए उम्र भर छटपटाती रही। उन चाहरदीवारियों में रानीजी बेगम, साहिबा कहने वाला की कोई कमी न थी लेकिन उस भीड़ में कोई भी चेहरा ऐसा न था—जो मुझे ममत्व भरी निगाहों से देख कर अपना कह सके। जिसके सामने अपने दिल की बात कह सकूँ। कोई भी ऐसा राजदार न था—जिसके गले में लगकर पल भर रोते हुए अपना दर्द हल्का कर सकूँ। जब बहुत दिनों के बाद पिताजी आये तो—खबर सुनकर मेरा दिल बाग बाग हो चला लेकिन उनके व्यवहार को देखकर तो मेरा गरूर चूर चूर हो गया और कोसने लगी अपनी तकदीर को! मैं उनकी आँखों में चिराग लेकर अपना दर्द तलाशने लगी तो उन्होंने फरमाया—"रानीजी! आपके मिजाज तो बदस्तूर हैं?"

—'पिताजी'!—अनायास ही मेरे मुँह से निकल गया।

—'नहीं, यह शब्द अपने मुँह पर न लाईये!"

— क्या फरमा रहे हैं आप? मैं किस काबिल थी? आप ही ने तो मुझे इस आलम तक पहुँचाया है! इन चाहरदीवारियों में मेरा पहला कदम आप ही के इशारे पर आगे बढ़ा।

—'रानीजी! बाप ने अपने दिल पर पत्थर रख लिया है।"

—"और माँ ने?"

— इन रिश्तों की चर्चा करना ही व्यर्थ है"—कहते हुए उनकी पलकें सतह पर मछली की तरह फड़फड़ाने लगी! मैं उस राज को समझ तो गई थी लेकिन अपने दर्द को जुबाँ पर न ला सकी और आँखें खुश्क हो चली।

—'यह छोटा सा नजराना है!"

—'मैंने भीगी पलकों से उनकी ओर देखा।"

—'मैं बहुत खुश हूँ मेरे इरादे कामयाब हो गये, आपको अपनी मंजिल मिल गई। भगवान से एक ही प्रार्थना है कि आप इसी तरह राज करती रहें!—आशीर्वाद देकर पंडित जी लौट गये।

—यह तो सभी जानते थे कि पंडितजी मेरे कृपा पात्र हैं, लेकिन यह कोई नहीं जानता था कि उनका मुझसे क्या रिश्ता रहा है? पंडितजी लौट तो गये

लेकिन उनके द्वारा कहे हुए अल्फाज मेरे कानों के परदो पर गूंजते रहे-- 'इरादे कामयाब हो गये ! इरादे कामयाब हो गये ! !" मेरे दिमाग मे बिजलियाँ कौंधने लगी और सवाल पर सवाल पदा होने लगे। मैं कसे भुला सकती हूँ कि मेरे निर्माण म उनकी भूमिका रही है। उनके अहसानो को चुकाने का कभी मौका ही न मिल सका था। मेरा फज था कि जिस इन्सान ने मेरी जिन्दगी को एक खूबसूरत तस्वीर मे पेश किया--उसके अहसानो का कर्ज चुकाना जरूरी है। महज सवाल यह था कि मैं उनके लिए क्या करूँ ? अचानक सवाल ने जवाब दिया कि क्यो नही उन्हे मुसाहिब के ओहदे पर बिठाया जावे ? मैंने उस दिन इरादा कर लिया कि अन्नदाता से अज कर पडितजी के अहसानो की कीमत चुका दी जाये। ताकि उनके इरादे कामयाब हो सकें। मैं भी अपने इस इरादे से जनानी ड्योढी के कुचक्र को कुचल देने के लिए उतावली हो रही थी।

--जब आधी रात महफिल से उठकर मेरे हुजूर कन्धे पर अपना हाथ रखते हुए चलने लगे तो मैंने निश्चय कर लिया था कि इस मौके पर अपने मन की बात कह दूंगी। महल म कदम रखते हुए अन्नदाता ने सवाल कर ही लिया-- रस ! अब तो तुम खुश हो !'

- 'आपके कदमो की इनायत है। मैंने अपने दाहिने हाथ की अगुलियाँ आँखो से लगाते हुए विनम्रता के स्वर म कहा था।

-- रस ! न जाने क्या होगा ? हमे बहुत फिक्र रहने लगा है रियासत का। एक ओर मराठा लुटेरा होल्कर रात दिन धमकियाँ भरी चिट्ठियाँ भिजवा रहा है न जाने किस रात वह पिशाच इस शहर को लूटने के लिए आ धमके। अमीर खाँ--जिस पर हमेशा एतबार किया--वह भी दुश्मन बन बठा। लुटेरों से मिल कर रियासत को लूटने की साजिश कर रहा है। ऐसे कठिन समय मे कोई मुसाहिब भी विश्वासपात्र नही है।

- मैंने अवसर का लाभ उठाते हुए कहा-- यह बांदी आपके राज मामला म दखल दे सकती है ?'

- रस ! तुम्हें पूरा हक है आप राज्य की मलिका हो ! और जगतसिंह तो तुम्हारी मुट्ठियों म बन्द है।

- हुजूर ! ऐसा न कहिये ! मैं तो तो आपके कदमो की धूल हूं।

- रस ! अभी भी तुम हमें पराया समझती हो ?

- नहीं, अन्नदाता ! ऐसी कोई बात नहीं है।

– तुम हमारी जिन्दगी मे गुलाब की गन्ध बन कर आई हो। हमारे दिल पर ही नहीं रियासत पर राज करो। सियासी मामलो म दखलन्दाजी रखने का तुम्हे पूरा हक है।"

– मेरी नजर मे एक काबिल आदमी है।"

– क्या कहना चाहती हो ?"

– गर उस मुसाहिब के ओहदे पर बिठा दिया जावे तो आपका भार हल्का हो सकता है। अमीर खाँ का जाल तोडा जा सकता है।"

– तुम हमारा कितना खयाल रखती हो ?"

–' अन्नदाता ! मैं किस काबिल हूँ —अपनी पलकें झुकाते हुए मैंने अर्ज किया।

– खबर भिजवा दो ! हमें भी विश्वस्त आदमी की आवश्यकता है।"

–'प शिवनारायण मिश्र—जो जाति से ब्राह्मण तथा पढा लिखा आदमी है—उसे " मैं अपनी बात पूरी भी न कर पाई थी कि उन्होंने हँसते हुए कहा—रस ! ब्राह्मण ! ब्राह्मण तो देवता हैं—ये क्या राज समालेंगे ? इन्हें तो ज्योणार का न्यौता भिजवा दो ! लड्डू कचोरी जिमाओ ! दक्षिणा देकर आशीर्वाद लो !'

— अन्नदाता ! मिश्रजी अन्य ब्राह्मणो की तरह पेटू नहीं हैं बहुत ही नक और काबिल आदमी हैं राज्य के प्रति वफादारी ही उनका मजहब है और अपनी अनुभवी आँखों से मुश्किलें सुलझाने म माहिर समझे जाते रहे हैं। आपका कहना भी झूँठ नहीं है लेकिन यह भी सच है कि ब्राह्मणों ने ही हमेशा राज्य की रक्षा की है। उनका अखण्ड तेज और दूरदर्शिता पूर्ण दृष्टि से बधी हुई राज्यसत्ता कभी खण्डित न हो सकी। आचाय चाणक्य भी ब्राह्मण था—जिसने चन्द्रगुप्त को सिंहासन पर बिठाया। आज भी मुगल बादशाहों की सल्तनत ब्राह्मण वजीरों क इशारा पर तथा सत महत और पीर-पगम्बरों की दुवा से ही चल रही है।"

—रस ! तुम तो पूरी पंडिताइन हो ! राजनीति मे भी गहरी दिलचस्पी रखती हो ! कल से रियासत का काम तुम ही देखोगी। हमें आराम की जरूरत है हमें इन झमटो से मुक्ति दो ! मिश्रजी को मुसाहिब बना दो !—महाराजा न अपने-आपको चिन्ता-मुक्त करत हुए सारा बोझ मेरे नाजनीन कन्धों पर डाल दिया।

—दूसरे ही दिन पंडितजी की हवेली पर बग्गी जा पहुँची और हुलदारे के साथ वे तसरीफ लाये। उन्होंने हमेशा की तरह अदब के साथ नमस्कार करते हुए अर्ज किया—"रानीजी ने कैसे याद फरमाया।'

—उस क्षण मैं अपने भीतर दोहरी जिंदगी जी रही थी। मुझे खयाल आया कि आदमी महज मतलब के लिए संस्कृति की बेशकीमती कीमतों को ठुकरा कर सत्ता के साथ चिपक जाना चाहता है। मिश्रजी मुझे खुश करने के लिए अपनी मर्यादाओं को भी भुला बैठे थे।

— रियासत को आपकी सेवाओं की जरुरत है।'

— 'आपका जैसा हुक्म।"

— मुसाहिब का ओहदा आपको बख्शीस में दिया जाता है लेकिन यह ध्यान रहे कि आप किसी पर इत्मीनान न करें। अन्नदाता को किसी भी तरह की तकलीफ महसूस न हो। मैं नहीं चाहती हूँ कि उनकी रंगीन-मिजाजी में किसी तरह का दखल हो।

—'आप इत्मीनान रखें। किसी तरह की शिकायत सुनने को न मिल सकेगी।"

—इस खबर से सारी रियासत में तहलका मच गया और जनानी ड्योढ़ी को तो साँप ही सूँघ गया। जागीरदारों और अधिकारियों को अचरज हुआ। किसी की भी हिम्मत न थी कि मेरे हुक्म पर ऐतराज कर सके। मैं बेफिक्र हो चली। मिश्रजी राज काज देखने लगे, जो काम महाराजा के लिए जरुरी था—उसे मैं खुद देखने लगी—उन तक खबर भी न पहुँच पाती। मेरी खिदमत में एक अहलकार—जिसका नाम बनेसिंह था—वह इत्मीनान का आदमी सिद्ध हुआ। वह जगीरदारों रावराजाओं और सेठ-साहूकारों के मुँह लगा हुआ था। हर रात वह राजदरबार और राजमहल की घटनाओं का पूरा ब्यौरा सुना देना अपना फर्ज समझता था। उसी से मुझे मालूम हुआ था कि मेरी बढ़ती हुई ताकत से मामोद के नाथावत और दूनी के रावराजा सख्त नाराज हैं। उनकी नजर में मुसाहिब भी—मेरा अपना ही आदमी है जो मेरे इशारों पर खेल खेलता रहता है। बनसिंह ने ही बताया था कि वे लोग मिश्रजी का आदर नहीं करते अपितु मजाक उड़ाया करते हैं। लेकिन मैंने भी उनकी कभी परवाह न की।

—दूनी के राजा चाँदसिंह की जमीं का मामला उलझा हुआ था। जो जागीर उनके हक में थी—उस मामले में आपसी मतभेद था। उसी मुकदमे का

फमता महाराजा के हाथ से होना था। अन्नदाता तो बेखबर थे ही और मिश्रजी ने मेरे पास ही उनकी मिसल भिजवा दी थी। मैं भी नहीं चाहती थी कि रावराजा को नाराज किया जाये या उनकी इज्जत को ठेस पहुँचाई जाये लेकिन यह दिली तमन्ना जरूर थी कि रावराजा को मेरी ताकत का अहसास करा दूँ ताकि वह यह न समझे कि किसी मामूली औरत से उलझ रहे हैं। मेरा इरादा था कि रावराजा को अपने महल तक आने को मजबूर कर दूँ।

—चाँ सिंह ! तुनी का रावराजा, स्वाभिमानी और अपनी बात का पक्का धुनी रहा। उसने टूटना सीखा था झुकना नहीं। अपनी जिद के खातिर बीरगढ़ पर चढ़े होने को आमादा हो गया लेकिन मजबूरियों के कारण समझौता करना न सीखा। वह एक बहादुर आदमी खुद अपने दस्तखतों से इतिहास बनाने वाला सिद्ध हुआ। मुझे भी उसकी अहमियत पर नाज है और फक्र करती हूँ कि अन्नदाता के इर्द गिर्द ऐसे चुनिंदे बहादुर भी हैं। उसे मालूम था कि उसका मुकदमा रसकपूर के पास है—और वह उसके खिलाफ फैसला सुनायेगी—फिर भी उसने कभी मेरे महल की ओर कदम बढ़ाना तो दूर रहा—मुँह भी न किया। न कभी सिफारिश ही कराई और न किसी से दबाव ही डलवाया। मैंने खुद उसे बुलावा भिजवाया लेकिन उसने जवाब भी न भिजवाया। मैं उसके आने की इन्तजार करती रही और वह दरबार में पहुँच कर अन्नदाता से अपील कर बैठा। उसने चढ़ाई पर की चाल चली थी लेकिन मैंने भी चाल ऐसी चली थी कि उसका घोड़ा प्यादे से ही पिट जाये।

—महाराजा ने उसकी अपील खारिज करते हुए आदेश दिया—"रसकपूर ही इस मुकद्दमे पर फैसला सुनायगी।"

—"अन्नदाता ! आप हमारे महाराजा हैं !"

—"चाँदसिंह ! हमने हमेशा तुम्हारी सलाह मानी है, और तुम जैसे बहादुरों पर गर्व किया है। रानीजी के पास चले जाओ। जैसा चाहो—वैसा ही फैसला लिखवालो !"

—"अन्नदाता ! अपराध क्षमा करेंगे।"

—जगतसिंह चाँदसिंह के मुँह की ओर देखने लगे।

—"महाराज ! हम भी ठाकुर हैं रजपूती खून इन नसों में है, आप हमारे मालिक हैं और हम आपके खुद भया। हमारी प्रतिष्ठा आपकी प्रतिष्ठा है।

—"क्या कहना चाहते हो चाँदसिंह !"

–' अन्नदाता ! यह फसला आप ही करेंगे ।"

–' रानीजी क्यो नहीं ?"

– 'मैं वहां तक जाना उचित नहीं समझता हूं ।'

– 'हमने सारा राजकाज उन्हें सभला दिया है, जब वे निष्पक्ष फसला दे रही हैं तो तुम्हें क्या आपत्ति है ?'

– मुझे विवश न करें !"

–' चांदसिह ! यह फसला रानीजी ही करेंगे ।"

—रानी ! नहीं, नही ऐसा न कहिये ! वह पातुर ! और हम सरदारों का फसला ! अन्नदाता ! चांदसिंह का वश इतना पतित नहीं हुआ है कि वह भगतणों की मेहरवानी पर जिन्दा रहना सीखे !'—चांदसिंह भावावेश मे अपनी पीडा को व्यक्त कर गया ।

– चांदसिह ! बकवास बन्द करो !"—जगतसिंह का स्वर तीव्र हो उठा ।

–"अन्नदाता ! यह हम सभी का अपमान है"—उसने बठे हुए जागीरदारों और ठाकुरो के मुंह की ओर देखते हुए कहा ।

–' चांदसिंह ! तुम्हारी यह मजाल ? हमने जिसे रानी बनाया, उसके लिए तुम्हारे इतने ओछे शब्द ! हम कभी सहन नही कर सकते । रसकपूर इस रियासत की रानी है हम उसके बारे म कुछ भी सुनना पसन्द नही करते ।'

–'क्या एक भगतण के कारण हम रजपूत अपनी इज्जत उसके कदमो पर रखकर कुत्तो की तरह जिन्दगी जीयें ?'

– चांदसिह ! बन्द करो ! वर्ना । महाराजा जगतसिंह ने उसकी ओर क्रोध भरी दृष्टि से देखते हुए कहा ।

—दरबार मे अजीब सा सन्नाटा छा गया । सभी दरबारी महाराजा के क्रोध से भली भांति परिचित थे । न जाने कितने ही भले आदमी अपनी छोटी सी भूल या जिद के कारण फांसी के फन्दे पर झूल चुके थे । ठाकुर और सरदार सिर झुकाकर रह गय एक भी स्वर उस वीर के समर्थन म न उभर सका, लेकिन वह सिंह उस ज्वालामुखी के सामने अडिग खडा हुआ अपना सकल्प दुहरा रहा था । वह अपने अपमान को पीकर समझौते के लिए कभी प्रस्तुत न हो सकता था । रसकपूर महाराजा जगतसिंह के लिए सवस्व थी, देवी थी प्राणों से भी अधिक प्रिय थी किन्तु उस सिंह की दृष्टि मे वहया पातुर के सिवा कुछ नही । उसकी

निर्भीकता देखकर महाराजा भी नम हुए और उन्होंने रावराजा से प्रश्न किया —
'चांदसिंह ! तुम्हें रसकपूर से घृणा है ?"

—'नहीं महाराजा !"

—'चिढ़ है ?'

—"नहीं महाराज !"

—"तब क्या दुश्मनी है ?"

—' औरतों से चांदसिंह की कभी दुश्मनी हो सके—यह असंभव है !"

—' फिर क्यों नहीं जाना चाहते हो ?"

— मैं आपके कदमों में बैठकर ठोकर खाने में अपना गौरव अनुभव करता हूँ, आपके एक इशारे पर मां भवानी की सौगन्ध ! अपने प्राण देकर माटी का कर्ज चुकाना अपना पवित्र धर्म समझता हूँ इस राज्य के लिए और आपके लिए इस देह के रक्त की एक-एक बूंद समर्पित है ! किन्तु महाराज क्षमा करेंगे ! जो औरत कल तक कांच महल में महफिल लगा कर कदम थिरकाती रही ठाकुर, रईस और जागीरदारों का जी बहलाती रही उसे आज मैं अपने ललाट पर चन्दन की तरह लगाऊँ ? उस पातुर को इस रजपूत की प्रतिष्ठा से खेलने की आज्ञा न दीजिए !'

— चांदसिंह ! यह क्यों भूल रहे हो कि रसकपूर हमारी महारानी है ।

—' आपका सम्मान मेरा अहं है ! मेरा जन्म ही तभी सार्थक है जब आपकी प्रतिष्ठा के लिए समर्पित रहूँ ।"

—' रसकपूर इस रियासत की अधीश्वरी है उसका सम्मान हमारा सम्मान है उसका अपमान हमारा अपमान है । हमारा आदेश है कि उसके सम्मान के विरुद्ध एक भी शब्द न कहोगे !'

—' महाराज ! यह असंभव है !"

— 'बागी बनने जा रहे हो चांदसिंह !" —जगतसिंह ने आक्रोशी स्वर में कहा ।

—' मैं रियासत का वफादार सिपाही हूं —उसने सिर ऊंचा करते हुए कहा ।

— इस जिद का परिणाम जानते हो ?"

—' मौत !' —कह कर उसने सिर झुका लिया ।

— चांदसिंह ! तुम मौत चाहते हो ! और हम तुम्हें जिन्दा रखना चाहते हैं हम नहीं चाहते हैं कि तुम जैसे काबिल आदमी को फांसी के तख्त तक ले जाया जाये !

—'अन्नदाता ! मैं मेरे लिए कुछ नहीं कह रहा आपकी और राज्य की प्रतिष्ठा के लिये निवेदन कर रहा हूं । इतिहास इस बात का साक्षी है कि रजपूतों ने रक्त दे दिया है किन्तु अपनी पगडी नहीं । यदि मेरा कोई अपराध हो तो आपकी तलवार की तीखी धार से अपना सिर कटाने में गौरव अनुभव करूंगा लेकिन रसकपूर की कलम से लिखा गया मेरे हक मे फैसला मौत से भी बदतर होगा । मैं यह अपमान कभी सहन न कर सकूंगा ।

—उसकी दृढ प्रतिज्ञा सुनकर दरबारी स्तब्ध रह गये उनके हृदय कांपने लगे और उनके सामने एक और मृत्यु नृत्य करने लगी । महाराजा जगतसिंह के ललाट पर पसीना छलक आया और जीवन में पराजय का बोध डगमगाने लगा । अन्नदाता ने चारों ओर देखा और फिर गहरी निश्वास के साथ आज्ञा दी – आज से सभी रावराजा राणा ठाकुर जागीरदार तथा मुसाहिबों को रसकपूर का राजा की तरह सम्मान करना होगा उनका आदेश जयपुर रियासत के महाराजा का आदेश होगा ।

—'अन्नदाता ! मेरा अपराध क्षमा हो ! मैं इसमें सहमत नहीं हूँ । मैं उस किसी भी जलसे या महफिल में सम्मिलित न हूंगा – जिसमें रसकपूर होगी । — चांदसिंह ने दृढता के साथ संकल्प प्रकट किया ।

—'चांदसिंह ! आज के बाद तुम इस दरबार में कभी उपस्थित न होओगे । आज तुमने जो व्यवहार किया है—वह क्षम्य नहीं है । हम तुम्हें प्राण दंड तो नहीं देंगे किन्तु तुम्हें क्षमा भी नहीं कर सकते । तुम्हारे इस अपराध के लिए दो लाख रुपये जुर्माना किया जाता है' —कहकर महाराजा जगतसिंह सिंहासन से उठ गये और रनिवास की ओर प्रस्थान कर गये ।

—सभा सन्न थी किन्तु चांदसिंह अपने स्थान पर खड़ा हुआ अपने संकल्प को दुहरा रहा था । उसे अपने अपमान पर बेहद क्रोध आ रहा था । भरी सभा में एक भगतण के कारण उसकी रजपूती पगड़ी उछल दी गई । उसने निश्चय कर लिया कि वह भूखा मर जायेगा किन्तु पातुर के आगे कभी सिर न झुकायेगा ।

—मुझे मेरे विश्वस्त आदमी ने बताया कि चांदसिंह ने किसी से कुछ न कहा और न जनानी ड्योढ़ी की ओर ही कदम रखा । दरबारे खास से निकल कर वह बाजार की भीड़ में खो गया ।

—मुझे उस दिन चांदसिंह पर बेहद क्रोध आया था और उसके मद को कुचल देने के लिए मैं उतावली हो चली थी लेकिन आज उस बहादुर आदमी के प्रति हृदय से सम्मान प्रकट करती हूं । जिस आदमी ने अपमान के घूंट पीये और एक लम्बे समय तक अपनी बदनामी तथा बेइज्जती को बर्दाश्त करता रहा ।

□ नौ

—महाराजा जगतसिंह का आदेश सभी के लिए चिनगारी बन गया। राजा, रावराजा और सरदारों के चेहरे पर अजीब सी परेशानी उभर आई। सभी को अपना अस्तित्व क्षणभंगुर अनुभव हुआ। कोई भी तो नहीं चाहता था कि रसकपूर के कदमों पर अपनी पगड़ी रख दे। एक-दूसरे की नजरें पढ़कर कुटिल मुस्कुराहट के साथ बिखर गये। किसी ने किसी से कुछ भी न कहा एक ही भय था, जैसे कोई परछाई उनकी पीठ में छिपी हुई हो और मन का राज पहचान गई हो। वह घटना महाराजा जगतसिंह के लिए एक नई समस्या बन गई।

—उस घटना से मुझे बेहद दुःख हुआ। मैं कभी नहीं चाहती थी कि मेरे कारण गृह-कलह पैदा हो और महाराजा की ताकत अपने ही आदमियों को दबाने में लग जाये। मैं किसी से सम्मान पाने की अपेक्षा न रखती थी लेकिन अपमान सहना भी मेरे वश की बात न थी। मेरा क्या गुनाह था? अन्नदाता ने मुझे सम्मान दिया और दरबारी मुझे नफरत की आँधी या महल की गंदगी समझ कर मेरी बेइज्जती करते रहे। मेरा मन अवश्य खिन्न था, लेकिन मैंने किसी से कुछ कहा नहीं। अन्नदाता से भी जिक्र तक न किया। बनावटी मुस्कुराहट के साथ अपना दर्द सिमेट कर चुप रह गई। अन्नदाता अवश्य उदास हो गये थे, उनके मुख

पर परेशानी के निशां उभर आये। उनकी उदासी को ताड़ने के लिहाज से मैंने प्याले में शराब उन्डेली और उनके अधरों से प्याला लगाते हुए कहा— दरबार मुझसे नाराज हैं?

—'रस! तुमसे नाराज होने का सवाल ही पैदा नहीं हो सकता।'

—सरकार का जवाब सुनकर मैं अपना दर्द भुला बैठी और अपनी बेइज्जती का खयाल मेरे मन से जाता रहा।

— 'रस! हमारे दुश्मन दिन व दिन बढ़ते जा रहे हैं'—चिन्ता के स्वर में महाराणा ने कहा।

—'नहीं अन्नदाता! आपका कोई दुश्मन नहीं है लेकिन यह सच है कि कुछ लोग मुझसे नाराज हैं।"

— रस! हम उनकी परवाह नहीं है। यदि कोई हमारी जिन्दगी में हस्तक्षेप करेगा तो हम उसे कभी बर्दाश्त नहीं कर सकते। किसी एक ठाकुर के लिए हम अपने दिल का चैन गवा बैठें? यह नामुमकिन है! रस! हम जागीरदारों और ठाकुरों को ठुकरा सकते हैं लेकिन तुम्हें नहीं —कहते हुए अन्नदाता ने मुझे अपनी मांसल भुजाओं के पाश में सिमट लिया। उस क्षण मैं अपना अस्तित्व भुला बैठी।

— अन्नदाता! मेरी एक छोटी सी अर्ज है!'

— रस! तुम्हारा हुक्म है।

— मेरे खातिर आप किसी ठाकुर को नाराज न कीजिए।'

— हम कब चाहते हैं कि किसी के मन में कटुता पैदा हो! चार्तसिंह की वीरता से हम प्रसन्न हैं इसी कारण आज उसे जीवन दान दे दिया अन्यथा उसका सिर तुम्हारे कदमों के नीचे लुढ़का हुआ होता!

— उसे माफ कर दीजिएगा।

— नहीं रस! यह हमारे वश की बात नहीं है। जगतसिंह ने सजा देना सीखा है अपना फैसला बदलना नहीं इससे तो यह अच्छा है कि हम यह गद्दी छोड़ कर तुम्हारे साथ किसी दूसरे शहर में चले जायें।

— मैं कुछ भी न कह सकी।

— रस! इस जगत में राजा भी स्वतंत्र नहीं है, उसे भी अपने सामन्तों की रुचि के अनुसार नृत्य करना होता है राजा की अपेक्षा आम आदमी होना जीवन की सार्थकता है।'

—'सरकार! सभी तो आपकी भ्रकुटि के इशारे पर आपके शासन में सिर झुकाते हैं और अपना फर्ज निभाने के लिए हर घड़ी तैयार रहते हैं, आप तो भाग्यशाली महाराजा हैं!'

—"रस! हम जानते हैं कि तुम हमारी पीड़ा को पी जाना चाहती हो लेकिन तुम्हारी पीड़ा के समुद्र का क्या होगा?"

—'अन्नदाता! मैं बहुत खुश हूँ।"

—'हम तुम्हारी खुशी का अर्थ समझते हैं।'

—सरकार! मेरी उदासी का महज कारण एक ही है कि दिन भर इस महल में ऊब जाती हूँ।'

—'दरबारे-खास में आ जाया करो।"

—'सरकार! मेरी दिली-ख्वाहिश है कि किताबें पढ़ा करूँ। जिससे मन भी लगा रहे और अपने पुरखों का गौरवपूर्ण इतिहास भी समझ में आ सके।'

—महाराजा मेरे मुख की ओर देखने लगे।

—'मुझे पोथीखाने तक जाने की इजाजत दीजिए!

—रस! आज से पोथीखाना ही तुम्हारा है यह नजराना हमारी ओर से मंजूर करो!'

—मैं उस दिन बहुत प्रसन्न हुई थी। मेरी जिन्दगी में यह सौभाग्य था कि किसी महाराजा ने अपनी निजी सम्पत्ति प्रेम के नाम पर निछावर की हो! आपको अचरज नहीं करना चाहिये लेकिन यह हकीकत है कि रियासत के इतिहास की पहली औरत हूँ जिसे वहाँ तक पहुँचने की इजाजत मिली थी।

—महाराजा के इस नजराने से सभी हैरान थे। आम आदमी की समझ से बाहर थी। मेरी दिली तमन्ना के मुताबिक मुझे तोहफा मिला और मैं रोजाना पोथीखाने में आने-जाने लगी। वहाँ एक से एक खूबसूरत तस्वीर जिसमें कला सौन्दर्य का बाना पहिने कलाकारों की गरिमा मुँह जुबानी बयाँ कर रही हो! श्रेष्ठ से श्रेष्ठ सुन्दर लिपि में लिखी गई पांडुलिपियाँ देख कर तो मेरा मन मयूर की तरह नाच उठा। इलायची के छिलकों से बने कागज पर सोने के अक्षर चित्र की तरह मन को लुभावने लगते हैं भोज-पत्रों पर लिखी वैदिक ऋचायें प्राचीन भारत की गरिमा को प्रकट करती हैं। कवियों और शायरों के भाव सांगानेरी कागज पर इस तरह बिखरे हुए हैं जैसे कुशल हाथों से छापे गये सुन्दर चितराम हों!

८

—मैं रोजाना वहाँ से किताबें ले आती और अपने सूनेपन को काटने के लिए पढ़ा करती। मुझे किताबें पढ़ने में बहुत आनन्द आने लगा था लेकिन अब आपसे क्या छिपाना? यह सूनापन और अलगाव भी राज बन गया था।

—वह राज क्या था? सिर्फ यह कि मैं मां बनने वाली थी।

—यह खबर सिर्फ रतना को ही थी। उसने भी साफ शब्दों में मनाह कर दिया था कि यह राज मैं किसी से भी न कहूँ। यदि अन्नदाता के कानों में भनक भी पड़ जायेगी तो आपका इन महलों में रहना दूभर हो जायेगा। यह पहला अवसर न था—इससे पूर्व भी मैं दो बार माँ बनने का सौभाग्य प्राप्त कर सकती थी लेकिन उनकी खुशी के लिए मैंने अपने ही हाथों से ममत्व को कुचल डाला। मैं भावी भय से डर गई। रतना ने इस बार भी मुझे अनेक उपाय बतलाये लेकिन मैं भ्रूण हत्या के लिए सहमत न थी। मैं इस बार फिर पाप नहीं करना चाहती थी और न अन्नदाता से ही छिपाकर कुछ रखना चाहती थी। रतना का कहना था कि सरकार से कुछ भी न कहा जाये और मेरा मन बार बार मुझे विश्वास दिला रहा था कि वे इस खुश खबरी को सुन कर झूम उठेंगे और सारे शहर में रोशनी के लिए ऐलान फरमायेंगे।

—आखिर यह राज राज न रह सका। जब मैंने अपने दिल की बात सरकार से कह ही दी—लेकिन मेरे इरादों पर पानी बह गया, रतना की आशंका हकीकत में बदल गई। वे इस खबर से खुश नजर न आये। मेरा दिल बैठ गया और ममता चीख कर मन ही मन घुटने लगी।

—मैंने क्या पाप किया था?

—मुझे उनकी नाराजगी स्वीकार न थी। मैं अपनी कोख में पल रही औलाद को नफरत की निगाह से देखने लगी। सरकार ने खुशी जाहिर न की लेकिन मुझे महल से निकाला भी न गया। अन्नदाता ने मुझ पर इतनी मेहरबानी की—मैं अपनी बच्ची को जन्म देने में कामयाब हुई। मैं बाँझ न रह सकी। माँ बन चुकी थी। आज न जाने वह बच्ची कहाँ होगी? वह अनाथ अपनी माँ का नाम भी न जानती होगी। एक अभागिन माँ अपनी औलाद के लिए संघर्ष न कर सकी। भेड़ के मेमने की तरह मेरी सुकुमारी सी बच्ची को अनजान हाथों में सौंप दिया गया और मेरे आँखों में बाढ़ रहते हुए भी आंसू खुश्क होकर रह गये। इस बद किस्मती को पाकर भी मैं अधीश्वरी कहलाती रही। इतिहास ने मेनका के चरित्र पर कीचड़ उछाला, उसकी ममता को कोसा और धिक्कारा, किन्तु मेनका का क्या दोष था? पराये हाथों में झूलती हुई कठपुतली कभी अपनी इच्छा से नृत्य नहीं

कर सकती है। मेरी और मेनका की स्थिति में कोई साम्य नहीं है, वह अप्सरा है और मैं तवायफ। वह इन्द्र की इच्छा से बनी हुई और मैं अपने दुर्भाग्य से। उसने अपने हाथों से शकुन्तला का परित्याग किया और ज़माने ने मेरे हाथों से मेरी औलाद को छीना। वह अपनी लाडली को समय-समय पर सम्भालती रही और मैं उस अभागिन का मुँह देखने के लिए उम्र भर तरसती रही हूँ और इस उम्र में शायद ही उसे देख पाऊँ।

—रानी के औलाद जन्म लेने पर राजकुमार या राजकुमारी का जन्म होता है। श्री कृष्णजन्माष्टमी की तरह सारे शहर में जश्न का आलम रहता है और घर घर घी के चिराग रोशन किये जाते हैं। सारा शहर शुभ रानी कहता यहाँ तक कि अन्नदाता भी, लेकिन मेरी औलाद को किसी ने राजकुमारी न कहा। वह रानी की कोख से जन्म लेकर भी भिखारिन रही। मैं गैरों को ही गुनहगार साबित किये जा रही हूँ जबकि हकीकत यह है कि मैं खुद गुनहगार हूँ मैंने महज अपने ऐशो-आराम के खातिर अपनी औलाद की परवाह न की। शहर की खुशी का सवाल तो दूर रहा, मैंने भी खुशी जाहिर न की। उस नादान के मासूम अधरों पर दो बूँद आँसू भी न टपका सकी। मुझे अपनी माँ की विरह वेदना का दुहराना पड़ा।

—मैं आपसे सच कहती हूँ कि उनकी खुशी के खातिर मैंने हँसते हुए इन ज़ख्मों को बर्दाश्त कर लिया अपने उरोजों की तपिश और दिल की कशिश दबा कर चुप रह गई, कभी भी अपनी ज़ुबाँ पर उफ तक न उभरने दी—आवाज़ या नाले तो दूर की बात है। उस घटना को इस तरह भुलाया कि मानो अभी भी कुँवारी कुन्ती हूँ—जिसने दर्द जाकर भी निश्वास तक व्यक्त न किया। राज महल में एक अनोखी परम्परा है कि महारानियाँ अपनी औलाद को अपनी गोद में नहीं ले सकती धाय ही उनका पालन करती हैं—इसी विश्वास में जीती रही लेकिन मेरी चेतना के साथ जो विश्वासघात हुआ—वह जाहिर है।

- मेरी कुर्बानी तबाह हो गई और मेरे द्वारा किये गये गुनाह पर हस्ताक्षर सियाह हो गये बल्कि उन दिनों मेरे भगवान जिनकी सेवा में पुजारिन की तरह पवित्र रही—मुझमें अपमने से रहे मेरे सरकार मुझसे रूठे रूठे से रहने लगे। मैंने उन्हें रिझाने, उनके दिल से वहम निकालने के लिए हरचन्द कोशिश की। एक लम्बे इम्तिहान के बाद उन्होंने ऐतबार किया कि रसकपूर के दिल में औलाद के प्रति किसी प्रकार की तपिश नहीं है जब मेरे देवता ने मुझे फूल चढ़ाने की इजाजत दी। मैंने भी अनुभव कर लिया था कि औलाद पैदा करने के कारखाने महारानियाँ

या पडदायतें ही है न कि किसी पातुर को हक है। पातुर न किसी के साथ बँधकर जिन्दगी जीने का हक रखती है और न ही किसी के नाम से ही औलाद पैदा कर अपने-आपको खुशकिस्मत ही कहला सकती है।

—कितनी अनोखी बात है? आपके लिए नहीं सिर्फ तवायफ के लिए।

—एक पातुर रियासत पर राज कर सकती है अपने भुठलाये अधरों पर जनता के देवता का *आचमन का अधिकार देकर उसे सौभाग्यशाली बना सकती* है लेकिन किसी शहजादे या शहजादी को पैदा करना उसके लिए गुनाह के सिवा कुछ नहीं।

—मैंने भी इस अभिशाप को वरदान बनाने की असफल चेष्टा की।

—रतना के मन में अवश्य दर्द था और मेरी वेदना के प्रति सम्वेदना भी लेकिन वह तो सिर्फ एक दासी थी—जिसकी खुद की मजबूरियाँ ही काफी थी। वह मुझे झूठा विश्वास दिलाती हर क्षण एक नई किरण का बहाना देती। जीने के लिए यह भी कम न था।

— मैंने बनेसिंह से अवश्य कहा था कि वह मेरी औलाद की खबर लाये उसने बहुत यत्न किये थककर हार गया उसे भी कामयाबी न मिल सकी। जो औरत रियासत को मुट्ठियों में रख कर महाराजा पर शासन करती उस औरत में इतनी सी हिम्मत न रह सकी कि वह अपने रक्त से उस फूल के हालात भी पूछ सके।

—आखिर मैंने विश्वास कर लिया कि मेरी औलाद मर चुकी है।

—मैं अपने जख्मों को भर भी न पाई थी कि उन्हीं दिनों एक नया वाकया गुजरा। *दुश्मनों को मौका मिला और उन्होंने मुझे तबाह करने का पक्का* इरादा कर लिया। कुन्दन ने जनानी ड्योढ़ी में खबर फैला दी कि मेरा बनेसिंह से नाजायज रिश्ता है महाराजा की गैर मौजूदगी में उसके साथ गुलछर्रे उड़ाती रहती हूँ। यह खबर अफवाह बनकर सारे शहर में फैल गई। रतना ने जब डरते हुए मुझे बताया तो मेरा दिल ही बैठ गया। मेरे पाक इश्क की तौहीन करने वाले मुझे बदचलन कहने से नहीं चूके। मेरी चूनरी पर दाग लगाने से नहीं हिचकिचाये।

—मैं नागिन की तरह फुफकार उठी। यद्यपि मेरा कोई चरित्र नहीं है लेकिन यह हकीकत है कि तवायफ का दामन पाक रहता है और उसका अपना चरित्र होता है। आम औरत उसकी तुलना में ठहर नहीं सकती है। *एक मामूली* आदमी के साथ मेरा नाम जोड़ कर जो कीचड़ उछाला गया, वह मेरी बेइज्जती

रही, सरकार के मुंह पर कालिख पोतना था। महाराजा के कानों तक चापलूस खिदमतगारों और खुशामदियों के द्वारा यह बात पहुँचाई गई, एक बार नहीं अनेक बार।

—सरकार मुझ पर कभी सन्देह नहीं कर सकते थे किन्तु एक ही पत्थर पर बार बार रस्सी के रगड़ने पर भी निशा हो जाता है तो इन्सान के दिल की बात तो क्या? फिर भी उन्होंने मुझे पाक दामन समझा और मेरे पवित्र प्रेम पर विश्वास के पुष्प ही अर्पित किये। अन्नदाता ने मुझसे कभी कुछ न कहा लेकिन बनेसिंह पर पाबन्दी लगा दी गई कि वह मेरे महल के भीतर कदम न रख सके। इस तरह कुन्दन अपनी योजना में सफल हो गई। वह मेरे प्रति तो उनके दिल में नफरत की बू को जन्म न दे सकी लेकिन प्रश्न चिह्न तो उपस्थित करने में सफल हो गई।

—बनेसिंह विश्वस्त व बहादुर नौकर रहा। वह राजपूत शरीर से हृष्ट पुष्ट तथा सुन्दर भी था किन्तु मैंने उसकी सुन्दरता की ओर कभी नजर भी न उठाई, केवल उसकी नेक नीयती, ईमानदारी और वफादारी की सराहना की। वह एक ऐसा आदमी रहा जो वक्त-बेवक्त पर मुझे खबर देता रहता था तथा मेरी भलाई बुराई में अपना समय लगाता रहता। उसके मन में मेरे प्रति कोई दुर्भाव हो—यह कल्पना भी नहीं की जा सकती फिर इन्सान के दिल का कोई भरोसा भी नहीं। यदि उसके दिल के किसी कोने से मेरा नाम बँधा हुआ हो तो उसने कभी जाहिर न होने दिया फिर उसकी क्या मजाल थी कि वह इतना दुस्साहस करता। मैं सरकार के इस कदम से कुढ़ गई थी लेकिन ऐसा कोई कदम नहीं उठाना चाहती थी—जिससे शक विश्वास में बदल जाये और चुप भी नहीं रहना चाहती थी। एक दिन सरकार ने खुद ही सवाल पैदा कर दिया—'कुछ लोग साजिश करने में लगे हुए हैं।

—'क्या कोई नई बात है?'—मैंने अनजान बनते हुए कहा।

—'हाँ, रस! तुम्हारा बढ़ता हुआ प्रभुत्व और हमारे प्रेम को देख कर दरबारी कुढ़ने लगे हैं।'

—"नहीं सरकार! दरबारी तो बहुत सुना हैं लेकिन — … ।

मैंने आगे कुछ भी न कहा। उनकी आँखों में अपना रूप देखकर खिल खिलाकर हँस पड़ी।

—'कहो भी, क्या कहना चाहती हो?'

—'छोड़िये ! बात बढ़ाने से भी क्या ?

—'रस ! आज हमसे कुछ छिपा रही हो !'

—'नही, अन्नदाता ! यह औरतो का झगड़ा है आप इस झमेले मे न पड़िये !'

—'क्या जनानी ड्योढ़ी विलाफत कर रही है।'

—'जनानी ड्योढ़ी मे तहलका मचना स्वाभाविक है आपने हद से ज्यादह सम्मान जो दिया है उसे महारानियाँ कैसे बर्दाश्त कर सकती हैं ?'

—'रसकपूर ! महाराजा जगतसिंह के खिलाफ कोई रानी सिर नही उठा सकती है —सरकार ने मूँछें के साथ अपने दम को फुलाते हुए कहा।

—'अन्नदाता ! बाँदी का गुनाह माफ करेंगे । आपके खिलाफ कोई खिलाफत नही है यह तो मेरे प्रति नाराजगी है एक ऐसी जलन है जो हर सौत के दिल मे होती है हर औरत अपने आदमी को केवल अपना बनाकर रखना चाहती है। औरत जमीं है और मर्द आसमान। जमीं अपनी आँखों मे आकाश को बाँध लेना चाहती है और एक वहम जीती है कि यह आसमा मेरा है, किसी गैर का नही लकिन यह आकाश इतना विशाल और ऊँचा है कि किसी एक का कभी नही हो सकता। मैं तो आपसे इतना ही अर्ज कर सकती हूँ कि गाह गाह लाडी भटियाणीजी के महल तक जरूर तसरीफ ले जाया कीजिए।'—मैंने अवसर का लाभ उठाते हुए अपने मन की बात कह दी।

— क्या उन्हे भी शिकायत है ?'

— मेरे सरकार ! यह उनकी शिकायत नहीं बाँदी का कुसूर है जो उनके कदमो की धूल है उसने गन्दगी को उठाकर मेरे देवता के ललाट का तिलक बनाना चाहा। एक बदनाम पातुर ने महारानियो का हक छीन लिया उनके भगवान को साकी ने मैकदा मे कैद कर रख लिया। साकी भूल गई कि तेरी जगह कौन सी है ? आप मुझे आजाद परिन्दे की तरह इस पिंजरे से उड जाने दीजिये ! मैं जगल जगल भटक लूँगी आपके नाम पर जी लूँगी लेकिन किसी के दिल की आह को देखना मेरे वश की बात नही है। —कहते हुए मेरी पलकें मछली के परो की तरह सजल हो चली।

— हम लाडी भटियाणी के स्वप्न कुचल देंगे। हम राजा हैं हमे कोई भी बाँध कर नही रख सकता। हमने भटियाणी से विवाह किया है लेकिन इसका यह

अब नहीं है कि हम उनके हाथों बिक चुके हैं। रसकपूर ! तुमने आज तक हम कुछ बताया भी नहीं "—कहते हुए सरकार की भृकुटियों पर धनुष की प्रत्यंचा तन गई।

—सरकार ! मुझे कोई गिला नहीं है उन्होंने मुझसे कुछ कभी कहा भी नहीं। मैंने तो अल्लाह से अर्ज कर दिया है क्योंकि उनके दिल को ठेस पहुँचना महज बात है"– बात छिपाते हुए मैंने शालीनता को प्रकट करना चाहा।

— धनेसिंह के साथ तुम्हारा रिश्ता जोड़ना क्या गुनाह नहीं है ?"

—"आपके मुँह से ये शब्द शोभा नहीं देते।"

— किसी पर कीचड़ उछालने से क्या दिल को चैन मिल जायेगा ?'

— मेरे मालिक ! खफा न होईये ! मैं एक तवायफ हूँ, और तवायफ के साथ किसी भी आम आदमी का नाम जोड़ा जा सकता है।'

—'नहीं, हम यह सब कुछ सुनना पसन्द नहीं करते हैं। रसकपूर का इतिहास कुछ भी रहा हो लेकिन अब हमारे हृदय की राजरानी है।'

— 'अन्नदाता। कोई कुछ भी समझे या कहे मुझे उनसे क्या ? मुझे तो अपने मालिक से जो अमर प्रेम मिला है—उसी की अमर ज्योत जलाकर अंधेरे को पी लूँगी। यह उजाला गैरों को बाँट दीजिए, मुझे मेरा अंधेरा प्रिय लगता है। आपसे सच कहती हूँ कि मेरे मन में किसी तरह की घुटन या खयाल नहीं है। जब आप मेरे हैं तो मुझे राधा का मथुरा से क्या ? मैं तो गोकुल की गलियों में जी लूँगी !

— 'रस ! हमने धनेसिंह पर पाबन्दी लगा दी है।'

— अच्छा किया सरकार ने।'

— 'हमने उस बाँस को काट दिया—जिससे यह जमाना बेसुरा अलाप अलापता है—अब स्वरों का सवाल ही पैदा न हो सकेगा।

—'अन्नदाता ! आप कितना खयाल रखते हैं मेरा ?'

— रस ! हम जमाने की नजर को न बदल सकें हम चाहते हैं कि यह दुनिया तुम्हें प्रेम की प्रतिमा समझ कर पूजे ! आम आदमी यह समझता है कि महाराजा भोगी है और वासना के समुद्र में डूबा कोई मदप जन्तु है लेकिन रस ! मैं भी इन्सान हूँ, और हर इंसान प्रेम के सहारे जीवन जीता है। इन राजकुमारियों के रूप बेदाग हैं और कोमलता भी अनुपम है, हृदय से सम्मान भी करती हैं किन्तु

फिर भी मन को सुख नहीं मिलता जो तुम्हारी बाहुओं में मिलता है। क्या महाराजा को किसी से प्रेम करने का अधिकार नहीं है ? क्या वह अपने प्रेम का सार्वजनिक अनादर सहन करता रहे ? यह उस महाराजा का पराजय है जो इन्सानियत की रूह के साथ दगाबाजी करता हुआ दोहरी जिन्दगी जीने का आदी हो चला है। रस ! तुम हमारी जिन्दगी हो !"

—'इस नाचीज पर मालिक की मेहरबानी है' कहते हुए मैं उनके कदमों पर ऐसे झुक गई—जैसे कमल के नीचे सिवाल बिछ गई हो।

—अन्नदाता ने मुझे अपनी बाहुओं में भर हृदय से लगाते हुए कहा—काश ! हम एक मामूली आदमी होते तो तुम्हारी कद्र और भी अधिक कर पाते ! ईश्वर ने हमको महाराजा बनाकर हमारे पापों की सजा दी है। कोई भी आदमी भोगी बनकर हजार औरतों के जिस्म के साथ खिलवाड़ न करना चाहेगा लेकिन हम राजा हैं हमारे लिए हर गुनाह करना है। हमने एक ही उम्र में अनेक विवाह किये किन्तु अपने आदमी की इच्छा से नहीं बल्कि राजा की हैसियत से। ये शादियाँ राजनैतिक स्वार्थ के लिए राजकुमारियों का बलिदान है वर्ना एक आदमी के साथ राजकुमारियों की फौज ? कोई भी पिता अपनी लड़की का रिश्ता ऐसी जगह न करेगा—जहाँ उसकी बेटी का सुख अधेरे में भटकता रहे ! यही कारण है कि हम भी कहीं बंध कर नहीं रह सकते, किसी एक के नहीं हो सकते ! रस ! तुम भाग्यशालिनी हो। जिसने इस भंवरे को अपने पराग से बाँध लिया।

—'मेरे मालिक ! मैं राजकुमारी नहीं, एक मामूली औरत हूँ !'

— तभी तो अधीश्वरी हो !"

—'यह सब आपकी इनायत है।' कहकर उनकी सहजता के प्रति समर्पित हो गई।

—महाराजा मेरा कितना खयाल रखते ? उन्होंने मेरे लिए क्या नहीं किया ? उनके अहसानों से दबी मेरी चेतना कभी खिलाफत की बू न ले सकी। उन्होंने जितना दिया उतना ही मेरा ग्रह भी आकाश में चढ़ता गया। महाराजा ने जाडा भटियाणी के महल में आना जाना बन्द कर दिया इतना ही नहीं अपितु उसे नजरबन्द कर दिया गया। उस घटना से जनानी ड्योढी में सन्नाटा छा गया और महारानियाँ अपने आपमें भयभीत हो चली। मैंने प्रयास करके भटियाणी पर से नजरबन्दी उठवा दी थी, अब रानी पर किसी प्रकार का प्रतिबंध न था किन्तु सारे शहर में यह अफवाह फैला दी गई कि रसकपूर भगतण ने रानी को बन्द

करवा दिया। महाराजा भगतण के इशारे पर नाच नाचते हैं, यहाँ तक कि रस
कपूर ही राज करती है, महाराजा तो खुद नजरबन्द हैं। मुझे जयपुर की नूरजहाँ
कहा जाने लगा और वह जहाँपनाह जहाँगीर।

—रानी भटियाणी अपनी पराजय पर घायल नागिन की तरह छटपटाकर
रह गई। वह मुझसे बेहद नफरत करने लगी लेकिन मैं उससे नफरत न करती
थी। एक दिन मैंने इरादा किया कि उसके दिल से दाग धो दिये जायें—यह कल्पना
कर रतना के साथ उसके महल तक जा पहुँची। यद्यपि वह मेरे सामने तुच्छ थी,
मेरी कृपा से ही जीवन के शेष दिन महल में जी रही थी मेरा अहं उसके सामने
झुकना नहीं चाहता था लेकिन फिर भी महारानी की इज्जत का खयाल रखते
हुए मैंने झुक कर अदब के साथ उसके कदम छूना चाहा। वह घायल शेरनी की
तरह मुझ पर झपट पड़ी। अपने हाथ से मुझे धक्का मारते हुए दहाड़ने
लगी—"पापिन! वेश्या! मेरी पवित्र देह का स्पर्श न कर।'

— रानीजी! मेरा क्या अपराध है?' —मैंने विनम्रता के साथ प्रश्न
किया

—उसने कुछ भी उत्तर न दिया। उसकी सीपियों सी आँखों में सन्ध्या सी
सिन्दूरी उतर आई और अधर मन्द मन्द अव्यक्त ध्वनि के साथ हिलने लगे। खुले
बालों को गरदन के झटके के साथ पीठ पर चमरी गाय की तरह फैंकते हुए कहने
लगी-'तुम वेश्या धर्म कर्म क्या जानो? मैं वैष्णव हूँ भगवान श्रीनाथजी की सेवा
में रहने वाली तुम्हारे अपवित्र स्पर्श से पापिन कहलाऊँ? यह नहीं हो सकता है।
हिन्दू भी मेरा स्पर्श नहीं करते फिर तुम मुसलमान।

—'आप सच फरमा रही हैं। मैं नापाक हूँ पापिन हूँ गन्दी हूँ'—मैंने
दीर्घ निश्वास के साथ कहा।

— फिर भी तुम्हारी यह मजाल कि हमारी इज्जत के साथ खिलवाड़ कर
रही हो।

— मैं तो आपसे सिर्फ यह अर्ज करने आई हूँ कि आपको मुझसे क्या
गिला है?"

— मैं बताऊँ बाईजी? एक तवायफ की परवरिश सोने की चादर पर
मोतियों की रुनझुन के सिवा कुछ नहीं है। यह हुस्न एक आग है—जो चार दिन
बाद ही जला कर राख कर देता है। बाईजी होकर रानी के स्वप्न देखना आसान

नहीं है अपनी सीमा मत उलांघो ! मुझे ही देख लो आज क्या जिन्दगी जी रही हूँ ?"—कुन्न ने व्यंग्य के साथ मुझे नीचा दिखाना चाहा।

— तुम्हें तो मुझसे शिकायत न होनी चाहिये।

—'जलन है !'—रतना ने कहा।

—कुन्न कुढ़ कर रह गई।

— रानीजी ! मैं तो आपके दीदार के वास्ते चली आई। आप जैसे वल्लाओं के दर्शन से पाप धुल जाते हैं। आज आपके दर्शन हो गये अब शायद जिन्दगी में कोई गुनाह का दाग न रह सकेगा।

—रानी ने अट्टहास के साथ कहा— रसकपूर ! इतना घमंड मत करो ! इन महलों में आरम्भ और अंत एक-सा नहीं होता है। हम रानियाँ हैं, हमारा हर अपराध क्षम्य है तुम भगतण हो ! तुम हमारी तुलना में मत आओ। मैं कल भी यहीं थी आज भी हूँ और कल भी रहूँगी, लेकिन न तुम कल यहाँ थीं और न कल यहाँ रहोगी। तुम केवल भोग की वस्तु हो जूँठन हो कल महल की दीवारें तुमसे नफरत करेंगी।'

—बाँदियाँ उसकी हँसी का साथ देने लगीं।

— मेरा अहं तिलमिला उठा और मैं एक नये दौर के साथ वहाँ से लौट आई। उस दिन मैंने इरादा कर लिया था कि अब किसी के साथ समझौता कर जिन्दा नहीं रहूँगी।

—वह प्रथम क्षण था— जब जनानी ड्योढ़ी से मेरा सम्बन्ध टूटा। मेरा मन प्रतिशोध की ज्वाला में धधक रहा था। रतना मेरे पीछे पीछे चली आ रही थी। महल में कदम रखते ही मेरे मुँह से निकला— हद हो गई कमीनी करतूता की।

— मैं तो आपसे बहुत पहिले ही अर्ज कर चुकी हूँ रानी भटियाणी आपको नीचा दिखाने के लिए हर तरह की चाल चलेगी।"

— रतना ! मैं राजकुमारी नहीं हूं, जब पर्दे में रहने वाली गोटियाँ फेंक सकती हैं तो खुली हवा में जीने वाली पासों को बदल भी सकता है। मैं उस हर जाई की हर चाल पर पैदल मात दूंगी।'

—मैंने उस दिन मिश्रजी को बुलाकर सभी स्थितियाँ बताई और जनानी ड्योढ़ी के सारे अधिकार अपने हाथ में ले लिये ! मेरी इजाजत के बिना कोई भी आदमी रानियों से नहीं मिल सकता था।

□ दस

—मने रंगमहल मे होली की रात नृत्य का कार्यक्रम रखा—उसमे कुन्दन को बुलवाया। मै महाराजा के साथ मसनद का सहारा लिये सुराही से प्याले म सुरा उडेल रही थी। दोनो ओर सरदार व साहूकार बठे हुए नृत्य देख रहे थे। होली के रग बिरगे वातावरण म कुन्दन का थका हुआ बदन टूटा हुआ मन बेजान नृत्य कर रहा था—जसे कोई तालीम पाने वाली नृत्यागना सीखने की समझ से कदमों को इधर-उधर फक रही हो। मुझे उसकी घुटन और तडफन मे लुत्फ आ रहा था—क्योंकि वह औरत वक्त बे वक्त ताने मारा करती थी। महाराजा शराब क नश मे मदहोश जरूर थे लकिन नशे मे भी कला का पारखी मन नजरा से थिरकन पहचानने का आदी रहा है। उनसे न रहा गया आखिर उनके मुंह से निकल ही गया— कुन्दन! वक्त बीत चुका है तुम अब बूढी हो चली हो, तुम्हारे शरीर म अब लोच नहीं रहा है अखाडा किसी और को सभला दो! भगवान का भजन किया करो!'

—सामन्त, सरदार जागीरदार आदि सभी ठहाका मार कर हँस पडे—जसे मृदग की दह पर हवा न तमाचे मार दिये हों। लेकिन मैंने अपनी हसी को रोकते हुए कहा— अन्नदाता! कुन्दन का क्या कुसूर! अब इसे रियाज के लिए वक्त ही नहीं मिल पाता है। बेचारी जनानी ड्योढी में किसे सुनाये अपनी रागिनी?

—'कुन्दन बाई ! तुम्हारे अखाड़े में कोई कुशल नर्तकी नहीं है—जो बिजलियाँ चमका दे !"—अन्नदाता ने सवाल किया।

—वह सिर झुकाकर खड़ी रह गई, तन बदन पसीने से तरबतर हो गया। हाथों में बंधे गुलाब के गजरे गन्धहीन हो गये। उसने लड़खड़ाती आवाज में अर्ज किया— अन्नदाता ! आपका हुक्म हो तो कल ड्योढ़ी में महफिल का इन्तजाम हो जायेगा।

—महाराजा मेरी ओर मदभरी निगाहों में देखने लगे।

— कुन्दन ! राज की महफिल इसी महल में होगी ड्योढ़ी में नहीं। कला के पारखी यही निर्णय करेंगे। —कहते हुए मैंने अपने गले से हार उतारकर उसके आँचल में फेंक दिया। उसने एक बार मेरी ओर देखा और फिर सिर झुकाकर थके कदमों से पीछे हटती हुई साजिन्दों के पास जमीं पर बैठ गई।

— मैंने ताली बजाकर रतना को बुलाया और गुलाब बाई को पेश होने के लिए इशारा किया। चंद क्षणों में गुलाब बाई अपने साजिन्दों सहित आ पहुंची और महफिल में नई रोशनी पैदा करने में कामयाब हुई। मैंने इशारे से उसे समझाया। पखावजिये ने ताल ठोकी और सारंगी के तार झनझना उठे—उसी झंकार के साथ कदम थिरक उठे। गुलाब ने मौसम का रुख पहचानते हुए संजीदगी के साथ धमार पेश की। गुलाब बचपन से मेरी सहेली रही थी नाक नक्श भी तीखे और सूरत भी ठीक लेकिन रंग साँवला। इसी कारण उस कलावती की शोहरत न फैल सकी थी लेकिन मैंने उसके कदमों में बिजलियाँ चमकती हुई देखी थी और उसकी देह में इन्द्रधनुषी तनाव। वह थिरकनों की जादूगरनी थी उसकी हर धड़कन पर लहरों में कम्पन मचलता था, और स्वर का मिठास उस कोकिलकण्ठी को सजा देता था। उसकी स्वर लहरी में महफिल झूम उठी। जब गुलाब बाई ने दूसरे दौर में नृत्यक पेश किया तो लोगों के दिल पर बिजली चमक गई। अन्नदाता ने गिन्नियों से भरी थैली गुलाब पर बरसा दी—मानों इन्द्र ने मेनका पर पारिजात के सुमन बरसा दिये हों अथवा स्वयं कल्पद्रुम ने स्वर्ण सुमन झर दिये हों।

— कुन्दन तीखी तिरछी नजरों से देखती हुई मन ही मन जल-भुन रही थी। अन्नदाता ने उसकी ओर देखते हुए कहा— हमारी ड्योढ़ी में ऐसी थिरकन पैदा करो। कुन्दन बाई ! ऐश आराम क्या मिला ? तुम तो सब कुछ गँवा बैठी

—कुन्दन सिर झुकाये रही, मानो उसने बहुत बड़ा गुनाह किया हो !

—महफिल उठ गई।

—मैं भी राज को अपने हाथ का सहारा दिये महल में लौट आई।

—कुन्दन बोझिल पलकों से मेरी ओर देखती हुई गम्भीर निश्वास लेकर रह गई लेकिन उस पल मैं मुस्कुराना न भूल सकी। वह कुटिल मुस्कान उसे पराजित करने की ग्रह भावना थी।

—दूसरे दिन दोपहर बाद मैंने कुन्दन को बुलवाया। वह रतना के साथ डरी हुई सी मेरे सामने आ खड़ी हुई। मैंने उसकी ओर नजर उठा कर कहा— 'आज का इन्तजाम हो गया ?"

– रानीजी !" कहती हुई वह मेरे कदमों पर गिर पड़ी।

–मैंने उसके बदन को ठोकर मारते हुए कहा— तेरे मुँह से ये अल्फाज अच्छे नहीं लगते।'

– मालकिन ! मुझे न ठुकराईये ! मैं आपकी बाँदी हूँ आपके कदमों की खाक हूँ मुझसे जाने अनजाने में जो कुछ गुनाह हुआ है—वह सिर्फ पापी पेट के लिए।'—उसने हाथ जोड़ते हुए कहा।

–'नहीं कुन्दन ! तुम सच ही तो कहती रही हो।'

– रानीजी ! मैं उम्र भर पातुर रही और आज भी पातुर हूँ। यहाँ रानियाँ पड़दायतों और बडारणों का राज रहा है। उन्हीं के इशारों पर अखाड़ों में हलचल होती रही हैं। आपने जो करिश्मा दिखाया है—वह तो अचरज की बात है।

– रानियों की चाल में तुम क्यों फँसती रही हो ?'

— हमारी जिन्दगी में और है भी क्या ? किससे बात करें ? अन्नदाता तो कभी-कभी ड्योढ़ी में पधारते थे अब तो उनके दर्शन भी मुश्किल हो गये। रानी–महारानियों के महलों में महफिल हो या पड़दायतें हमारे अखाड़ों में पधार कर हम पर हुकुमत करें। वजियान के लिए नादरों की भीड़ है—जो खिसियाकर रह जाते हैं। कदमों में थिरकन तो तब जगती है जब थिरकनों के पीछे धड़कनें जिन्दा रह सकें। रानीजी ! आपसे सच अर्ज कर रही हूँ कि हमारी बस्ती में सिर्फ भूतों का राज है छायायें हुकुमत करती हैं हम वीरान बस्ती की जिन्दा लाशें हैं।"

– फिर भी जुबां पर लगाम नहीं है, रानी भटियाणी के इशारे पर मुझसे वैर मोल ले रही हो ! यह भूल गई कि हमारा राज इस सारी रियासत पर है।'

—'मेरी खता माफ कीजिये ! गर रानी भटियाणीजी के हुक्म की तामील न की जावे तो हमारी नगी पीठ पर कोडा की बरसात होती है"—उसने कांचली की कस खोल कर अपनी नगी पीठ पर नीले निशा दिखाते हुए रोना आरम्भ कर दिया।

—'कुन्दन ! आज से यह नारकीय-जीवन समाप्त समझो ! जिसे तुम जहन्नुम कह रही हो—वह ज नत रहेगा। हूरो की बस्ती में यह हू शीपन अब देखने को न मिलेगा'—मैंने उसे विश्वास दिलाते हुए कहा।

— राज की मेहरबानी होगी इश्वर आपका ताजिन्दगी महारानी बनाये रखे —उसने दुआ देकर विश्वास-भरी निगाहो से देखते हुए कहा।

—'रानीजी से कुछ भी न छिपाना अपनी जान की खैर चाहती हो तो साफ साफ शब्दो मे सब कुछ बता देना —रतना ने अधिकार के स्वर म कुन्दन को आदेश दिया।

– मेरे पास कहने को कुछ नहीं है।'

– भाटियाणी क्या चाल चल रही है ?

– बडे लोगो की बडी ही बात है।"

– फिर भी तुमसे क्या छिपा है ?"

– मुझे तो इतना ही मालूम है कि वह आपकी बढती हुई ताकत को बर्दाश्त नही कर पा रही है।'

— अरी ! वह तो फाँसी के तख्त पर चढेगी, तू भी साथ चढेगी क्या ? रानीजी के साथ गद्दारी करने पर तुझे क्या मिलेगा ? मौत को क्यो बुलावा दे रही है ? कुन्दन ! अभी कुछ दिन तो जी ले।'

—रतना के मुँह से ये शब्द सुनते ही उसके मुह का स्वाद बिगड गया और वह फटी फटी आँखो से आकाश की ओर देखने लगी। कम्पित स्वर मे उसके मुख से निकला— रानीजी ! घणी खम्मा जान बख्सें तो ' वह कह कर वह मेरी ओर देखने लगी।

— तू डर मत सच सच कह दे ! तुझे इनाम मिलेगी वर्ना मौत का फन्दा तो झूल ही रहा है – रतना ने फिर नई चाल चली।

– भटियाणीजी मुझे जिंदा न छोडेंगी।

— तू डर मत रानीजी के रहते तेरा बाल भी बांका नही हो सकता। आज

जिसके इशारे पर रियासत का राज चलता है बावली ! उनके इशारे पर तेरी जान लेने वाले की जान पहिले ही न रह सकेगी।"

—उसने चारों ओर भयभरी निगाहों से देखते हुए कहा —'वे सभी आपकी जान की दुश्मन हैं।'

—उसने कह तो दिया लेकिन बर्फ की झीनी चादर की तह से ढकी कनेर की बेल की तरह थर थर काँपने लगी।

–'कौन कौन हैं ?"

–'ड्योढ़ी ही शामिल है।'

–"सिर्फ औरतें ही ?'

– मर्द भी शामिल हैं।'

–"कौन कौन हैं ?"

–'नहीं रानीजी ! वह मुझे जिन्दा नहीं छोड़ेगा।'

—"अब छिपाना बेकार है कुन्दन ! अब छिपाने की कोशिश की तो कोतवाल के सामने हाजिर होना होगा। वह तेरी चमड़ी उधेड़ देगा और तुझे सब कुछ बता करना होगा' —रतना ने मुस्कुराते हुए कहा।

—'रतना ! मुझे यह मंजूर है उसके सामने मैं सब कुछ कह दूँगी कुछ न छिपाऊँगी लेकिन इन दीवारों में बन्द रह कर मुझसे कुछ भी न कहा जायगा। उस कमीने को शक भी हो गया तो वह न मुझे मारेगा ही और न जिन्दा ही छोड़ेगा। मैं मौत से नहीं डरती हूँ लेकिन जब वह अंधेरी कोठरी में बंद कर सताता है तो कोई भी औरत बर्दाश्त नहीं कर सकती है। रतना ! तुम खुले आकाश के नीचे चहकती हो क्या जानो ? ड्योढ़ी में क्या होता है ? वह कमीना प्रेत है हमारे जिस्म पर कहर ढाता है हमारे गुप्तांगों पर दहकते अंगारे रख कर मुँह में कपड़े ठूँस देता है। जिसकी तुम कल्पना भी नहीं कर सकती—ऐसी यातनायें झेलकर भी हम जिन्दा हैं —कहती हुई वह रो पड़ी।

— कौन ? नादर।"

– कुन्दन ने अपना सिर झुका कर हामी भर ली।"

— उस कमीने की यह करतूत ! रानीजी के सामने सिर झुका कर अपने प्राणों की भीख माँगने वाले गद्दार की यह हिमाकत ! कुन्दन ! तू डर मत, वह पिशाच अब जिन्दा न रह सकेगा '—रतना ने आवेश के साथ कहा।

— उस क्षण मैं रतना को पढ रही थी—मानो मैं कुछ नही अपितु वह खुद रसकपूर हो और मैं उसक पास खडी कोई सगमरमरी बुत हूँ। अधिकार ही इन्सान को ताकतवर बना देता है तभी तो मामूली बादी भी जिन्दगी को उछाल देने की बात करन लगती है। एक दिन वह भी था जब रतना रानियो की बात तो दूर, डयोढी की अग्म औरत व तलुव पर महावर लगाती रहती थी। रतना न कुन्न को आश्वस्त करत हुए फिर सवाल किया — उस कमीने न क्या योजना बनाई है ?

— वह बहुत नीच आदमी है, बागायत वाले पहरेदार से मिलकर उसने योजना बनाई है कि रानीजी के लिए जो शरबत आता है—उसम जहर मिला दिया जाय।

—रतना कुछ कहे कि उससे पूव ही मैंने कहा— कुन्दन ! यह जिन्दगी पानी के बुदबुदे-सी है। यह बताशा कब पानी मे घुल जाये ? इस सम्मान व साथ मौत मिल जाये तो मेरी मजार को भी फक्र होगा और मेरी कब्र खुद को खुशनशीब समझगी। छोडो, इन सभी बाता को। गर इन्तकाल का वक्त आ गया है और परवरदिगार की यही इच्छा है तो उसे कौन टाल सकेगा ? तुम तो यह बताओ ! आज की महफिल म रग जमा सकोगी ?

— रानाजी ! सूनन वाला बाईया के अखाडे को न्योता दिया है। हमीद बानो तशरीफ लायेंगी। एक वक्त था कि उसकी आवाज पर बादल बरसते थे और बिजलियाँ चमक उठती थी। आपका हुक्म हो तो इजाजत दी जाये ! — कुन्दन हाथ जोड कर खडी रही।

— अन्नदाता खुश हो ! हम तो सिफ यही चाहते हैं। कु दन ! एसा रग जमाओ कि डयोढी की शान रह सक ! अब तुम्हे इजाजत है।

— मैं प्राणो का भीख चाहती हूँ।"

— तुम बेफिक्र रहो ! हमारे रहते हुए कोई कुछ भी न कह सकेगा।'

—उसने झुक कर तसलीम क हा और डरी हुई हिरणी की तरह अपने आपमे सिमटी हुई लौट गई।

— देख लिया रानी साहिबा ! इस चुडल की कमीनी हरकतें ! इस छिनाल पर एतबार न कीजिए न जान कब धोखा दे जाये !' —रतना ने हवा म अ गुलियाँ हिलात हुए कहा।

— रतना ! क्यो किसी को गाली देती हो ! काश ! मैं किसी भयावने जगल की कँटीली झाडिया के बीच रहती और जानवरों स प्यार करती तो व

खूंखार भेड़िये भी दुम हिलाकर मेरे तलुवे चाटते रहते। इस चाहर दीवारी के भीतर ज़हरीली हवा है और इस हवा में हम सभी तर रहे हैं। रतना ! मुझे यहाँ से दूर चल जाना चाहिये।

—"क्या फरमा रही हैं आप ?"—उसने चौंकते हुए सवाल किया।

—'रतना ! मेरे कारण ही यह आग फैलती जा रही है। मुझे मेरी मौत का गम न होगा गर अन्नदाता को कुछ हो गया तो मैं क्या करूँगी ?"

— रानी साहिबा ! आप तो फिजूल ही फिक्र कर रही हैं। ड्योढ़ी तो हमेशा ही झगड़े झंझटों का घर रहा है। ड्योढ़ियों ने हमेशा राज किया है लेकिन यह पहला मौका है कि आप ड्योढ़ी पर राज कर रही हैं। उनकी हर चाल नाकाम साबित हो रही है हारा हुआ जुवारी हत्या की कल्पना में ही जीता है। आपने कभी यह भी विचारा है कि आपके चले जाने पर राजाजी की क्या हालत होगी ? यह दुनियाँ हँस हँस कर आपकी आबरू पर कीचड़ उछालेगी।

—'रतना ! मैं कुछ नहीं समझ पा रही हूँ।"

— आप तो मौत के नाम से डर गईं। आपने पवित्र प्रेम किया है और इस प्रेम की वेदी पर बलिदान भी होना पड़े तो गौरव की बात होगी।'

—'रतना ! तुम भी गलत समझ रही हो ! उनकी खुशी के लिए रसकपूर हर घड़ी मुस्कुराहट के साथ कुर्बानी देने के लिए हाजिर है। मैंने अपनी जिद न छोड़ी तो क्या अंजाम होगा ?—यह खयाल आते ही डर जाती हूँ।'

—'मेरी तो यह राय है कि रानी भटियाणी पर कड़ी नजर रखी जाये और उस हरामी नादर को काल-कोठरी में बंद करवा दीजिये।'

—'नहीं रतना ! यह भूलता होगी दुश्मन को मारो मत, उसे अपने ही जाल में फंसने दो"—कहती हुई मैं चौकी पर बिखरे शतरंज के मोहरों के साथ खेलने लगी, मेरी गोद में खरगोश का मासूम बच्चा आ बैठा। आपसे सच कहती हूँ कि—मुझे इन्सान से अधिक उस बच्चे से बेहद प्यार था। उसके कान ऐंठ कर यह कहा करती थी—तू गूँगा भले ही रह लेकिन इन्सान की आदतें न सीख जाना !' वह गरदन हिलाकर मेरी बात पर हामी भरा करता था। मैंने उसके दूधिया बालों पर हाथ फेरते हुए रतना से कहा—तू बनसिंह से कहना कि वह मुझसे बादल महल के बगीचे में मिले।'

—'रानीजी !—कहकर उसने आशंका को जन्म देना चाहा।

– वह आदमी बुरा नहीं है, मैंने उसे कभी गलत न समझा, यह तो वक्त की बात है तू फिक्र मत कर।"

—मैं खरगोश के बदन पर अपनी कोमल अंगुलियाँ फिराती रही और रतना मेरी कुटिल मुस्कुराहट का अर्थ समझे बिना ही अपने आपको कोसती हुई महल से बाहर हो गई। जब बनेसिंह मिला तो वह बहुत डरा हुआ था। मैंने उसे निडर रहने को समझाया तथा ड्योढ़ी की जानकारी हासिल करने के लिए खास तौर से हिदायत दी। बनेसिंह ने आकर जो कुछ बताया उसे सुनकर तो मेरे रोंगटे खड़े हो गये। ड्योढ़ी में मेरे प्रति ही विष न था अपितु वह विष अन्नदाता को भी खा जाना चाहता था।

—मैंने धीरज से काम लिया। जब मेरे लिए जहर का प्याला भेजा गया तो मैंने नादर को बुलवाया और वह शर्बत उसके सामने करते हुए पीने का आदेश दिया। वह काँप उठा लेकिन विवशता के साथ उसे मौत को गले से नीचे उतारना पड़ा। कुछ ही क्षणों में वह तड़फड़ाकर दम तोड़ बैठा। उसकी मौत का मुझे तनिक भी गम न हुआ मैंने अफसोस तक जाहिर न किया—अपितु बागायत के हाकिम को पेश होने के लिए हुक्म दिया। मुलजिम ने अपना गुनाह मंजूर किया और उसे सजा ए मौत मिली। उस घटना से ड्योढ़ी में तहलका मच गया सभी की रूह काँप उठी किसी के मुँह से उफ तक न निकल सकी लेकिन यह फैसला न था अपितु जंग की शुरुआत थी। मेरा हुक्म पाकर नाथूलाल अन्दर की ड्योढ़ी की खबर लाने के लिए हर सम्भव प्रयास करता था। एक रात वह नहीं लौट पाया तो उसकी खबर लाने के लिए मैंने नौकरों को भिजवाया लेकिन उसका कुछ भी पता न लग सका। अचानक उसका गायब हो जाना मेरे लिए सिरदर्द बन गया। ड्योढ़ी में बाँदियों को भिजवाया शहर में ढुंढवा लिया कोतवाल और फौजदार के पास भी कोई खबर नहीं। आखिर एक दिन मालूम हुआ कि वह जान से मार दिया गया। उस भले आदमी ने जनानी पोशाक पहन कर ड्योढ़ी में प्रवेश पा लिया लेकिन राज न छिप सका और अंधी वासना के नाखूनों से नोंच डाला गया। कामुक औरतों का दहकता जिस्म मर्द को पाकर सब्र खो बैठा और अपनी भूख के लिए उस भले आदमी की हत्या कर डाला। उसकी देह का माँस नोंच दिया गया तथा अस्थि पंजर खड्डा खोद कर गाड़ दिया गया ताकि किसी प्रकार का नामो निशां न रह सके।

—यह कोई नई घटना न थी। ड्योढ़ी एक ऐसी आग है—जिस पर बर्फ की चादर बिछी हुई है। न जाने कितने ही मर्द वहाँ बलिदान दे चुके हैं

ग्रोर कभी राज तक न खुल सका। वहां रहने वाली औरतें इन्सानियत के बारे में छिपी प्रेतात्माएँ हैं—जो अपनी हवस मिटाने के लिए मद का खून पीना पसन्द करती रहीं हैं। जो सौंदर्य की आग में जलती हुई जवानी की तपिश जीने को विवश हैं मद उनकी जिन्दगी का अभाव है। किसी एक का गुनाह न था—यह तो उनकी आदत थी। गर इस कौम को आदमखोर भी कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी—लेकिन इन मासूम औरतों का क्या दोष? वह तो चाहरदीवारी में कैद करके तड़फने को छोड़ दिया गया, फकत नाम के सहारे जिन्दगी गुजार देनी है, अपने अरमानों का खून खुद के लबों से पीना है। नाथूलाल की मौत के बारे में तहकीकात की गई तहरीर बनी, बाँदियों के बयान हुए मुकदमा दर्ज हुआ लेकिन सभी गुनहगारों को हिदायत देकर माफ कर दिया गया।

—रानी भटियाणी हारती जा रही थी लेकिन हिम्मत न हार पा रही थी। वह शिकस्त देने के लिए मौके की तलाश में रहती। मेरे विरोधियों के पास एक ही हथियार था कि वे मुझे बदनाम कर अफवाहें फैलाते रहे और मैं हर रोज दुश्मनों से जूझती रहूँ। ड्योढ़ी की गन्दगी से दूर होने की इच्छा तीव्र हो उठी और मैंने इरादा कर लिया कि मैं इस माहौल में न रहूँगी। मैं रतना से इस बारे में राय मशविरा करने लगी। वह नहीं चाहती थी लेकिन मेरी जिद देखकर उसने सरोता से सुपारी के कतरे करते हुए कहा— आप कहीं भी रहें दुश्मन तो साथ रहेंगे।"

—"रतना! जिन्दगी जूझने के लिए नहीं है, सियासी मामलों में दखलन्दाजी से सभी जागीरदार नाराज हो रहे हैं।

—"बात बहुत आगे बढ़ चुकी है, गर आपने कदम पीछे हटाया तो ये लोग चूकेंगे नहीं।

—मुझे रतना का प्रस्ताव जब न रहा था, मैं अपने प्रियतम के साथ आनन्द के क्षण जीने के लिए विकल थी किन्तु मेरा यह सुख दलदल में फँसाता ही चला जा रहा था। मैं अपनी भावनाओं में बह चली उन्माद के क्षण जीने को बेचैन हो चली। बगीचे से केतकी और गुलाब के फूल मंगवाये। रतना ने मद्दन को रिझाया और मैंने खुद अपने हाथों से अपनी देह का शृंगार किया। कावली और टोपी भी जूही की कलियों की जाली से सजाई गई। उस घड़ी मैं रानी या मलिका नहीं अपितु अपने महबूब की प्रेमिका थी मेरे दिल के हर कतरे में प्यार के तराने गजब गा रहे थे और आँखों में आकाश सिमिट आया था। भुजाओं में बँधे महकते गजरे के बाजूबन्द मेरी देह का स्पर्श पा कर कसाव बढ़ाते ही जा रहे

थे। जब अन्नदाता पधारे तो मेरे कदम थिरक उठे बिना घुंघरुओं के ही रुन झुन गूंज उठी और मैं पागल मोरनी की तरह झूम उठी। मेरे प्राणेश चकित रह गये और उस रात मुझ पर सब कुछ न्यौछावर कर देना चाहा। उन्होंने मेरी देह पर गुलाब की पखुरियाँ बरसाते हुए कहा—"रसकपूर! हम तुम्हारे सामने भिखारी रह गये हैं तुम्हें खुश रखने के लिए ऐसी कोई चीज नहीं है—जिसे पाकर तुम निहाल हो सको!'

प्रिय! ऐसे न कहिये! —मैंने कमल का फूल उनके अधर तक ले जाते हुए कहा।

—रस! हम हिन्दुस्तान के शहंशाह होते और तुम्हें यह सल्तनत भी दे देते तो वह तुच्छ होती।

— मुझे इस सल्तनत से क्या? मैं तो आपके दिल के किसी कोने में अपने आपको सजोये रखने की तमन्ना में बेहद खुश हूँ। अन्नदाता! मैं आपके इन सियासी मामलों से ऊब चुकी हूँ आपसे एक ही अर्ज है कि मुझे एकान्त में रहने की इजाजत दें।

—'हम से दूर रहना चाहती हो।'

— नहीं मेरे प्राणेश! मैं तो आपके साथ ही रहना स्वीकार करूँगी।

—'रस! क्या चाहती हो?'

– एक छोटी सी चीज!'

– तुम्हारे लिए यह सारी रियासत है।'

— 'नहीं अन्नदाता! मुझे इस वैभव से लगाव नहीं है मैं तो अपने हृदयेश के साथ आनन्द के क्षण जी सकूँ—जहां मेरा अपना संसार हो। अन्नदाता! मैं चाहती हूँ कि सुदर्शनगढ में रह कर आपकी इन्तजार करती रहूँ।'

—'सुदर्शनगढ! वह भी तुम्हारा ही है कल ही तुम्हारे नाम पट्टा लिख देंगे।'

—मैं अपने स्वप्नों के मंदिर संसार में खो गई और उस रात अन्नदाता के सो जाने पर भी मेरी आँखों में नींद न उतर सकी। मैं सारी रात तसव्वुर में गुल खिलाती रही और महक में जीती रही लेकिन मेरी कल्पना के गुलिस्तां पर कहर ढा दिया गया। मुझे सुदर्शनगढ न मिल सका। सामोद के रावराजा बरिसाल एवं नाथावत सरदार चौमू के नरेश कृष्णसिंह ने सख्त विरोध करते हुए महाराजा से

सामने दलील पेश की 'यह गढ़ हमारे लिए दिल है हमारी रक्षा का एकमात्र सहारा यदि आपने यह गढ दे दिया तो हम और क्या करेंगे ?' सामरिक दृष्टि से दलील देकर उन्होंने मेरे स्वप्न पूरे न होने दिये। इसके पीछे रावराजा चाँदसिंह की सूझ थी वह मुझे नीचा दिखाना चाहता था। जब महाराजा ने असमर्थता प्रकट की तो मैं क्षण भर के लिए व्यथित हो चली किन्तु क्षण भर बाद मुस्कुराते हुए मैंने अर्ज किया—'वे सच ही तो फरमाते हैं मैं गढ का महत्व नहीं समझ पाई थी।"

गर मैं चाहती तो उन सरदारों के इरादे नेस्तनाबूद कर सकती थी। उनकी जीत पर हार का मुलम्मा चढाकर उन्हें बेइज्जत कर सकती थी। मेरी एक छोटी सी जिद सुदर्शनगढ़ पर विजय थी लेकिन मैं अपनी घुटन लेकर रह गई।

उस घटना से साफ जाहिर हो गया था कि सभी सामन्त मुझ से नाराज हो चुके थे। उन सभी के लिए मैं एक दुश्मन थी। मैं उस जग से दूर चली जाना चाहती थी लेकिन मेरे अहं को कुचल कर मेरे भीतर एक ऐसी आग पैदा कर देना चाहते थे—जिसमें मैं बागी साबित की जा सकूँ।

महाराजा को व्यस्त रखने के लिए हर सम्भव प्रयास किया जाने लगा। दूर दूर से नर्तकियाँ आमन्त्रित की गई और महफिलें जमने लगी लेकिन अन्नदाता हमेशा मुझे साथ रखते। दुश्मनों की हर चाल पटल मात खाने लगी, लेकिन एक चाल ने मुझे ऐसी शिकस्त दी कि मेरा चमन उजड़ गया, बहारें सिमट गई और विजा के सामियाने के नीचे मैं अकेली रह गई आंसुओं की नदी बह रही थी लेकिन मुझे रोने का हक भी न रहा।

अन्नदाता को जोधपुर पर आक्रमण के लिए राजी कर लिया गया और उस जग को इज्जत का सवाल बना लिया गया। वह जग फकत इसलिए कि राजकुमारी कृष्णा के साथ महाराजा का विवाह हो सके।

□ ग्यारह

—राजपूतों का इतिहास अनुपम रहा है। बात की बात मे खून की नदियाँ बह जाना अमूनन बात है। शादी विवाह की रस्म भी तलवार से होती रही है। हिन्दुस्तान के इतिहास मे राजपूत राजा महाराजा और सरदार रणबाँकुरे कहलाते रहे जग ए मदान मे सिर कटने पर धड की धडकनें वार पर वार करती रही। मौत को सिर पर चढाये ये बहादुर दुनियाँ के इतिहास मे बेनजीर हैं। जिस तरह राजपूत अपनी आन शान के लिए मर मिटने के आदी रहे—इनकी स्त्रियाँ भी मर मिटने मे स्वाद मानती रही। इन्ही वीराङ्गनाओ की हिम्मत है कि अपने हृदयेश के ललाट पर रक्त तिलक लगा कर हाथ मे नगी तलवार थमाने मे गौरव का अनुभव करती हैं और पति के शहीद हो जाने पर मुस्कुराती हुई जलती चिता मे कूदकर अपना धर्म निभाती रही हैं।

—मैं राजपूतनी नहीं हूं। मेरा दिल गवाही नहीं दे रहा था कि मर राज जग ए मदान मे जाकर नगी तलवारो की खनखनाहट सुने। अचरज है कि जो आदमी उम्रभर घुँघरुओं की रुनझुन और शराब के भरने मे डूबता रहा हो—वह शख्स चीख चिल्लाहट व तोपो की गडगडाहट के बीच तलवारो का खेल देखना पसन्द करे। मेरे दिल के देवता ने जग का बिगुल बजा दिया था। यह जग जोध

पुर के राजा मानसिंह के साथ लो रहा था। दोनों रियासतों के बीच पीढ़ियों में रिश्ता रहा एक दूसरे का बेटी लेते रहे लेकिन फिर भी जंग के इरादे।

- यह जंग फकत राजकुमारी के लिए।

—राजकुमारी कृष्णा मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह की पुत्री थी। अपने रूप और सौन्दर्य के लिए रजवाड़ों में चर्चा का विषय बन चुकी थी। महाराणा ने अपनी राजकुंवरी की सगाई जोधपुर के राजा भीमसिंह के साथ की थी लेकिन हाय री बदकिस्मत! महाराजा भीमसिंह का असमय में ही इन्तकाल हो गया।

—गर रिवाजों के बाद महाराजा की मौत होती तो बेचारी कृष्णाकुमारी अपने गदराये बदन और गौरव के ज्वार को लेकर अग्नि की शरण में चली जाती।

—महाराजा की मृत्यु के बाद जोधपुर रियासत में मानसिंह गद्दीनशीन हुए और हक के अनुसार महाराणा से कृष्णा कुमारी के लिए कहला भेजा। महाराणा भीमसिंह को कोई ऐतराज न था।

—मेरे दुश्मनों के लिए यह अचूक मौका था वे नहीं चूके और रसकपूर उनका शिकार बन ही गई। पोहकरण के ठाकुर सवाईसिंह, जो पक्के धूर्त आदमी रहा—उससे दूनी वे रावराजा चौमसिंह की सांठगांठ बैठ गई। सवाईसिंह ने अन्नदाता के पास खत लिख कर भिजवाया कि आपके रहते हुए कृष्णा कुमारी का विवाह मानसिंह के साथ हो—यह अपमान की बात है।

—महाराजा जगतसिंह के अनेक रानियां पड़दायतें बाईयां तथा नर्तकियां थी लेकिन मामला न इज्जत का सवाल बना लिया और महाराजा ने उदयपुर सिजारा भिजवा दिया।

—जब सवाईसिंह को मालूम हुआ कि महाराजा जगतसिंह ने सिजारा भिजवा दिया है तो उसने राजा मानसिंह को भड़का दिया कि जयपुर नरेश तुम्हारी भावी रानी को अपनी महारानी बनाने की नीयत से उदयपुर सिजारा भिजवाया है। मानसिंह आग बबूला हो उठा, वह इस बेइज्जती को बर्दाश्त न कर सका तथा अपने सरदारों को भेज कर सिजारा रुकवा दिया। मानसिंह अपनी इस विजय पर खुश हो रहा था और अन्नदाता भारी अपमान पर क्रोध से तिलमिला उठे लेकिन सवाईसिंह दोनों रियासतों का कमजोर बनाने के लिए तमाशा देख रहा था। महाराणा भीमसिंह के सामने अजीब समस्या पैदा हो गई किन्तु वे विवश थे।

—अन्नदाता जोधपुर को कुचल देने के लिए उतावले हो चले। जंग की तैयारियां होने लगीं सभी ठिकानों को पैगाम भिजवा दिया। दगत देवने चौमूं,

मामो* दूनी, बगरू मनोहरपुर विसाऊ म्रादि के ठाकुर इकट्ठे हो चल। अन्नदाता क लिए यह कहना गलत है कि वे गम विन स या एशो आराम म ही डूब रहने थ इन्होंने जयपुर रियासत की फौज को बढ़ाया था। जोधपुर पर हमला करने के लिए एक लाख सिपाहियों की फौज खड़ी की गई। पाँच हजार घुड़सवार सिपाही जगी घोड़ों के साथ मौजूद थ। सिपाही जरी की पोशाक पहिन हुए शोभित हो रह थे। फौज क साथ चालीस तोपों का भारी बेडा भी था। महाराजा जग के लिए कूच करने से पहिले मेरे महल म पधारे तो इस ग्रभागिन ने फूलों से देवता की अगवानी की। महाराजा के चेहरे पर चमचमाता तेज और आँखों म दहकत अंगार उनके वक्ष पर खेलता हुआ दुस्साह तथा वाणी म ओज देख कर मैं मन ही मन उनकी वीरता पर मुग्ध हो चली। अन्नदाता ने गर्व क साथ गरजते हुए कहा—रसवपुर! हम किसी सुन्दर राजकुमारी को पाने की लालसा म तुम स जुदा नहीं हो रहे हैं बल्कि हमारे वंश की शान को जिसने ललकारा है, उसे सबक सिखाना हमारा फर्ज है, हम पुराने क इतिहास पर धब्बा नहीं लगने देंगे। सूर्य वंशी कछवाहों ने जौहर दिखाये हैं हम इस इतिहास म एक अध्याय और जोड़ दना चाहते हैं।

—मैंने जुदाई के गम को सब्र के साथ रोका और आँखों से एक भी अश्रु न टपकने दिया। मरे देवता को रजपूतनियों की तरह हँसते हुए विदा किया।

देवता के सामन फूल से दिल को पत्थर बना लिया था लेकिन मैं खुश न थी। मेरे चमन म उदासी छा गई। फागुन के महीने के बसन्ती दिन और हुजूर खून की होली खेलने म व्यस्त, मुझ अभागिन की आँखों से सावन की बरसती घटायें! हृदय म घुटन और गुमसुम सा वातावरण!

—मैं उनकी खबर पाने के लिए बचैन रहने लगी। खबरनवीस खबर लाते लेकिन अन्नदाता का पैगाम मुझे न मिल पाता।

—पर्वतसर जग का मैदान बना। दोनों ओर स जगी लड़ाई लेकिन नतीजा कुछ नहीं। महीने भर तक इन्सानों का खून होता रहा मैदान रंग गया लेकिन इन्सानी दिल न जाग सका। आखिर एक दिन ऐसा आया कि बिना हार जीत के जंग खत्म हुआ लेकिन बहुत बड़ी कुर्बानी देकर।

—पर्वतसर मे भीषण युद्ध हो रहा था। हर राज रणबाँकुरे माँ शिलादेवी की जय कहते हुए तलवारें खनखना रहे थ तोपें आग बरसा कर जमीं पर राख बिखेर रही थी—इधर ड्योढ़ी म सन्नाटा छाया हुआ था। मैं अन्नदाता के दर्शन

के लिए विकल हो रही थी। मुझे एक ही आशंका थी कि युद्ध में महाराजा को कुछ हो गया तो रसकपूर का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। ये दुश्मन उसकी बोटी बोटी शिकारी कुत्तों के द्वारा नुचवायेंगे या भरे बाजार पीठ पर कोड़े बरसा कर नंगा नाच नचवायेंगे। उस समय एक ऐसा तूफान आया—जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। टोंक का नवाब मीर खाँ पठान जो कि लुटेरा था—उसने जयपुर पर हमला बोल दिया उस अनहोनी घटना से जनानी डयोढी में मायूसी छा गई और खतरे से बचने के लिए आँखों के सामने अंधेरे के सिवा कुछ न रहा। जब मुझ तक यह खबर पहुँची तो मैं हताश हो चली और भय के मारे काँपने लगी। मेरे पास कोई ऐसा उपाय न था कि मैं उस लुटेरे का सामना कर उसे रोक सकती।

मैं रियासत की मलका थी महाराजा की गैर मौजूदगी में जिम्मेदारी निभाना मेरा फर्ज था। मैंने अन्नदाता तक खबर पहुँचाना चाहा हल्कारे दौड़ाये लेकिन मुझे कुछ भी जवाब न मिल सका। लुटेरा मीर खाँ शिवदासपुरा तक आ पहुँचा। शहर में तहलका मच गया आम आदमी के मुँह पर डर छा गया। महलों में अजीब सा सन्नाटा और डरावने खयालात से दम घुटने लगा। राज का कोई पैगाम नहीं लुटेरे को रोकने का बंदोबस्त नहीं। मैंने बचे खुचे सिपाहियों को इकट्ठा कर भाऊ को रोकने का भार बर्तसिंह को दिया। बर्तसिंह हिम्मत का आदमी था—वह तनिक भी न झिझका लेकिन उसके सिर पर सेहरा बंधना डयोढी को बर्दाश्त न था। चोमू के राजा कृष्णसिंह अपनी फौज के साथ मीरू के सामने जा पहुंचे। माजी साहिबा राठोडजी के हुक्म से सब काम होने लगा। वह पहला दिन था जब मेरी उपेक्षा की गई लेकिन मैं इस अंधेरे की कल्पना न कर सकी थी वर्ना अन्नदाता के कदमों में गिरकर उनकी छाया में तवायफ की तरह जिन्दगी जीती रहती। ठाकुर कृष्णसिंह ने मीरू के साथ घमासान जंग किया दिलेरी के साथ लुटेरे के हौंसले पस्त किये, उसके नापाक इरादों को नेस्तनाबूद कर उसे भागने के लिए मजबूर कर दिया।

मीरू अपना स्वप्न पूरा न कर सका अपितु उसे जान माल का भारी नुकसान उठाना पड़ा। उसके कई साथी जंग में मार दिये गये और कई जख्मी हो कर जमीं सूँघते रहे वह अपने जख्मी साथियों तक का साथ न ले जा सका। आफत के काले बादल छँट गये मुझे भी राहत मिली, वर्ना न जाने क्या अंजाम होता? लुटेरा किसके साथ क्या सलूक करता? कुछ भी नहीं कहा जा सकता। मैंने मैदान ए जंग में जाकर उन बहादुर सिपाहियों को इज्जत दी—जिन्होंने रियासत की इज्जत को लुटने से बचाया। वहाँ का दृश्य देखकर मैं रो पड़ी, आप से क्या क्या कहूँ? कई घायल मौत से सह रहे थे किसी के हाथ कट चुके थे तो किसी के पर किसी का सिर

तीव्र गति से बढने लगी । मैंने रतना से सवाल किया— क्या जग खत्म हो गया ?'

— जिन्दगी खत्म हो गई ।"

—मैं डर गई मेरे मुँह के अल्फाज रुक गये पल भर के लिए अधर खुले अधखुले रह गये । मैंने कांपते हुए कहा – क्या बक रही हो ?'

— रानी साहिबा ! मैं सच अर्ज कर रही हूँ जिसके लिए जग हो रहा था जिसे पाने के लिए खून की नदियाँ बहाई जा रही थीं वह सुन्दरी इस जहाँ से विदा ले गई ।

– क्या कृष्णाकुमारी इस जहाँ म '—मैं अचरज भरी निगाहों मे रतना की ओर देखने लगी ।

–' रानी साहिबा उस सुन्दरी का जहर खाने से इन्तकाल हो गया '

– ओह ! उसने खुदकशी करली ! —मैंने गम्भीर निश्वास महल की छत की ओर छोडते हुए कहा ।

– खदकशी नही उसकी हत्या कर दी गई ।"

– हत्या ! —मेरे मुह से चीख निकल गई ।

— रानी साहिबा ! एक जमाना ऐसा था—ठाकुर के घर म लडकी का जन्म लेना *अभिशाप था । जन्म देने वाला बाप ही अपनी औलाद की शक्ल देखना* पसन्द नही करता था । लडकी का जन्म जग का ऐलान मुसीबतो का पहाड समझा जाता था । बाप अपने दिल पर पत्थर रख कर बेरुखी के साथ अपनी औलाद का गला हाथों से घोट कर राहत की श्वास लेता था । ठाकुरो के रावले म राजकुमारी का जन्म मौत के लिए ही होता था । जो बाप ऐसा नही कर पाते थे उन्हे मुसीबतो का सामना करना होता था खून की नदियाँ बहानी होतीं, बाप होने की कीमत चुकानी पडती । यह कीमत इतनी भारी होती कभी कभी तो जी जान से हाथ धोना पडता, या गद्दी से मरहूम होकर सीकचो के भीतर जिन्दगी के शेष दिन गुजारने होते । कई ठाकुर हिम्मत भी हार जाते और अपनी पगडी सिर से उतार कर हमलावर के कदमो म रख कर अपनी बेटी ब्याह देते । महाराणा के सामने अजीब समस्या थी, अनोखी उलझन मे उलझ गये थे । अपनी राजकुमारी का हाथ किसके हाथ मे थमायें ? महाराणा न जयपुर से लडने की हिम्मत रखते थे और न ही जोधपुर से सम्बन्ध बिगाडना चाहते थे । जग खत्म होने के आसार दिखाई नहीं

रहे थे तो महाराणा ने अपने सरदारों से सलाह-मशविरा करके यही उचित समझा कि राजकुमारी का मौत की माला पहिना दी जाये। बेचारी सुकुमारी को जहर का प्याला पीने को विवश कर दिया। एक बाप ने अपनी खुशी को अपने ही हाथों से मिटा दिया ताकि राजपूती तलवारें एक दूसरे का खून न बहा सकें।'

—'ओह! क्या कह रही हो रतना! मुझे ऐतबार नहीं हो रहा है।'

—"आपसे हकीकत अर्ज कर रही हूँ रानी साहिबा! जंग के मैदान से मसरनशीन अभी अभी लौटा है। ड्योढ़ी में सिर्फ एक ही चर्चा है लेकिन उस शहीद की कुर्बानी के लिए किसी के पास दर्द के दो हर्फ भी नहीं हैं।'

— रतना! मैं तो आज तक यह समझती रही हूँ कि तवायफ के कोठे पर जन्म लेना भिखारिन की कोख से पैदा होने से भी बदतर है लेकिन आज यह कहूँगी कि इन महलों में जन्म लेना पिछले जन्म के ... की निशानी है। कमसिन सी राजकुमारी के सुनहले सपने—जिनके ख्यालों में वह ... रही होगी, शैतान ने नेस्तनाबूद कर दिये। ओह! रियासतों के अजीबो-गरीब उसूल! कर कौन और मरे कौन?"

— यह सुनकर आपको अचरज होगा कि राजकुमारी ने महाराणा के आदेश का पालन करते हुए खुशी के साथ विष का प्याला पी लिया और मौत कुछ भी न बिगाड़ सकी।

—'क्या राजकुमारी जिंदा है?'

— नहीं जब वह विष पीने पर भी न मर सकी तो उसे दुबारा जहर दिया गया कुदरत का खेल और ईश्वर की मर्जी! वह जानलेवा विष उसका कुछ न बिगाड़ सका। महाराणा दुखी अवश्य थे लेकिन दो रियासतों के बीच खून-खराबा बचाने के लिए अपनी हार न मान सके और तीसरी बार राजकुमारी को जहर दिया गया इस बार वह सुकुमार-सी देह मुरझा गई। मुँह से खून टपकने लगा—कुछ क्षण गये और आँखों पर स्याही बिखर गई। मुँह से ... इतिहास में अपना नाम लिखा बांदी राजकुमारी हमेशा के लिए कुर्बानी देकर इतिहास में अपना नाम लिखा कर चली गई। रानी साहिबा! जिंदगी और मौत के बीच यह अजीब खेल तमाशा काफी देर तक चलता रहा।

— रतना! चुप भी रह! मुझसे बर्दाश्त नहीं होता"—मैंने अपने कानों पर हाथ रखते हुए तीव्र स्वर में कहा।

— आप क्यों परेशां हो रही हैं ? जो राजकुमारियाँ यहाँ रानियाँ और महारानियाँ बन कर बैठी हुई हैं उनके मुँह पर शिकन तक भी नहीं है।

— रतना ! मैं भी माँ हूँ, मेरी बेटी को भी इसी तरह मुझसे दूर कर दिया गया। बाप निर्दयी हो सकता है माँ नहीं। माँ दर्द जीती है, आँसुओं की गंगा में अपनी औलाद को नहलाती है वह बर्दाश्त नहीं कर सकती। रतना ! महाराणी के दिल पर क्या गुजरी होगी ! उसके तारों की सदा हमेशा के लिए छीन ली गई। वाह रे राजकुमारी ! तेरी भी जिन्दगी तवारीख बन कर रह गई। सियासी जुल्मों की शिकार तुम्हारी खता इन्सानियत के लिए हैरत भर देने वाली चुनौती है। अन्नदाता को पधारने दें ! उनसे सवाल करूँगी कि आप गरीबों की जिन्दगी से खेलने का क्या हक रखते हैं ? जो नहीं चाहता उसे भी अपने साथ बाँधना क्यों चाहते हैं ?

— राज क्या करते ? रजपूती शान का सवाल था ?'

— झूठ ! सब कुछ झूठ ! इन्सान सबसे बड़ा है, उसकी इज्जत और शान सबसे ऊँची है सियासी रिश्ते ऐसी हत्याओं से मजबूत होते हैं तो मैं कहूँगी कि ये रिश्ते नहीं सौदे हैं। राजकुमारी के साथ यह जबरदस्ती थी—जिसे वह बर्दाश्त नहीं कर सकी और उस बाप का भी फर्ज था कि वह अपने इन्सानी दिल के आईने में अपनी राजकुमारी के इरादों को पढ़ता और बाकायदे उसी राजकुमार को धोता देकर विवाह कर देता। महाराजा भी गुनहगार हैं—जो इस हत्या के लिए जिम्मेदार कहे जायेंगे।'

—"रानी साहिबा ! आपके मुँह से ये शब्द शोभा नहीं देते।

—'रतना ! तुम समझती क्यों नहीं हो ? महाराजा मेरे देवता अस्तर मनम राज और दिल के मालिक हैं मैं उनके बिना जिन्दा नहीं रह सकती। हम कुछ नहीं कहेंगे लेकिन इतिहास कभी चुप न रह सका है।

—रतना मेरे मुँह की ओर देखती रही।

—'रतना ! खुदा की कसम ! मेरा वश चले तो मैं इन ऊँची दीवारों के बीच इन्सानियत का जन्म लेकर इन खूनी दरिंदों को सबक सिखा दूँ कि ये गद्दियाँ, यह हुकूमत यह राज यह ऐशो आराम और यह ताकत इन्सानों की भलाई के लिए है न कि किसी की बहू बेटियों को बेइज्जत करने या पर्दानशीनों को बेपर्द करने के लिए। मैं तवायफ रही हूँ घिनौनी हूँ पाक होते हुए भी नापाक कहलाती

रही लेकिन इन्सानी दिल पाया है मेरे दिल के तारों से जो आवाज निकलती है वह " सानी दर्द से भीगी हुई है। रतना ! मुझे कहने का कुछ भी हक नहीं है मैंने भी गुनाह किये हैं लेकिन औरतों की आबरू से खेलना किसी भी महाराजा की बहादुरी नहीं है।'

— 'रानी साहिबा ! आप अन्नदाता से कुछ भी न कहियेगा, मैं समझती हूँ कि उनके दिल पर न जाने क्या गुजरी होगी ?"

— राज पत्थर दिल हैं, जंग में जाने से पहिले कई वायदे किये थे, कसमों की दुहाई दी थी लेकिन एक महीने में कभी न खत लिखा न पयाम ही भिजवाया। रतना ! मेरी अर्ज पर भी कभी गौर न किया मुझसे ऐसा क्या कुसूर हुआ क्या गुनाह हुआ ? जिसकी सजा मुझे दे रहे हैं। क्यों तड़पा रहे हैं ? क्या राजकुमारी ने उनके दिल में इतनी जगह पा ली कि रसकपूर को पल भर में भुला बैठे। रतना ! मैंने कभी कल्पना भी न की थी कि अन्नदाता मेरे साथ इतनी उदासीनता बरतेंगे।"

— जंग के मैदान में सब को भूल जाता है आदमी, केवल दुश्मन दिखाई देता है वहाँ न कोई राजा रहता है और न कोई रियाया ही गर कोई रियाया रहता है तो वह सिर्फ तलवार से एक सिपाही का।"

— "तलवार ! तलवार और सिपाही ! सिपाही और जंग ! ! मैं यह सब कुछ सुनते सुनते थक गई हूँ। क्या इन्सान तलवार के बगैर जिन्दा नहीं रह सकता है ? रतना ! रियाया पर राज करने के लिए तलवार का नाम सुनकर हैरत में पड़ जाती हूँ। क्या प्यार से रियाया पर राज नहीं किया जा सकता है। मुझे ही देखो। मैंने कब तलवार से काम लिया ?"

रतना मुस्कुरा कर मेरी ओर देखने लगी।

— 'अरी ! इसमें हँसने की क्या बात है ?"

— राजा-महाराजा की तलवार का पानी उतर जाता है लेकिन आपकी नजरों की तीखी धार इतनी तेज है कि दूर से ही घायल कर देती है। लहू की एक बूँद गिरे बिना ही आदमी घायल होकर तड़पता रहता है।'

— रतना ! हकीकत को मजाक में न उछालो। मैं महाराजा से अर्ज कर इस खून-खराबे को हमेशा के खातिर खत्म करा दूँगी। तुम जाकर यह मालूम करो कि राज की सवारी कब आ रही है ?'

—रतना सिर झुका कर चली गई।

—मैं भी महल मे न ठहर सकी। चन्द्रमहल से उतर कर जय उद्यान की ओर आ गई। महाराजा जयसिंहजी ने यह बगीचा शायद इसीलिए बनाया था कि राजा महाराजा अपने विकलता के क्षण इसकी सुरभि के साथ व्यतीत कर सकें। चन्द्र महल की इमारत जितनी भव्य है—उससे अधिक जयनिवास उद्यान सुन्दर है बल्कि मैं तो यह कहना चाहूँगी कि इसी बगीचे के कारण चन्द्रमहल के चार चाँद लगे हुए हैं। जयनिवास बाग मुगल बादशाहों की रुचि का प्रतीक कहा जा सकता है। दोनों ओर फल-फूलों से लदे सघन वृक्ष रंग बिरंगी क्यारियाँ। महकते फूलों का रस पीने को मतवाले भवरों की गुनगुनाहट किसी शायर की गजल से कम नहीं मानो कुदरत ने रंग बिरंगी चूनरी पहिनकर महाराजा की आव भगत के लिए महफिल का दृश्य पेश किया हो। मैं अपनी विकलता के साथ बगीचे मे आ पहुँची और भगवान श्री बृजबिहारीजी की झांकी के दर्शन किये। यद्यपि किसी मुसलमान को मन्दिर की मूर्ति के दर्शन करने का अधिकार न था लेकिन रसकपूर के लिए किसी प्रकार का प्रतिबन्ध न था। मंदिर के महंतजी—जो पीताम्बरी ओढे हुए थे तथा गले मे माला झूल रही थी—उन्होने मेरा अभिवादन किया। मैंने जिन्दगी मे यह अनुभव किया कि देवता के मंदिर मे भी आदमी के स्तर का मूल्यांकन होता है भगवान भी अमीरों के लिए है न कि गरीबों के लिए। मैंने श्याममूर्ति श्री कृष्ण के आगे हाथ जोड कर मेरे मन की व्यथा सुनाई तभी महंतजी ने तुलसीदल और माला के सहित पान का बीडा प्रसाद के रूप मे मुझे दिया। भगवान के प्रसाद को सिर से चढाकर मे उत्तर की ओर आगे बढ गई।

—बाग के बीच मे सुन्दर सी नहर--जिसके बीच फूटते हुए फव्वारे—जिनकी फुहार दोनो ओर झुकते हुए फूलो के गुलदस्तो के बदन पर गिरकर शबनम का रूप जाहिर कर रहे थे। गोपाल भवन के फव्वारो की छटा को देखती हुई मैं आगे बढ चली—जहां पानी के हौज बने हुए थे—वहीं ठहर कर मैंने चन्द्रमहल को देखना चाहा लेकिन वह बारादरी के पीछे ऐसा छिप गया जैसे बादलो की ओट मे पूनम का चांद। मेरा मन वहाँ भी न लग सका और मैं अकेली ही बादल महल मे जा पहुंची। वहां चेला-खवासो मे हलचल मच गई बांदियाँ दौड आई और मेरे लिए व्यवस्था होने लगी।

—मैं कटहरे के सहारे खडी तालाब को देख रही थी साफ सुथरे पानी मे महल की परछाई साफ नजर आ रही थी—और मेरा प्रतिबिम्ब भी। एक उदास सी गहरी छाया को देख कर मेरा मन डर गया। उस दिन मैं खुद नहीं समझ पा

रही थी कि मुझे क्या हो चला था ? अपने आपको बहुत समझाने का यत्न कर रही थी लेकिन हर पल हारती ही चली जा रही थी। मैं कभी भी अकेले में अधिक समय तक नहीं रह सकती थी लेकिन उस दिन मुझे अकेलापन बेहद अच्छा लग रहा था और उस उदास माहौल में दिल को सुकु मिल रहा था। एक बाँदी आकर मुझसे कुछ कदम दूर खडी हो गई, लेकिन कुछ कहने की हिम्मत न कर पा रही थी। मैंने मुडकर उसकी ओर देखा और कहा— मैं तो घूमने चली आई हूँ, भाग दौड की जरूरत नहीं है।'

—वह सिर झुका कर कुछ पल खडी रही और फिर धीमे से कहा—'महल मे पधारें।"

— नहीं।'

—वह वहीं खडी रही।

—'सुना नहीं तुमने ! मुझे अकेले म रहने दो।"

—वह चुपचाप थके कदमों के मा-, लौट गई।

—मैं साँझ ढले तक वहीं खडी रही और पानी की सतह पर उतरती हुई साँझ व सिन्दूरी रंग को देखा—जो अपने प्रिय क साथ अधेरे में डूबती चली जा रही थी। कुदरत के अजीब खेल को देखकर अपनी जिन्दगी से तुलना करने लगी।

—मैं अधेरे की सुख स्याही मे डूब जाना चाहती थी। अन्नदाता ने पैगाम तक न भेजा—मुझे बेहद गम था। साथ ही यह दुख था कि जो रसकपूर यह नाज करती थी कि उसका शहशाह केवल उसका है, किसी दूसरे का हक नही है जो एक पल के लिए भी रसकपूर म जुदा नही रह सकता था—वह जुदाई की घडियों म उसका नाम भी अपने लबों पर न दुहरा सका। मैं अब तक जो जी रही हू क्या वह फकत वहम है ? इसके सिवा कुछ नहीं। काश ! खुदा खैर करे। गर कृष्णा का विवाह राज स हो जाता तो रसकपूर की क्या स्थिति होती ? मुझे उनके सामने नगे कदम नाचना होता और भूल जाती कि मैं इस रियासत की अधीश्वरी रही हूँ। मैं अपने खयालों मे खडी पत्थर की बुत बन गई थी—मुझे तो तब ध्यान आया—जब रतना ने मुझे झकझोरते हुए कहा— आप यहाँ क्या कर रही हैं ?"

—'रतना ! तुम ?"

—'रानी साहिबा ! खयाल छोड़ भी दीजिए ! तीन दिन बाद अन्नदाता पधार रहे हैं आप जी भर कर श्रोलमाँ दीजिए, लेकिन इस अंधेरी रात मे आप किससे बतिया रही हैं ?'

—"अपनी घुटन से। रतना ! आज तुझे एक राज की बात बताती हूँ। मेरी वालिदा मेरा किसी गरीब के साथ विवाह करना चाहती थी ! वह उम्र भर रोती पीटती रही लेकिन मेरे मददगारों ने उस बदनसीब की एक भी न सुनी। रहमत कि मुझे यहाँ आना था। आज मैं विचारती हूँ कि सदा गुलशन परस्त रही नादीदा काँटों से भी उलझती रही सिर्फ अपनी हसियत के लिए। लोगो के चेहरों की ताबानी छीन कर भी मैंने क्या सुख पाया ? मेरा महबूब भी मेरा न हो सका"

—"रानी साहिबा ! आप अपने दिल से वहम निकाल दीजिये ! वक्त की नाजुक घडी को पहचानिये ! आप अपने गम का दरिया म डूबी हुई हैं और आपके दुश्मन मौके का फायदा उठाकर फरेब करन से नहीं चूक रहे हैं। यह नही हो सकता कि अन्नदाता आपके लिए पगाम भी न भेजें। इसके पीछे जरुर ही किसी की चाल है। ये लोग कोई दूसरे नहीं हैं, ये वही हैं जो अन्नदाता के दिन व दिमाग म आपके प्रति नफरत पदा कर देना चाहते हैं।'

— क्या कोई नई खबर है ?

— बहुत ही दुख और अचरज की बात है।

—'क्या हो गया ?"

—'आप सुन भी न सकेंगी।'

—'रतना पहेली न बुझा रसकपूर हर दुख को सह लेगी।'

—'नया मुसाहिब ... ...।'वह आगे न कह सकी।

— क्या ? मिश्रजी ?

—'हाँ रानी साहिबा ! मिश्रजी को हटा दिया गया।"

— लेकिन किसके हुक्म से ?"—मैं चीख पडी। मेरी आवाज से बादल महल गूँज उठा और प्रतिध्वनि लहरों से जा टकराई।

— ड्योढी म जशन मनाया जा रहा है। उस अंधेरे मे आज घी के चिराग जलाये जा रहे हैं। हर नजर मुझे घूर रही थी— जसे मैं कोई गुनहगार हू। मैंने नवगणों से पूछा तो—चाद ने बताया की आज तुम्हारी मालकिन के खास आदमी को हटाकर नया मुसाहिब बना दिया गया है।'

—मैंने उससे पूछा कि—यह कसे हुआ ?

—चाँद ने बताया—माजी साहिबा राठोडजी की सलाह से अन्नदाता ने नया मुसाहिब भिजवाया हैं।

—'रतना ! मैंने यह समझा था कि डयोढ़ी का जहर दब चुका है लेकिन ये औरतें मुझे जिन्दा नही रहने देना चाहती। तुम्हे कुछ मालूम है कि मिश्रजी कहाँ है ?'

— आज दिन भर यहाँ नही पधारे।"

— कहीं इन कमीनो ने उस भले आदमी को भी सीकचो मे तो बन्द नहीं करवा दिया ? रतना ! अब मैं चुप न रहूँगी। इस डयोढी की हड्डी को ही तोड डालूँगी ताकि यह जहर खत्म हो सके '—कहती हुई मैं रतना के साथ महल मे लौट आई लेकिन उस रात मुझे नीद न आ सकी।

□ बारह

—शिकवा ए हिज्रा के जजबात दिल से हटने का नाम न ले रहे थे—और दुश्मन चमन उजाडने के लिए जी भर कोशिश कर रहे थे। परवाजे-शौक म आदमी अपनी हैसियत का भुलाकर पागल हो जाता है परवाने चिरागे-रोशनी पर मर मिटते हैं शमा बदनाम हो जाती है और दुनियाँ की निगाहो मे तमाशा बन कर उम्र भर जलती रहती है। मैं भी शमा बनना चाहती थी और किस्मत ने मुझे वह दिन भी दिखा दिया—जब फकत तपिश रह गई। सपने बिखर गये और हकीकत सामन आ गई।

—मैं मिश्रजी को मुसाहिब के ओहदे से हटाने पर दग रह गई आपसे अब क्या छिपाना? मेरे जिस्म क हर पहलू म आग धधक उठी। अन्नदाता ने मेरी राय जाने बगर ही एक ऐसा कदम उठा लिया जिसकी मैं कल्पना भी न कर सकती थी। रसकपूर की मर्जी के बिना जिस रियासत म पत्ता भी न हिल पाता था—आज उसके खिलाफ एक ऐसी बुलन्द आवाज—जो उसका अस्तित्व ही मिट्टी मे मिला दे। मैंने बनेसिंह को बुलवाया और आदेश दिया कि मिश्रजी को यहाँ हाजिर किया जावे! कोतवाल के पास फरमान भिजवाया कि जहाँ कहीं भी मेरे खिलाफ साजिश की बू आये—उसे गिरफ्त मे ले लिया जाये। मेरे चहेते इकट्ठे

हो गये और तरह तरह की बातें करने लगे। कई तरह की अफवाहें मेरे कानों को पर्दे हिलाने लगी, कुछ बातें तो ऐसी थी कि जिन्हें सुनकर मेरे कदमों के नीचे से जमीं खिसक गई और खून उतर कर मेरी पलकों पर आ गिरी–जिससे मेरी आँखों के सामने सिर्फ अंधेरा रह गया। मैं सब्र न कर सकी गुस्से में अपना विवेक खो उठी मेरा इशारा पाकर ड्योढ़ी में तहलका मच गया। मेरे हुक्म से जागीरें छीन ली गई और दूसरों के नाम पट्टे कर दिये गये। यहाँ तक कि मैंने न चाहते हुए भी भटियाणी रानी के खास चुनिंदे आदमियों का कत्ल करवा दिया। उन सभी घटनाओं से ऐसा आतंक फैला कि जो मेरी खिलाफत करते जा रहे थे—वे सभी चुप हो गये और मेरी जी हुजूरी में लग गये। दो दिन के भीतर ही महलों की राजनीति ने तेवर बदल डाले और रसकपूर की हुकूमत जम गई।

—दूसरे दिन साँझ को चन्द्रमहल की पाँचवी मंजिल छवि निवास में मेरी भेंट मिश्रजी से हुई। वे एकदम डरे हुए और सहमे–सहमे से नजर आये। मैंने उनकी मन स्थिति को पढ़ते हुए कहा—"आप मुझसे मिले भी नहीं ?

—उन्होंने चारों ओर देखा।

—'आप बेफिक्र रहिये। यहाँ इन्सान का बच्चा भी कदम नहीं रख सकता है।'

— अन्नदाता का हुक्म था ' उन्होंने बहुत मुश्किल से अपना मुँह खोला।

—"आपका क्या गुनाह था ?"

—'ड्योढ़ी आपसे बदला लेना चाहती है आपको नष्ट कर देना चाहती है।'

—'लेकिन आपको " ।'

— 'मुझे भी काँटा समझा जा रहा है। मुझे कृष्णसिंहजी ने सलाह दी कि इस हुक्म के मुताबिक ओहदा छोड़ कर घर चले जाओ वर्ना दूसरे मुसाहिबों की तरह उम्र भर सींखचों में सड़ते रहोगे या मौत का फन्दा गले में झूलता नजर आयेगा। मैं इतना डर गया कि आपसे भी मिलने की हिम्मत न कर सका।'

— ठाकुर साहेब भी इस साजिश में शामिल हो गये ?"

— मेरा नाम न लीजियेगा।'

—"आप बेफिक्र रहिये ! अन्नदाता के आने के बाद इन सभी की साजिश कुचल कर रख दूँगी। इस रियासत पर ठाकुरों या महारानियों का राज नहीं है राज है रसकपूर का।'

—'रस !—अचानक उनके मुँह से निकल गया और फिर वे सभलने का यत्न करते हुए कहने लगे —' रानी साहिबा !"

—'नहीं आज मुझे बहुत खुशी है कि आपने अपनी भूल स्वीकार की। आप मुझे रस ही कहा करें। मैं अपनी भटकी हुई चेतना को मुक्ति दे सकूँ। आप यह क्यों भूल गये कि आपसे मेरा वह रिश्ता है—जिसे कोई ताकत नहीं मिटा सकती।

—'बेटी ! इस राज को राज ही रहने दो !

—"आप इसे राज कह कर चैन से लेंगे लेकिन मैं उम्र भर से जिस दर्द को जी रहूँ उसे बर्दाश्त करना अब मेरे वश की बात नहीं है।

—'मेरी इज्जत धूल मे मिल जायेगी। आज जाति वाले मेरे घराने को पचों का घर मानते हैं और मुझे पच परमेश्वर। यदि यह राज राज न रह सका तो मेरे कुल को जाति से बाहर होना पड़ेगा। कोई भी बिरादरी का आदमी जाजम पर कदम न रखने देगा।"

—'आप कौम की इज्जत के लिए नहीं, अपनी आबरू के खातिर खूनी रिश्ते को ठुकरा रहे हैं लेकिन कभी यह भी ख्याल आया कि जायज आदमियों द्वारा पैदा की गई हम जैसी नाजायज औलादों की क्या कौम होगी ? हमारी बिरादरी क्या होगी ? आप तो पंडित हैं शास्त्रों का अध्ययन किया है आपके ग्रंथों मे ऋषि–मुनियों ने हमारे लिए क्या व्यवस्था की है ? या हमारा जन्म इस समाज मे बदनाम अड्डों के लिए ही है ?

— बेटा ! मैं इसे गुनाह नहीं कहूँगा लेकिन मुझमे यह हिम्मत भी नहीं है कि सर-बाजार इस हकीकत को स्वीकार लूँ "—कहते हुए मिश्रजी ने अपनी निगाह झुका ली।

— मैं अपने दर्द से कराह उठी। एक बाप अपनी औलाद को तवायफ कभी नहीं बना सकता लेकिन मैं किसी बाप की बेटी होते हुए भी नाजायज थी जिसके प्रति दर्द का होना असम्भव था।'

— आप होशियार रहिये ! न जाने कब क्या मुसीबत खड़ी हो जाय'— उन्होंने मुझे सतर्क करते हुए कहा।

— मौत से बढ़कर क्या मुसीबत होगी ? जो जन्म देकर मंजूर नहीं करते व मौत देकर कब क़त्ल का अंजाम क़बूल करेंगे ? दुनियाँ एक अजीब सराय है, कल आना और कल जाना !'— मैंने सच्चाई को स्वीकारते हुए कहा।

—'बेटी ! भगवान तुम पर सदा कृपा रखें, तुम महाराजा का अमर प्रेम पाती रहो !'—आशीर्वाद देकर मेरे पिता चले गये लेकिन एक ऐसा दर्द का पहाड़ खड़ा कर गये—जिसे इस उम्र में पार करना बहुत ही मुश्किल है।'

— मैं अपनी चिन्ता में घुली जा रही थी लेकिन किसी को भी मेरा फिक्र न था सभी अपने फिक्र में गाफिल थे गैर के लिए खयाल आना मुमकिन न था। जब मेरे पिता जो हमेशा खैरख्वाह रहे वे ही मुझे मुसीबत समझ कर मुझसे दूर हो चले। उन्होंने भी मुझे गले की बलाय समझकर झटक दिया। यद्यपि उन्होंने जाहिर न होने दिया और न कुछ कहा ही लेकिन उनके चेहरे पर उड़ती हवाईयाँ साफ बता रही थी कि वे सियासी मामलों में उलझना नहीं चाहते थे और अपनी लाडली बेटी से रिश्ता जोड़ कर अपने प्राण मुसीबत में नहीं डाल सकते थे।

—मुझे बेहद दुख हुआ। उनका मनलऊपन मेरे लिए चुनौती थी—जिसे मैं वक्त पर न समझ पाई।

—मैंने वक्त के हालात पर नजर रखते हुए अन्नदाता के पधारने पर जश्न की तैयारी के लिए चेले खवासों को हुक्म दिया। रिघसिंघ पोल से सर्वतोभद्र तक मखमली कालीन बिछाई गई। सर्वतोभद्र जिसे दीवाने खास कहा जाता रहा है अम्बावास के भीतर की ओर है। यह सुन्दर भव्य प्रस्तरों से बना अपनी कला के लिए एक खूबसूरत देन है। कामगर किनारा वाले मेहराबों से सुसज्जित भवन मुगल बादशाहों के दीवाने खास से कम नहीं कहा जा सकता। छत पर सोने की कलम से सधी हुई चित्रकारी रियासत के फनकारों की कारीगरी को जाहिर कर रही है। दीवानेखास से कुछ ही दूरी पर एक लम्बी सी गली—जो जाली के पर्दों से ढकी हुई जनाने के बैठने के लिए रही है—जहाँ से हरम की रानियाँ, बाईयाँ आदि राजसभा के मनोरंजे नजारे देखती रही लेकिन मैं वहाँ कभी न बैठ पाई बल्कि ड्योढी की निगाह ने इन्हीं जालियों से मुझे दीवाने खास में देखा है। सर्वतोभद्र के झाड़-फानूस पर मोमबत्तियाँ लगाई गई। जब इन बत्तियों की जगमगाहट फैलती है तो सोने का पानी झिलमिलाता नजर आता है। उस वक्त ऐसा नजारा

दिखाई देता है कि मानो खून की दीवारें पानी पर तर रही हों और दीवाने खास नाव की तरह सतह पर तिर रहा हो। दीवान खास पर संगमरमरी सिंहासन—जिसके चारों और बहुमूल्य नगीने जड़े हुए—जो रियासत की समृद्धि को जताते हुए हर आने वाले की आँखों में चकाचौंध पैदा कर देते। यह तो आपको बता ही चुकी हूँ कि यह शहर जवाहरात का घर रहा है। महाराजा के खजाने में एक से एक बहुमूल्य नगीने रहे हैं। जब अन्नदाता के साथ मैंने जयगढ़ के खजाने को देखा तो मेरी आँखों के सामने चमचमाते हीरे–मोतियों का ढेर लगा हुआ देखकर अचरज में डूब गई। मैंने अपनी जिन्दगी में ऐसे नगीने न देखे थे—शायद ही और कहीं हों। जयगढ़ में जाने का मौका मुझे ही मिल सका—और किसी को नहीं। उस समय मरुधरों का सरदार नाराज भी हुआ लेकिन अन्नदाता के सामने उसकी कुछ न चल सकी। आपको यह जानकर अचरज होगा कि राजा-महाराजा को भी अपनी आँखों के पट्टी बाँध कर वहाँ जाना होता था। अजीब दस्तूर और अजीब ही उसूल !

—महाराजा इसी संगमरमरी सिंहासन पर विराज कर खास आदमियों से मुलाकात किया करते हैं। ठाकुर रिश्तेदार साहूकार फौजदार आदि सभी यहाँ हाजरी देते या नजराना पेश किया करते। कभी कभी तो मजलिस भी यहीं जुड़ती और जालीदार झरोखों से रानियाँ नजारा देखकर खुश होतीं। उस दिन अन्नदाता के सिंहासन पर गलीचा बिछा दिया गया था—जिस पर मखमली गद्दी और मसनद का इन्तजाम किया जा चुका था।

—माणक चौक चौपड़ से सिंहद्वार तक आतिशबाजी का इन्तजाम था। दोनों ओर तीर फँवारे चक्र लटक हुए अन्नदाता की इन्तजार में अपनी बारूदी गन्ध जी रहे थे। उदयपोल से विजयपोल तक फूलों से सजाया गया। चेला खवासों को अपनी वर्दी में रहने का हुक्म दिया गया। गणपोल के पास दीवाने आम को ऐसा सजाया गया जैसे बगीचे के बीच सुन्दर सा कमल तलाव हो। नीले रंग के कामदार गलीचे पर सोने का जड़ाऊ सिंहासन वहाँ तक गुलाब की पखुरियों का बिछौना – जिस पर अन्नदाता के कदम रखे जा सकें। दीवाने आम में नगर के खास आदमी ही आ पाते हैं।

महाराजा की विजय यात्रा के स्वागत में चन्द्रमहल दीपों से जगमगाने लगा। प्रीतम निवास के आँगन में चाँदी के पीलसोत जगमगाते रहते हैं दीवारों पर दीपावली की नयनाभिराम लालटेनें लटकती रहती हैं – जिनके उजाले में दीवारों पर की गई चित्रकारी साफ दिखाई देती रहती है। प्रीतम निवास की

पोषी म अन्नदाता की आरती उतारने का इन्तजाम किया गया। महल के ऊपरी म ग यानी कि दूसरी मंजिल—जिसे सुख निवास कहा जाता रहा है - वहीं मजलिस का इंतजाम किया गया ड्योढी के पायरे वाले और सूतने वाले घगाडों को न्यौता दिया जा चुका था। इसी महल में कभी अन्नदाता निवास किया करते थे। यहीं की दीवारों पर मेरे हुजूर की वासना के अदृश्य चित्र अंकित हैं। ये दीवारें कभी नहीं भुला सकेंगी टूटते हुए गजरों की मुस्कान और शमशार निगाहों मे बिजलियों का बन्द होना। रंग मंदिर में सोने रंग के झाड़ सजाये गये और आंगन में गुलाब की पत्तियाँ बिछा दी गईं—जिनका प्रतिबिम्ब रंग मन्दिर मे जड़े दर्पणों मे झलकन लगा। शोभा निवास पर मैंने अधिकार जमा लिया था—इन महलों में यह महल अपनी खूबसूरती के लिए मशहूर रहा है। आमेर के महलों की तरह शीशे का काम यहाँ भी है कारीगरों के सधे हुए हाथों ने रूपए के टुकड़े इस कदर जड़े है कि हर ओर से हजार परछाईयाँ दिखाई दें। इसी प्रकार छवि निवास श्री निवास आदि सभी महल सजाये जा चुके थे। चन्द्रमहल म गजब की हलचल मची हुई थी।

—छत्तीस कारखानों के हाकिमों और मुलाजिमों की भीड़ एक दिन पहिले ही जुड़ गई थी। गुणीजनखाने के फनकार आ जमे थे। कवि शायर संगीतकार गवये पखावजिये शहनाईराज व तबलची आदि सभी अपने अपने साज के साथ महाराजा की अगवानी में पेश किये जाने वाले कायक्रम का पूर्वाभ्यास कर रहे थे। मैं रतना के साथ सारी व्यवस्था को देखकर आई ताकि अन्नदाता यह न समझ सकें कि उनकी गैर मौजूदगी में रस ने अपना फर्ज न निभाया हो। सूरतखाने और पोशाखाने के मुलाजिम भी इस सजावट में बेहद रुचि ले रहे थे। रियासत की इमारतों में आमेर के जयमन्दिर और जसमन्दिर की सानी रखने वाली कोई इमारत नहीं है लेकिन महाराजा जयसिंह जी ने जयपुर में उत्तरी भाग पर महल बसाये—ये भी अपनी बसावट और कला के अनोखे नमूने हैं इन्हें देखकर कोई भी कला पारखी अचरज किये बिना नहीं रह सकता। मैंने रतना के साथ महल की छत पर चढ़कर चारों ओर का नजारा देखा। जनानी कौम मे रथ मन्याड पालकी व बग्गियों का भारी जमघट नौकर चाकरों की भारी भीड़ रंग बिरंगी पोशाक में चेला-खवास काना फूसी में लग रहे थे। बादरवाल दरवाजे तक सजावट एक नया ही माहौल और जश्न की पूरी तैयारी! महल क्या है? अपने आप मे पूरा एक शहर दजनों मन्दिर नहरें, बगीचे, कुंड और कचहरियाँ भी। पिछवाड़े की ओर लम्बा चौड़ा तालाब! मैं उन महलों में रहती हुई अपने-आपको सौभाग्यशालिनी मानती थी—क्योंकि रियासत के खास आदमियों को भी चारों ओर घूमने-फिरने की

खास इजाजत नहीं है । मैंने महफिल का इन्तजाम भी कर लिया था मजलिस के लिए चुनिन्दे पारखी साजिन्दे बुलवा लिये और मनपसन्द बाईयों को न्योता भिजवा दिया गया था ।

—जनानी ड्योढ़ी में भी खुशी के फव्वारे फूट पड़े थे । अपने अन्नदाता को खुश करने के लिए कौन पहल करना नहीं चाहता, सभी तो बाजी मार लेना चाहते थे—लेकिन मैंने इरादा कर लिया था कि मैं अन्नदाता का स्वागत करने महल से बाहर नहीं जाऊँगी अपितु महल के झरोखे से नजारा देखती हुई वहीं इन्तजार करूँगी । मैं उन्हें दिखा देना चाहती थी कि उन्होंने मेरे साथ जो सलूक किया—उससे मेरे दिल पर क्या गुजरी है ? महाराजा को हक है कि वे जिन्दगी में अनेक शादियाँ करें और राजकुमारियों की लम्बी फौज को महलों की चाहर दीवारियों में बन्द करके घुटने के लिये मजबूर कर दें और वे अपने मुँह से उफ भी न निकाल सकें अपितु घुटन में जिन्दगी जीना गौरव समझें । रानियाँ के लिए ऐशो आराम सियासी मामलों में दखलन्दाजी और एक दूसरी पर छींटाकशी करते हुए शराब के घूँट गले से उतारते हुए चुक जाना जिन्दगी हो सकती है रसकपूर की नहीं वर्ना यह औरत भी उम्र भर तवायफ न रहती, अन्नदाता के साथ फेरे खाकर इसी फौज की कतार में जगह पा लेती । आप इसे भूल यह सकते हैं, लेकिन मैं इसे हर्गिज भूल न सकूँगी, मुझे नाज है कि मैंने प्यार के लिए सारी तोहमत उठाई और इसी जलन में आज भी जिन्दा हूँ अन्यथा रानियाँ जिन्दा रह कर भी मुर्दानगी जीती हैं ठीक इसी तरह मैं भी एक लाश रह जाती और मेरा कुछ भी अस्तित्व न रह पाता । ये महल, ये बगीचे, ये नहरें और यह गुलिस्ताँ मेरी रूमानी हरकतों को कभी याद भी न कर पाती । यह बात जरूर थी कि मेरा जनाजा किसी खास जगह पर कब्र में दफनाया जाता—आज दो गज जगह के लिए भी तरसना होगा ।

—हाँ तो मैं आपसे अर्ज कर रही थी कि मेरे राज के जंग से लौटने पर सारे शहर को सजाया गया था । जनता बेहद खुश थी उनके इश्वर राजी खुशी लौट कर आ रहे थे । मुझे भी बेहद खुशी था लेकिन अपने दर्द को भुला न पाई थी । अन्नदाता के पधारने की घड़ियाँ नजदीक चली आ रही थी—और मैं अपने आपसे संघर्ष करने पर भी हार नहीं पा रही थी । मैंने जिद कर ली थी कि महल की सीढ़ियों से नीचे भी न उतरूँगी चाहे मुझे इस आँधी से जूझना ही पड़े ।

—मैं अपने अहं में ऐंठी हुई थी और मेरे दुश्मन सजग थे । मेरे खिलाफ

एक नया आन्दोलन और नई बगावत की शुरुआत ! रियासत में एक साथ असन्तोष की लहर ! उस वक्त अकाल की काली छाया ने आम आदमी की जिन्दगी में डर पैदा किया, भूख के काले पंजे इन्सानों के शरीर को नोंचने लगे थे—किसानों और मजदूरों की दशा दयनीय हो चली थी। मैं इस हकीकत से असहमत नहीं हूँ कि मेरे हुजूर के राज में अराजकता फैल गई थी और आम आदमी गरीबी के दौर से गुजर रहा था। कुछ लोग फरियाद करने के लिए आतुर हो रहे थे, वे मुझसे मिलना चाहते थे लेकिन न मैं उनसे मिल सकी और न उनकी सुन ही सकी। मैं तो अपने प्रिय के इन्तजार में बिकल था, उनकी सूरत देखने के लिए तरस रही थी, उस वक्त मुझे सियासी या रियासी मामलों से कोई मतलब न था। दुश्मनों को मौका मिल गया और बागियों ने शहर पनाह शहर की सड़कों पर एक नया हंगामा खड़ा कर दिया। उस हंगामे का मकसद सिर्फ मुझे बदनाम करना था, मेरे लिए नफरत को पैदा करना था। मैं उनके लिए क्या कर सकती थी ? जो ओहदों पर जमे हुए थे—वे ही मुँह लटकाकर सूखा सा जवाब दे गये। मैं क्या समझती ? मैंने कहला दिया कि अन्नदाता के पधारने के बाद ही फरियाद पर सुनवाई हो सकेगी।

—मैंने कभी किसी से दुश्मनी न चाही दोस्ती के लिए आरजू न की। यह सच है कि मेरे राज ने जो सम्मान मुझे दिया उसकी सुरक्षा के लिए हमेशा यह जीती रही। सामन्त और जागीरदारों की तमन्ना थी कि मैं बाईजी बनी रहूँ और उनके घरों की कीमती कालीन पर महावर लगे कदमों की थिरकन बनती रहूँ, वर्ना उन्हें कौन सा दुख था कि महाराजा मुझे सम्मान देकर अपना रहे थे। सामन्तों को यह जलन न थी कि एक तवायफ सिंहासन पर आ बैठी है बल्कि यह दर्द था कि उनकी रसकपूर उन सब की न रही इस पर किसी एक का अधिकार हो चला—जिसे वे कभी बर्दाश्त न कर सके और हमेशा के लिए दुश्मन बन गये।

मैं थक चुकी थी किन्तु उनसे मिलने की उमंग में थकान महसूस न हो पा रही थी। रतना ने मेरे शृंगार के लिए सभी साधन जुटा लिये थे। चाँदी के प्याले में मेंहदी घोले वह मेरा इन्तजार कर रही थी। रतना ने अपने हाथ में मेरी हथेली रखते हुए कहा—'जी करता है आपके दिल के दर्द की तसवीर ही उतार दूँ।'

—'रतना ! दर्द का दिखावा कौन सी राहत दे देगा ?'

—घड़ी भर को तो तसल्ली मिल जायेगी।

—'यह भी कोरा वहम है।'

—'फिर क्या रख दूँ ?'

–'ये रीति–रिवाज तू ही अधिक समझती है ।'

–"आपको आज रात ही शृंगार करना चाहिये ।

–"वे तो कल पधारेंगे ।'

– उनके आने की खुशी में ।'

–' रतना ! कल देखना मेरे हुजूर एक कदम भी आगे न बढ़ा सकेंगे !"

– आपकी सी किस्मत करोडों मे किसी एक को मिल पाती है । भगवान ! आपकी बात बनाये रखें !

– रतना ! तेरा खबरनवीस भी बेवफा ही है क्या ?'

– बचारा मामूली आदमी है ।'

– प्रेम म कोई मामूली नहीं होता है । यह ससार ही ऐसा है जहाँ दिल के फीते मे ही नाप ली जाती है, धन दौलत की रस्सियों से नही ।"

– मालकिन ! प्रेम बेडियो से जकड़ा रहे और जुल्म होते रहे—तब भी दिल का ही कसूर कहेंगी ।'

—रतना ! तू क्या दिल की जाने ! मैं तो इतना ही जानती हूँ कि अन्न दाता ने मुझे हृदय से प्रेम किया है और मुझे अपने कदमो म बठने के लिए दो कदम जगह दी—जिसे पाकर म जन्म-जन्मान्तर के लिए केवल उनकी होकर रह गई हूँ ।

—रतना मेरे हाथो म महदी मॉड कर चली गई थी, मैं अपने महल मे अकेली ही थी—अचानक दरवाजे पर आहट हुई मैं चौंक पड़ी । मेरे दरवाजे तक किसी के आने की हिम्मत ही न हो पाती थी । पहरेदार के साथ मुसाहिब ने प्रवेश करते हुए कहा 'आपको इस वक्त तकलीफ देनी पड रही है ।'

– मैं उसकी विनम्रता के कारण अपनी खीज दबा कर रह गई । उसकी ओर बिना नजर उठाये ही मैंने कहा— कहिये !"

– जी बात यह है कि – – – – । —वह कुछ भी न कह सका ।

– कहिये, आखिर क्या कहना चाहते हैं आप ?'

– अन्नदाता का हुक्म है – ।

—'क्या हुक्म है ?'

— आप सुदर्शनगढ़ में तशरीफ ले चलें ?"

—"क्या — ?'

—'मैंने सभी बन्दोबस्त कर दिये हैं। सगड़ तयार है।'

—"अभी ?"

—'हाँ अभी ही।"

—'आखिर क्या ?"

—'अन्नदाता का हुक्म है।"

—'मेरा कलेजा धक रह गया। उस समय मैं कुछ भी न समझ पाई।"

—'कल सुबह " – ।" मैं वाक्य भी पूरा न कर पाई थी कि मुसाहिब ने कहा—"सुबह नहीं, अभी रात ही को, आपको वहाँ पधारना होगा।'

—'लेकिन इस अंधेरी रात में—और सुदर्शनगढ़! अन्नदाता भी तो वहाँ नहीं हैं फिर मेरा वहाँ पहुँचने से क्या मतलब ?'

—"यह तो मैं कुछ नहीं जानता, लेकिन मेरे पास यह संदेश है कि आपकी वहाँ व्यवस्था कर दी जावे और अभी हो।

—मैं खीज कर रह गई—और अंधेरी रात में ही सुदर्शनगढ़ जाने की विवशताभरी स्वीकृति देनी पड़ी।

—वह रात उन महलों में मेरी आखिरी रात थी।

□ तेरह

—मेरे राजदार का हुक्म था—जिसे टालना नामुमकिन था। उनकी गैर मौजूदगी में मुझे वे सभी हक थे—जो महाराजाधिराज को रहे। मेरे मन में नेक या बुरा होता तो मैं मुसाहिब को कैद करा देती और अन्नदाता का हुक्म मानने से साफ मुकर जाती, लेकिन मैं तो प्रेम में दीवानी थी और उनके हर हुक्म को तहे दिल से मंजूर करना ही मेरा फर्ज रहा। उस वक्त मैं हर के हौसले मुना बटी सिर्फ फर्ज को नजरंदाज रखते हुए मुसाहिब के साथ सुदर्शनगढ़ रवाना होने को तैयार हो चली।

—पल भर के खातिर मेरे दिल में खयाल जरूर आया कि मेरे हमराही मेरे शहंशाह ने यह कैसा हुक्म दिया है? जबकि कल सवेरे दीवान आम के खूब-सूरत बरामदों के बीच मैं उनका स्वागत करने तो न पहुँचती लेकिन मेरी निगरानी में कामदार किनारी वाली मेहराबों पर फूल-कलियों की कारीगरी को देखकर महाराजा अचरज से पूछते यह सब किसकी कला का नमूना है? दरबारी मेरा नाम अवश्य लेते और मेरे राजदार मेरी याद में बेचैन हो महल तक दौड़ आते। भीड़ देखती रहती दरबारी परेशां हो उठते जालीदार दीर्घाओं में बैठी रानियाँ और पड़दायतें जल भुन कर मेरी तकदीर को कोसती और मैं अपनी

तकदीर पर नर्गिस की कलियाँ न्यौछावर कर मेरे राजदार की भुजाओं में गजरे की तरह झूल जाती। यह सब कुछ मेरी तकदीर में न था और जलनफरोशी की साजिश कामयाब होती थी। मैं जिन्दगी में हमेशा जीतती आई थी, कामयाबी पर कामयाबी हासिल करती रही थी, फतह पाती रही थी लेकिन इस बार बाजी हारना ही शायद तकदीर में लिखा था। मात भी इस कदर खाई कि जिन्दगी में फिर कभी मोहरे अपने घर में कदम न रख सके और हमेशा के लिए ही खिलाड़ी बाजी हार बैठा। मुझे गम नहीं है बाजी हारने पर और न अब गुजरे के गम का इजहार ही करना चाहती हूँ बल्कि अपने दिल से इस दर्द को रफ्ता रफ्ता भुलाने की कोशिश कर रही हूँ, शायद इस जिन्दगी में कभी भुला सकूँगी ? जो दानिस्ता धोखा खाया—उसका गम क्या करना ? मैंने ही बाजी नहीं हारी थी बल्कि मेरे शहंशाह को चारों ओर से हार का सामना करना पड़ रहा था। खुदा को न जाने क्या मंजूर था ?—वे कृष्णा की मौत से परेशां हो चले थे, उनकी बहादुरी पर दाग उभर आया था—जिसे भुलाना उनके वश की बात न थी। तलवारों की खनखनाहट और तोपों की गड़गड़ाहट के बीच इन्सानी चीख उनके दिल को न दहला सकी लेकिन कृष्णा की खुदकशी ने उनके दिल के तारों पर दर्द पैदा कर दिया था—जिसकी सदा चीख बन कर गूँज रही थी।

—मेरे साथ जो कुछ हुआ वह इतिहास के लिए नया तो नहीं कहा जा सकता। हिन्दुस्तान की संस्कृति और सभ्यता में एक नमूना और जुड़ गया। औरतों का जन्म केवल कुर्बानी के लिए होता है, इस माटी को फक्र है कि यह अपने आंगन में उन देवियों को जन्म देती है जो जुल्मों सितम जी कर भी मुँह से उफ तक नहीं निकाल पाती हैं। टूट जाती हैं चुक जाती हैं मर जाती हैं लेकिन समझौता तोड़ कर बागी होना आदत में नहीं है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि गुलामी की जंजीरों से बंधी जिन्दगी जीने में एक अजीब सा लुत्फ आता है—जिसे हम कभी तोड़ नहीं सकती हैं। मैं अपने-आपको देवी कहने का हक तो नहीं रखती हूँ क्योंकि आप तो जानते ही हैं कि मैं आम औरतों से भिन्न हूँ नफरत हूँ गन्दगी हूँ और आप सभी के कदमों की धूल हूँ। मैं चाहे किसी एक पर भी हक नहीं रखती हूँ, किसी का नाम अपने साथ नहीं जोड़ सकती हूँ, यहाँ तक कि दो घड़ी के खातिर किसी को भी अपना नहीं कह सकती हूँ, लेकिन आप सभी को हक है कि इस तवायफ को अपना समझें, गैर समझें, अंधेरे में गले से लगायें और उजाले में मुँह पर थूकें। मुझे अफसोस है कि मैं मेरे राजाजी के लिए कुछ न कर सकी उन्होंने मुझे बहुत कुछ दिया, जमीं से उठाकर आसमां पर बिठाया। मेरे देवता

भूल गये थे कि मेरी जगह दिल में नहीं, कदमो के नीचे है उन्होने जो गलती की – वह मेरा गुनाह साबित हुआ और उसी जुर्म की सजा भाग रही हूँ। सियासी साजिशो ने मुझे मुजरिम ठहराया। मैं मुजरिम जरूर हूँ किन्तु रियासत की अदालत में नहीं बल्कि अपने राजदार के दिल की अदालत में।

—मुझे मुजरिम कहा गया, इसका भी खास गम नही है।

—गम है " । क्या कहना आपसे ? जो राज है वह राज ही बना रहे यही अच्छा है।

—हाँ, तो मुझे उ खूबसूरत महल छोड़ने पड़े मैं एक ही पल में उन आलीशान इमारतों से निकाल दी गई। मुझे रतना की बातें याद आ जाती हैं वह कहा करती थी कि इन दीवारों पर हर्गिज भरोसा न कीजिए ये दानिस्ता धोखा देने की आदत जीती रही हैं राजमहल की किसी बात पर भरोसा न कीजिए, एक घडी में सूरज अधर में डूब जाता है और दूसरे पल अधेरे से सूरज पैदा होता होता है।

—रतना सच कहती थी। वह नेवगण थी लेकिन उसने अधर उजाले की आँख मिचौनी देखी थी। मैं उसकी बातो को न समझ पाई और अपने अहं पर हमेशा इठलाती रही। काश ! वक्त रहते उसकी सलाह पर गौर करती तो आज रियासत का इतिहास ही कुछ और होता ! लेकिन खुदा को यही मजूर था, इसमें मेरी क्या खता !

—राजमहल !

—एक ऐसा सिक्का, जिसके दो पहलू—इब्तिदा और इन्तिहा ! बहुत जल्द पहलू बदल जाते हैं इब्तिदा होने से पहले ही इन्तिहा की घडी आ जाती है।

—मेरे देवता मेरे महल छोड़ने से ही खुश थे तो वे मुझे अपने दिल की बात कहते मैं सभी खुशी उनके सामने सब कुछ छोड कर चली जाती उनके दिल की चादर पर शिकन भी न आने देती। आपसे हकीकत बया कर रही हूँ कि अपने होठो पर उदासी की परछाई तक न पडने देती और हँसते हँसते उन महलो को दहरा उलाँघ जाती लेकिन वे इतनी छोटी सी बात भी कहने की हिम्मत न कर सके।

—सीतानी का भी महल छोडने पड़े थे और विश्वस्त कदमो के साथ चलते हुए अचानक अविश्वास के स्वर सुनने पड़े थे। भला मैं अपनी तुलना जगजननी

से नहीं कर सकती, केवल इतिहास का मदम जोड़कर अपने-आपको समझाने का प्रयास करती हूँ। मैंने रामायण म पढा है कि भगवान राम अपने मुख से सीता को कुछ न कह सके और लक्ष्मण को आदेश दिया कि वैदेही को विजन वन में छोड आयें। मैं समझती हूँ कि राम पीड़ा को सहन न कर सके और अपनी अनचाही विवशता को प्रकट न होने दिया। सीता के प्रति उनके हृदय म श्रद्धा एव प्रेम का पारावार उमड रहा था किन्तु राजनतिक दृष्टि से वे प्रतिबद्ध हो गये थे। इस प्रसग को याद करते हुए मैं भी खुद को विश्वास देकर जीने का इरादा करती रहती हूँ। मेरे सरकार मुझे हर्गिज नापाक नहीं समझ सकते हैं मेरे चरित्र पर कीचड उछालने का कभी इरादा नहीं बना सकते वे रसकपूर को हृदय से दूर नहीं कर सकते लेकिन सियासी मामलों की बेवशी इस बेरुखी के लिए उन्हें मजबूर कर बठी। उन्होंने मुझ अपने महलों से दूर कर दिया मेरे सभी हक छीन लिये, लेकिन अपने दिल से शायद ही दूर कर सके हों। आज भी मैं उनके दीदार के लिए तडफ रही हू एक ऐसी आग मे जल रही हूँ—जहां फूलों से शरारे बरसते हैं तब भला मेरे राजदार के दिल पर फफोले तो उभर ही आये होंगे। मेरे हुजूर न मुसाहिब को आदेश दिया और वह भी जगे-ए मैदान से। वे कभी ऐसा नहीं कर सकते थे। यह मेरे दुश्मनों की साजिश ही रही।

—मेरे दुश्मन जानते थे कि इस जादूगरनी के सामने उनकी एक भी नहीं चलती है, उनकी कोई बात नहीं बन पाती है मसनदाता कुछ भी न कर सकेंगे—यही इरादा करके उन्होंने दूर स ही मेरे खिलाफ हुक्म भिजवाया और मैंने मेरे देवता के आदेश को सिर से लगाया।

- मुझे भी मुसाहिब के साथ महलों स बाहर निकलना था।

—मैं अपने दिल की बात किसी से भी न कह सकी।

—इतिहास म औरतों के साथ कब जुल्म नहीं हुए? मर्दों न हमेशा औरतों के साथ बदसलूकी का सलूक किया। महाराजा दुष्यन्त न शकुन्तला को पहिचानने से ही साफ इन्कार कर दिया और अपनी औलाद का मजर करन से मुकर गये। इतनी दूर की क्या बात करनी? हिन्दुस्तान के बादशाह अकबर ने अनारकली के साथ क्या सलूक किया? वह प्रेम दीवानी मीरा की तरह जीने के लिए भी समझौता करने को तयार हो चली किन्तु जहांपनाह के दिल म दया की दरिया नम भी न हो सकी और जन्म जन्म के लिए साथ रहने की कसम खाने वाला सलीम गद्दी के सुनहरे स्वप्नों के सामने ताज पहिनने के लिए प्रेम के पुष्प को कदमों से

कुचल बठा । प्रेम के इतिहास म अविश्वास के लेख लिखे जान --कोई नयी घटना न थी।

—मैं मुसाहिब के साथ महल छोड कर बाहर आ गई। अफसोस कि उस घडी रतना भी मेरे पास न थी और न बनेसिंह का ही कोई ठिकाना। मैंने उस अधरी रात मे महल से विदा ली। जिस तरह अकेली उन महलों म पहुँची थी उसी तरह अकेली ही उन महलो से बाहर की गई। फक इतना ही रहा कि देहरी पर कदम रखते वक्त दिल मे बेताबी थी उमगें थीं और मिलने की उत्कण्ठा। लेकिन देहरी से बाहर कदम रखते वक्त फकत निराशा थी। उस रात भी अधेरा था और इस रात भी, उस रात मन मे पूनम सा उजाला था और इस रात अमावस सा अधेरा!

—काश! मैं मेरे अन्नदाता की ब्याहता होती! महाराजा कभी मेरे साथ इस कदर सलूक न करते और न मेरे दुश्मनो की ही हिमाकत होती कि वे मेरे खिलाफ इस तरह की साजिश करते। मैं भी ड्योढी की बद खिडकियों की घुटन जी लेती उस अधेरे मे भी प्रकाश पाने के लिए ता उम्र सपने सजोती रहती किसी न किसी दिन या तीज त्यौहार पर तो अपने देवता के दर्शन पाकर अपने को धन्य समझती लेकिन यह सौभाग्य मेरे भाग्य म न लिखा था मुझे तो बची हुई जिन्दगी के दिन पश्चात्ताप की आग मे जलते हुए काटने थे।

—मैं अन्नदाता से मिलना चाहती थी उनसे मिले बिना सुदर्शनगढ जाने की इच्छा न हो रही थी। मैंने मुसाहिब से पूछा क्या किले म चलना ही जरूरी है?

— 'अन्नदाता का हुक्म है!'

— मैं समझती हूँ कि अन्नदाता का हुक्म किले म भेजने के लिए नही महलो से बाहर निकालने के लिए होगा।'

—मुसाहिब चौंक पडा।

—मुसाहिब से मेरी तो कोइ दुश्मनी भी न थी लेकिन मेरे देवता ने उसके साथ ठीक सलूक न किया था शायद वह बदला लेने के लिए आमादा था। जब मेरे देवता गद्दीनशीं हुए उस वक्त रानीजी का खोवा' गाँव का बोहरगत करने वाला बोहरा खानदान का दीनाराम बोहरा मुसाहिब था। बोहरा सीधे ही मुसाहिब न बना था, सिलहपोशा म काम करते हुए दारोगा बना और फिर फीलखाने का

हाकिम और उसके बाद गजशाला का हाकिम बना। सूझ बूझ का धनी बोहरा दीनाराम अपनी कुशाग्रबुद्धि के द्वारा महाराजा प्रतापसिंहजी को खुश करने में कामयाब हो गया और महाराजा ने उसे मुसाहिब बना दिया था। जब मेरे देवता का राजतिलक हुआ तो यही बोहरा मुसाहिब था। रियासत की हालत ठीक न थी अकाल की काली छाया चारों ओर मंडरा रही थी। मेरे देवता के बारे में तो आपको बता ही चुकी हूँ कि व तन्त्रों में विश्वास रखने वाले हैं और छोटी छोटी बात पर गुस्सा होजाना आम रही है। अन्नदाता के कान में किसी ने भर दिया कि महाराजा प्रतापसिंह के खजाने का ज्ञान मुसाहिब को है फिर क्या था? मुसाहिब के साथ ज्यादती होने लगी और एक दिन नजरबन्दी का फरमान निकल गया।

—मुसाहिब बोहरा बन्द कर लिया गया यातनायें सहता रहा लेकिन खजाने का ठिकाना न बता सका। आखिर अन्नदाता को रहम आ ही गया और बोहरा को कद से बाहर तो कर दिया लेकिन मुसाहिब के ओहदे से भी हटा दिया गया। वह अपमान के क्षण जीता हुआ चुप हो गया और वक्त का इन्तजार करता रहा। रानी भटियाणी ने वक्त की नाजुक घड़ियों में सरदारों को बोहरा की याद दिलाई। सामन्तों ने जंग के मदान में महाराजा को रियासत की खस्ता हालत का ब्यौरा देते हुए मजबूर कर दिया कि मुसाहिब के ओहदे पर दीनाराम को बिठाया जावे। मिश्रजी हटा दिये गये और बोहरा मुसाहिब बन कर आया। स्वाभाविक था कि कि वह मेरे खिलाफ साजिश रचे और मुझे अन्नदाता की नजरों में गिरा दे। मैं यही पर अपनी हार मंजूर कर लेती हूँ।

—रानी भटियाणी और सामन्तों की सलाह से मुसाहिब ने जो जाल फैलाया था—उसमें फँस कर मैं महलों से बाहर आ गई। मैंने बोहरा से सवाल किया—'गर मैं मुदशनगढ जाने से इन्कार कर दूँ तो?

—वह चुप रहा। शायद वह मेरे दिल की बात समझ गया था उसने नरमी के साथ कहा— मैं भी नहीं चाहता हूँ कि आप किले में जाकर रहें लेकिन अन्नदाता का हुक्म जो है।'

— हुक्म को मानने से मैं इन्कार तो नही कर रही।

—मैं सुदर्शनगढ जाने के लिए तयार थी। मैंने सागड़ में बठने के लिए आगे कदम बढ़ाये कि मुसाहिब ने कहा—"महाराजा की इन्तजार कर लेना ठीक होगा। आप अभी न पधारें।'

—"जसा तुम चाहो!'

—मुसाहिब ने सगड को रिदा कर दिया। मैं उस रहस्य को मुस्कुराहट के साथ समझ गई। जब मैंने चन्द्रमहल की ओर लौटने के लिए कदम बढ़ाये तो मुसाहिब ने कहा— इधर नहीं।'

—'आखिर तुम चाहते क्या हो?'

— अब आप चन्द्रमहल म कदम न रख सकगी।'

—'क्या?

—'महाराजा का हुक्म मानना जरूरी है।''

—'तब यहीं खडी रहूँ?'

— आप ड्योढी मे पधारें।''

—मैं अपने आप मे अपमान के क्षण जीने लगी लेकिन वक्त मेरे साथ न था फिर भी मेरे मुँह से चीख निकल पडी—बोहराजी! तुम भी दुश्मनो के साथ साठ गाँठ कर बठे हो!

— बाईजी! अपनी हस्ती की ओर देखो!''

—उसके मुह से सम्बोधन सुनकर तो अवाक रह गई। मैंने बिजली की तरह गरजते हुए कहा—'जानते हो! किसके साथ बतिया रहे हो?'

— 'वक्त कभी एक सा नहीं रहता।—कहते हुए उसने ताली बजाई और पलक झपकते ही सिपाहियों का हुजूम आ खडा हुआ।

—म देखती रह गइ।

—जो कल तक मेरे सामने सिर झुका कर खड़े रहते थे वे ही सीना तान कर मुझे घूर रहे थे।

—बाईजी को इज्जत के साथ ले चलो।

मै अपन ही नौकरों से घिरी चन्द्रमहल से बाहर कर दी गई। ड्योढी के एक ओर एक कमरा—जिसे आने वाला युग रस-विलास कहेगा—उसमे नजर बन्द कर दी गई।

—जिस दिन रियासत के शहशाह जग से लौट कर आये सारे शहर मे खुशी का आलम था महल जगमगा रहे थे, आम आदमी खुशी के सागर मे डूबा हुआ था—म खुद भी। फक इतना ही था कि मैं आम आदमी की तरह उनके

सामने खुशी जाहिर न कर सकती थी। उस खुशी के मौके पर मुझे मेरे कमरे से बाहर कदम रखने की इजाजत न थी। कहने के लिए मैं वहाँ भी आजाद थी लेकिन एक कैदी से भी अधिक पराधीन थी। मुसाहिब की बड़ी मेहरबानी रही, मुझे कमरे से बाहर बगीचे में घूमने की इजाजत दी कोई भी आदमी मुझसे मुलाकात कर सकता था लेकिन मैं अपने देवता से न मिल सकती थी। मुझे रोने—चीखने चिल्लाने की छूट थी लेकिन मेरे आँसुओं से किसी को सरोकार न था। आश्चर्य था मुझे—मेरे देवता मेरे महाराजा महल में लौट आये लेकिन अपनी रसकपूर को याद भी न कर सके। मुझसे ऐसी क्या खता हुई? क्या गुनाह हुआ? किस अपराध के लिए मुझे सख्त सजा दी जा रही थी मैं कुछ भी न समझ पा रही थी। जिस आदमी ने खुश होकर रियासत सम्भालने तक का विश्वास सौंपा वही आदमी इस कदर नफरत करने लगा कि मिलने से भी कतराने लगा।

—मेरे सपने टूट चुके थे, एक ऐसी सुरंग में धकेल दी गई—जहाँ अँधेरे की घुटन के सिवा कुछ भी न था। मैंने अन्नदाता के स्वागत के लिए क्या नहीं किया? विचारा था कि मोतियों के थाल से अंजलि भर उनके कदमों में बरसा दूँगी वक्त की बात? मैंने अपनी आँखों से आँसू लुटाकर मेरे भगवान का स्वागत किया।

—मैंने ड्योढ़ी के नौकर-चाकरों की आपसी बात चीत से अंदाजा लगाया कि महाराजा का अभूतपूर्व सम्मान हुआ और उनके दर्शन के लिए अपार जनसमूह उमड़ पड़ा। उस भीड़ में सभी थे—सिर्फ मुझ अभागिन को छोड़ कर।

मैंने रतना को बुलवाया, वह डरी-डरी सी मुझ तक आ पाई और मुझे देखते ही फूट-फूट कर रोना आरम्भ कर दिया।

—'पगली! रोती क्यों है?"

—'रानी साहिबा।"

— रतना! अब मुझे रानी न कहो!'

— यह कैसे हो सकता है?' —उसने अस्पष्ट स्वर में कहा।

—'रतना! तुम सच कहती थी कि इन महलों का कोई विश्वास नहीं है।"

—'लेकिन आपका तो कोई गुनाह भी नहीं।'

— रतना! तुम नहीं समझ सकती। मैंने बहुत बड़ा गुनाह किया है। मैंने मुझे कालीन पर कदम टिकाने के लिए तवायफ का जन्म दिया था मैं

अपनी हस्ती को भुला बठी और रियासत की मलिका बन गई। जिन लागो की नजरो क सामने मुझे अपन जिस्म का प्रदशन करना था जिनक हाथ मुझे अपनी जवाना और अस्मत बेचनी थी, उन्ही को मैं नचान लगी यह क्या मरा गुनाह नही है रतना ! एक तवायफ अपनी औकात भुला बठी।

–"नही, रानीजी। इसम आपका क्या कुसूर है ?'

– छोड इन सभी बातों को। शायद तक्दीर म यही लिखा है तू तो यह बता कि मेरे देवता कसे हैं ?'

– क्या कहूँ रानी जी ?'

–'क्यो ? क्या हो गया उन्हें ?'

– अन्नदाता भी खुश तो नजर नही आते हैं शायद वे आपके बिछुड़ने से बहुत दु खी है।'

– फिर भी मिलने की इजाजत नहीं फरमाते ?'

–'उनकी मजबूरी है।"

–' मुझसे एसा क्या गुनाह हो गया ?

– रावराजा नही चाहते हैं कि महाराजा आपके साथ रह।'

– मैंने उनका क्या बिगाडा है ?"

– वक्त की बात है।

–' रतना ! मैंन कल्पना भी न की थी कि मेरे दवता मेर साथ इस कदर सलूक करेंगे। काश ! यह दिन देखने से पहिले इस जहाँ से विदा हो जाता।'

– ऐसा न कहिए रानीजी !

– रतना ! मुझसे अब अधिक बर्दाश्त नहीं हो सकता।'

– आपको रानी भटियाणी का कुचक्र तोडना होगा।

– रतना ! अब क्या हो सकता है ?

–'अन्नदाता के दिल मे जो शक पदा हो गया है उस धीरे धीरे दूर करना ही होगा।

— रसकपूर के लिए शक ! हाय सुना ! आज मैं यह क्या सुन रही हू ? इन शब्दो के सुनने से पहिले ही दम निकल जाता तो कितना अच्छा होता ! रतना ! इस अभागिन को न जान क्या क्या देखना होगा ?

—"रानी साहिबा! इस तरह हिम्मत न हारिये! आपमें वह शक्ति है जो इस कुचक्र को पल भर में तोड़ सकती है। काश! मैं आपकी सेवा में रह पाती!" - कहते हुए उसकी आँखों से आँसू ढुलक पड़े।

—मैं भी अपने दिल पर काबू न रख सकी और मेरी आँखों से गंगा जमुना बहने लगी। उस दौरान एक दूसरे से कुछ भी न कह सकी। रतना के आने से परतों पर जमा हुआ दर्द बह चला और कुछ समय के लिए मन हल्का हो गया। रतना अधिक समय तक नहीं ठहर सकती थी, वह चली गई और फिर मैं अकेली ही रह गई। वही सन्नाटा वही उदासी और वही घुटन भरे क्षण! जिन्हें तोड़ना मेरे वश की बात न थी और न जिनसे समझौता ही कर सकती थी।

—उसी दिन रात को बनसिंह मुझसे मिलने आया तो मैं उसे देखकर घबरा गई, मेरा तन कांपने लगा तथा मन चीख कर कहने लगा—'तुम क्यों आये हो?" वह चुपचाप पलकें झुकाये मेरे सामने खड़ा था। मैंने उससे सवाल किया—'तुम?'

— हाँ, रानी साहिबा!"

—'इतनी रात गये?"

— आपने जो हुक्म फरमाया।"

— मैंने ? मैंने तुम्हें कब बुलाया था? मैंने तो किसी से कुछ भी न कहा।'

—'आप क्या फरमा रही हैं? मुझे मुसाहिब साहब ने बुलाकर कहा है कि आपने मुझे अभी और इसी घड़ी बुलाया है।"

—'ओह! यह एक और नई साजिश!

—बनसिंह हक्का बक्का सा मेरे चेहरे की ओर देखने लगा।

— तुम भी नहीं समझ पाये उलझ गये मेरी ही तरह इन दुश्मनों के जाल में।'

—'रानीजी! मैं कुछ भी नहीं समझ पा रहा हूँ हैरान हूँ इन सभी घटनाओं पर।'

—'बनेसिंह! तुम यहाँ से भाग जाओ!"

—'कहाँ?'

— कहीं भी चले जाओ! इस रियासत की सरहदें उलाँघ कर चैन के साथ जीओ वर्ना ये दुश्मन तुम्हें जिन्दा नहीं छोड़ेंगे! मेरी मेहरबानी तुम्हारे लिए मौत

का फन्दा बन जायेगी। मेरा कहना मानो! कल सुबह से पहिले ही शहर छोड़ जाम्रो!"

– लेकिन आपका क्या होगा ??

–'मेरा फिक्र न करो! बनेसिंह! मैं मुलजिम हूं अन्नदाता जो सजा देंगे उसे हंसते हुए सहना ही मेरा फर्ज है।'

–'रानीजी! अन्नदाता सजा नहीं देना चाहते आपके दुश्मन आपको यहाँ से निकाल देना चाहते हैं आपका हुक्म हो तो आज रात ही मुसाहिब को — "उसने हाथ के इशारे से समझाया।

–'कत्ल! नहीं बनेसिंह! मैं अपने सुख के लिए किसी के प्राणों की गाहक न बनूंगी। अब मैं अपने हाथ खून से न रंगना चाहूँगी।

–'लेकिन यह इल्जाम!'

–"कुछ समझ में नहीं आता है, अन्नदाता से एक बार भेंट हो जाये तो मैं अपनी सफाई पेश कर सकती हूँ।

–"रानी साहिबा!"

– बनेसिंह! मैं तुम्हारे दर्द को समझ रही हूँ लेकिन तुम जो कुछ करना चाहते हो—उसमें कामयाब नहीं हो सकते हो!'

–'आप एक बार मौका तो दीजिए!'

नहीं बनेसिंह! रसकपूर अब कोई ऐसी गलती नहीं करेगी। तुम भावुक मत बनो! आज रात ही इस शहर से भाग आओ!"

– मैं कायर नहीं बन सकता।

– यह बहादुरी है? किसी को छिप कर कत्ल करना गौरव की बात समझते हो!'

–' राजनीति में सब कुछ क्षम्य है!

– नहीं, बनेसिंह! तुम भूल कर रहे हो!

—रानी साहिबा! आप यह चाहती हैं कि हमारे रहते हुए आप कैदी बन कर जिन्दगी जीयें! हमारी आँखों के सामने आपकी आबरू से खेला जाये। जो कल तक इस रियासत पर राज करती रही हैं, उन्हें ये दुश्मन फाँसी के तख्त पर

चन्द । आपको मालूम नहीं है ! दुश्मन की चाल गहरी है ये आपको हमेशा के लिए मिटा देना चाहते हैं ।

—वनसिंह ! मुझे जिन पर नाज था, ऐतबार था गर्व था जब वे ही अपने कदमों की धूल को नापाक समझ बठे हैं ना अब गरो से क्या शिकायत । अब मुझमें जोश नहीं रहा है मेरी उमगो की लौ बुझ चुकी है जिन्दगी म कोई तमन्ना बाकी नही रही है । अच्छा यही है कि अन्नदाता के हुक्म से उनकी नजरो के सामन उनका नाम लेते हुए मौत को गले से लगालूँ । तुम समझते क्यो नहीं हो ? औरत का एक ही धर्म है कि वह अपने खाविन्द के हर हुक्म का पालन करे । मैं मलका नही हूँ और न अधीश्वरी, अब सिर्फ किसी की औरत हूँ । अन्नदाता मुझे अपनी पत्नी नहीं स्वीकारेंगे लेकिन मैं कैसे भुला दूँ, मैंने उनके नाम की सिन्दूर अपनी मांग म भरी है । वनसिंह ! तुम लौट जाओ ! मैं कुछ भी सुनना पसन्द नहीं करती हूँ । भूल जाओ कि इस रियासत पर किसी अधीश्वरी ने राज किया था वना मेरी तरह सींकचों म बन्द होकर ता उम्र सड़ते रहोगे और इन दीवारो के दिल से कभी रहम की सदा तक न गुजर सकेगी । जाते हुए यह भी सुनलो कि इस देहरी पर कभी कदम न रखना । न मैंने तुम्हे आज ही बुलाया था और न कभी बुलाने की हिम्मत ही करूँगी । मेरे दुश्मन मुझे बदनाम करना चाहते हैं तुम इस देहरी पर कभी कदम रखने की हिम्मत न करना !

—वनसिंह बिना कुछ जवाब दिये लौट गया, उसके जाने के साथ ही मेरे कमरे के बाहर आहट हुई जसे कोई हमारी बातो को छिप कर सुन रहा हो ! लेकिन मैंने उठ कर बाहर की ओर भी न देखा । सच तो यह है कि टूट चुकी थी मुझमे हिम्मत का नाम न रह सका था । मुझे एक ही गम था जिस देवता की देहरी पर मैंने पाक-फूलो का गुलिस्तां चढाया, वह देवता ही अपने कदमो से ठोकर मार कर उसे नापाक कहने लगा । अब गुलिस्तां की गन्ध को लेकर कहाँ जाऊँ ? जब हवायें ही पास से गुजरती हुई हँसी उड़ाने लगीं और दीवारें ही मजाक उड़ा रही हैं तो किससे कहूँ कि म पाक हूँ । खुद को पाक जाहिर करने म ये हवायें कभी नही मजूर कर सकती कि माहौल झूँठा है ।

—अँधेरे से कभी जी घबराता थ नाम से चिढ़ थी लेकिन अब अँधेरे क गले से लग भर रोना बहुत अच्छा लगता था कई दफा खयाल आता कि रोने से क्या मिलने वाला है रोने की बजाय आग में जलूँ ! लेकिन इस आग को देखने वाला भी तो कोई न रहा था । अब याद आने लगा कि मेरी माँ क्यो दुःखी थी ?

क्यो मुझ महला की दहरी पर क़दम रखने से रोकनी थी ? उसके मन की आशंका सच निकली। काश ! वह जिंदा होती तो शायद मेरे गले से लिपट कर आँसूओ से नहला देती !

—म जिस कोटडी मे नजर बन्द थी—जिसे रस-विलास पुकारा जाने लगा महज मुझे चिढाने का मकसद था। मेरे पास से सभी बान्दियो दासियो, बाईयो और नेवगणो को हटा लिया गया था। यह बात नहीं थी कि मुसाहिब साहेब ने मेरे पास स सभी नौकर-चाकर हटा लिये हों ! अब मेरे चारो ओर गतराडों की भीड थी वे ही नौकर थे तालियाँ बजाकर, अगूठा दिखाकर बिना बात ही आँखें मटका कर भद्दी हँसी हँसते हुए मुझे घेरे रहते। मन मुसाहिब साहेब से कहला भी दिया कि मुझे नौकरो की खास जरूरत नही है, इस भीड को हटा दिया जाये। हाय री बदकिस्मत ! मेरी यह छोटी सी इल्तजा भी न सुनी गई और उस शोर शराबे के बीच रोना भी मुश्किल हो गया, यानी कि मेरे दुश्मन इतने सजग थे कि वे यह भी नहीं चाहते थे कि मेरे रोने की आवाज भी कोटडी से बाहर पहुँच पाये।

—जो लोग मेरे महल म कदम रखना अपमान समझते रहे, अपनी रजपूती शान के खिलाफ समझते रहे व लोग ही चूनरी का साफा बाँधे सफेद अचकनो पर गुलाब का फूल टाँके हुए इत्र की भीनी महक अपनी मूँछो पर फरते हुए उस कोठरी मे पधारने लग। उन्हे देखकर मेरा मन चीख पडता जी मे आता कि उन्हें अपने नाखूनो से नौंच डालूँ, ये वे ही दुश्मन थ जिन्होने मुझ मेरे देवता से दूर करने म कोई कसर न रखी। खखारे करते हुए कदम रखत और बेहूदी हरकतें करत हुए बतियाना चाहत। आपसे सच कहती हूँ कि मेरा मन उन सभी से बात भी न करना चाहता था लेकिन मेरी मजबूरी ! मुझे उनकी ओर नजर उठाकर देखना होता।

—आदमी या औरत सिंहासन की ताकत खो देते हैं तो—वह गली के भिखारी की तरह हो जाते हैं। आदमी अधिकार-विहीन होने पर नजर स गिर जाता है लेकिन उस वक्त भी उसकी औरत उसे उसी इज्जत के साथ देखता है, औरत की इज्जत तो आदमी के हाथ है। जब मेरे देवता ने ही मुझे ठुकरा दिया तो शहर का कौन आदमी ऐसा होगा जिसकी नजर म मेरी इज्जत हो ! वे मुझे सिंहासन से उतार देत हक छीन लेते महल से बाहर कर देते, लेकिन अपनी मेहरबानी तो मुझसे न छीनत।

—काश ! मैं उनसे प्रेम करन के लिए महलों तक न आती अपने कोठे पर कदम थिरकाती हुई उन्ह बाँध रखती तो आज यह दिन न देखना होता। आप

सभी के सामने दर्द का इजहार न करना होगा।

—रावराजा चाँदसिंह—जिन्हें रसकपूर के नाम से भी चिढ़ थी—वे महल में न पधार सके, लेकिन बंदीगृह में आने की हिम्मत की। उन्होंने अपने व्रत को निभाया, कदम रखते ही उनके मुँह से निकला—बाईजी! मिजाज तो ठीक हैं?

—"आपकी मेहरबानी है।"

—'मुझे बहुत दुख है कि आज आपको ये दिन देखने पड़ रहे हैं।"

—'लेकिन मुझे बहुत खुशी है।'

—"रावराजा मेरे मुँह की ओर देखने लगे।'

'इसमें चौंकने की क्या बात है? आपको विजय मिली आप यही तो चाहते थे कि मैंने आपके महाराजा को अपने दामन से बाँध रखा है अच्छा हुआ आप अपने अन्नदाता को मेरे गंदे दामन से निकाल ले गये लेकिन आपको दुख नहीं होना चाहिए। मैंने दामन में नहीं, उन्हें दिल में बसा रखा है आप मेरा कत्ल करके भी मुझे उनसे जुदा नहीं कर सकते हैं।

—बाईजी! हम राजा-महाराजा हैं, किसी एक रानी के आँचल से ही बँध कर नहीं रह सकते फिर आप जैसी ।

—हाँ, हाँ, कहिये, आप रुक क्यों गये? मैंने सब्र करना सीख लिया है आप तो जानते ही हैं कि अब मैं असहाय हो चुकी हूँ, लेकिन अभी भी आँसू मेरे साथ हैं शायद आप जुदा तो नहीं कर सकते।

—वक्त कभी एक सा नहीं रहता है। राजा महाराजा वैभव एवं पौरुष के धनी होते हैं हमारा जन्म ही भोग के लिए है। भ्रमर की तरह वाटिका की कलियों पर बैठ कर गंध जीते हुए मकरन्द पाना हमारी प्रकृति है हमारे जीवन में प्रेम के लिए कोई स्थान नहीं है।

—कलि भ्रम जीती है तो भ्रमर को क्या पीड़ा? मैं मेरे देवता को प्रेम करती हूँ अथवा नहीं, इससे आपको क्या?

—बाईजी! अपना भ्रम तोड़ लो! महाराजा के मन में आपके प्रति घृणा भर गई है। आज कल वे नगर की प्रसिद्ध नर्तकी केसरबाई के साथ रंगरेलियाँ कर रहे हैं।

—यह तो सौभाग्य की बात है, मेरे देवता आज में विरक्त नहीं हुए पीड़ा में घुटन न जोकर अपने प्राणों को मनाने का यत्न कर रहे हैं। ठाकुर साहेब!

आपकी यहाँ फिर पराजय हो गई, आपके अन्नदाता रसकपूर बाद के कदमों म नहीं ना केमरवाई के कदमो मे झूम रहे हैं। रानी भटियाणीजी के दिल पर नो तीर चल गये होगे और ठाकुरो की मूछें नीची हो चली होंगी" --कहन हुए मुझे हँसी आ गई।

– आप हँस रही हैं ?'

— ठाकुर साहब ! आप इस खयाल से पधारे हैं कि यह सब कुछ सुना कर मेरे कलेजे को छलनी कर देंगे। मैं इस घटना से दुखी हो जाऊँगी और आपके कदम थाम कर गिड़गिड़ाऊँगी। आपका विचारना भी सच है –कोइ भी औरत अपने पति को दूसरी औरत के साथ नही देख सकती है, केवल अपना हक मानती है लकिन आपमे से किसी एक ने भी रसकपूर को नहीं पहचाना मैं रानी रही हूँ और आप जानत हैं कि रानी को अपने कलेजे पर पत्थर रख कर जीना होता है फिर मैंने तो अपने देवता से प्रेम किया है पुजारिन अच्छी तरह जानती है कि देवता किसी के साथ बँध कर नही रह सकता है, वह तो इतना ही ध्यान रखती है कि उसकी पूजा मे कोई कसर न रह जाय कोइ गलती न हो जाये।

– आप मेरा कहना मानें तो एक रात महफिल का कायक्रम रखिये। मैं अन्नदाता को यहाँ तक लाने का यत्न करूँगा।'

— शुक्रिया ! आप इतनी तकलीफ क्यों उठा रहे हैं ? मेरे देवता चाहेंगे तो म यहाँ ही नहीं सड़क या चौराहे पर नगे कदम नाचूँगी लेकिन आपके कहने से नहीं।'

– हम चाहें तो ?'

–'मेरे देवता की मेहरबानी पर ही।'

– हमारे कहने से नहीं।'

– इस जनम म तो नहीं।

— बाईजी ! बीते दिन लौटकर नहीं आते हैं आप शायद उन्हीं सपनों में जी रही हैं—जो बहुत पीछे रह गये हैं।'

—'ठाकुर साहेब ! मैंने हकीकत को जीया है जिन सपनों की कल्पना की है वे सच भी निकले हैं आप अपनी फिक्र कीजिए गैरों की फिक्र करने का शौक कब से लग गया ? मुझे तो आश्चर्य है कि आप इस कोठे तक पधारने की हिम्मत कैसे कर बैठे कहीं आपकी इस सफेद अचकन पर दाग तो न लग गया है आपको

यहाँ आते हुए किसी नजर ने तो नहीं देख लिया है ? इस वक्त मुझे मेरा गम नहीं सता रहा है सिर्फ आपकी फिक्र है कि ठाकुरों पर कोई आँच न आ जाये ! आपकी बहादुरी पर कायरता का दाग लग जाये !"

—रावराजा कुछ भी जवाब न दे सके तिलमिला कर हाथ मलते रहे उठना चाहते थे लेकिन उठने की हिम्मत न कर पा रहे थे शायद उनके कदम बोझिल हो चले थे मैं उनसे कुछ कहना चाहती थी कि अचानक शोर सुनाई देने लगा। मैंने जानना चाहा तो एक गवराई ने अपने घाघरे को घुटनों तक ऊंचा करते हुए नृत्य की मुद्रा में सारे अवयवों को हिला कर कहा —'ह ! आपको सब मालूम है बाईजी ! बना मत, खून हो गया खून !"

—मैं घबरा गई। तभी रावराजा ने सवाल किया—'किसका ?"

— रानीजी के चहेते का।"

—'किसका ? कौन किसका चहेता ?"

—'हं ! हं ! आपको सब कुछ मालूम है ठाकुर साब ! आज काजल लगा कर आये हो ! बनते जारहे हो ! बनेसिंह का, और किसका ?"

—मैं सुन कर दंग रह गई। मुझे विश्वास नहीं हो रहा था।

—रावराजा ने मेरी ओर देखते हुए कहा—"इन औरतों के भी अजीब करिश्मे हैं कब किसे मौत के घाट उतरवा दें कुछ नहीं कहा जा सकता औरत का प्यार कितना फरेबी ? जीयें किसी के साथ और प्यार करें किसी गैर को ही। —कहते हुए कोठे से बाहर निकल गये।

—मैं अपमानित होकर रह गई मुझे दुख था कि एक भला आदमी मेरे कारण बदनाम हुआ और दुश्मनों ने उसका कत्ल कर दिया। मैं अपनी विवशता पर जहर की घूंट पीकर रह गई। वह साँझ और अधिक डरावनी थी, उस रात बची हुई आशा भी खत्म हो गई और राजमहल से रसकपूर का हमेशा के लिए रिश्ता टूट गया।

———

शक्ति से बाहर रहा है। मैं अपने देवता के प्रति क्षोभ भी पैदा करती तो उनकी
मीठी-लुभानी बातों को याद कर आँसू भी बहाने लगती। उस घुटन में वे मुझे
बहुत याद आने लगे याद की मीठी सिहरन रोम रोम में चुभन पैदा करने लगी।
लेकिन वे मुझसे बहुत दूर थे—सात समुंदर पार से भी अधिक। एक ही चाहर
दीवार में रहते हुए भी उनके दीदार मेरे लिए मुश्किल हो चले। मैं महाराजा की
प्रेयसी रही, नर्तकी रही चाहे रखैल रही इस नाते मुझे उनसे नहीं मिलने दिया
जाता न सही, लेकिन अन्नदाता की रिया हूँ, प्रजा के नाते तो मुझे मिलने का हक
है मैं भी औरों की तरह मेरे भगवान के सामने फरियाद करने का हक रखती हूँ,
लेकिन सब कुछ छीन लिया गया।

—उस रात हवा भी गुम थी—था एक गहरा सन्नाटा और अकेलेपन में
मन का क्रन्दन। मैं चीख चीख कर मेरे देवता को पुकारना चाहती थी किन्तु उस
अँधेरी रात में कोटडी के दरवाजे पर दस्तकें उभर मुझे चौंका गई। मैंने जानना
चाहा किन्तु अपरिचित आहट कुछ भी न समझा सकी मैंने पूछा—'कौन है?'

—"बाईजी! किवाड खोलिये।'

—मैं आवाज पहचान चुकी थी, मैंने कहा—'इस अँधेरी रात में अब
और क्या फरमान लाये हैं।'

—मुलाजिम हूँ क्या दिन और क्या रात?"

—मैंने किवाड खोले—और मुसाहिब के मुँह की ओर देखने लगी।

—'मैंने आपसे एक दिन कहा था—आप सुदर्शनगढ़ में पधारें। उस दिन
आपने आज्ञा टाली थी, लेकिन आज आपको यह तकलीफ करनी होगी।'

—अन्नदाता का हुक्म है?'

—राज की आज्ञा के बिना यहाँ पत्ता भी नहीं हिल सकता है।'

—"मुझे उनसे मिलने का मौका मिल सकता है?'

—बाईजी! मैं क्या कह सकता हूँ?"

—अभी चलना होगा?'

—'मैं मजबूर हूँ।"

—'आप दिल छोटा क्यों कर रहे हैं? यह तो खुशी की बात है मैंने ही
एक दिन अन्नदाता से अर्ज किया था, मुझे सुदर्शनगढ़ दे दीजिये। उस दिन राज
ही नहीं भर सके। आज उन्हें मेरा खयाल आ गया, चलो अच्छा हुआ।'

पर पफाले जीती हुई भी पाक प्रेम के लिए कुर्बान होती है—इस राज को आप नहीं समझ सकते है।"

—'बाईजी! आपके इरादे तो बहुत ऊंचे थे यदि मैं मुसाहिब बनकर न आता तो यह रियासत कछवाहों के हाथ से निकल जाती, महाराजा जगतसिंह कभी होते और तुम इस रियासत पर राज करती हुई रंगरेलियां मनाती।

—मैं उसके ओछेपन से दुःखी हो चली।

— बाईजी! यह क्यों भूल रही हो कि तुम्हारे रूप-जाल में फँस कर महाराजा शासन की बात भी भूल गये उनके बाजू कमजोर हो चले रियासत मे हाहाकार मच गया कि न लोगों की जान चली गई निरपराध फाँसी के तख्ते पर झूल गये और तुम्हारी खुशामद करने वाले शहर को लूटने लगे पेट नहीं भरा तो खजाने पर हाथ साफ करने लगे शायद तुम्हें यह भी मालूम न होगा कि रियासत कर्जे में डूब रही है सिपाहियों तक को तनखा मिलना मुश्किल है।'

—"और कुछ कहना बाकी है?"

—मुसाहिब अपनी विजय पर अट्टहास करता हुआ मुड़ गया। सगड़ घुड़सवारों से घिरी सड़क पर बढ़ चली। सड़क के आखिरी छोर पर नदी सा पाट—शायद बरसात में बहुत तेज पानी बहता रहा है। मैदान को पार करने के बाद अरावली पर्वत—जो शहर की प्राचीर के रूप में खड़ा है। इसी पर्वत शिखर पर एक भव्य दुर्ग—सुल्तानगढ़! जिस तक पहुँचने के लिए पत्थर को काटकर तराशकर बनाई गई है घुमावदार घाटी—जिसके दोनों ओर पथरीली दीवार! घाटी पार करने के बाद जहाँ चढ़ाई खत्म होती है—वहाँ दुर्ग का विशालकाय दरवाजा! दरवाजे के सामने से जुड़ता हुआ एक और मार्ग—जो जयगढ़ तक पहुँचता है। राजा महाराजा अपनी रक्षा अथवा विलास के लिए या रहस्यमय जीवन जीने के लिए इस मार्गों का निर्माण कराने के आदी रहे हैं। यद्यपि दुर्ग के भीतर महाराजा अथवा उनके परिजन निवास नहीं करते हैं लेकिन रियासत के कायदे के अनुसार दरवाजे बन्द रहने हैं समय पर खुलना और बन्द होना जरूरी है। घुड़सवार ने आगे बढ़कर दरवाजे के कुंडे खटखटाये तो एक भारी सी आवाज चारों ओर फैल गई आज किसकी मौत आई है?"

—मैं अच्छी तरह परिचित थी कि सुल्तानगढ़ राजमहल के बागियों या कैदियों के लिए मौत का महल रहा है। शहर से दूर ऊँचाई पर ले जाकर इसान

को कत्ल करने या फाँसी पर चढाने की परम्परा रही है ताकि कोई उसकी चीख भी न सुन सके। मुझे वह दिन भी याद आ गया जब मैंने भी ताज पहिन कर मुसाहिब को हाथियों के पैरों मे कुचलने का हुक्म दिया था—और मुसाहिब ने हँसते हुए रियासत की राजरानी को बाइजी कहकर मिट्टी की बात कही थी। मैंने उस बेगुनाह इन्सान के खून से अपने ताज को रंगा था वही ताज मुझे किले तक ले आया था। दरवाजा खुलने से पहिले ही मुसाहिब का चेहरा याद आ गया मानो वह चीख चीख कर कह रहा हो- बाईजी! यह वही मिट्टी है--जिसमे मेरा खून मिला हुआ है अब आपकी बारी है। लेकिन मुझे उस घडी भी विश्वास था कि मेरे देवता मेरे साथ ऐसा सलूक नही करेंगे।

— द्वारपाल ने दरवाजा खोलकर हाथ से लालटेन उठाये हमारे जुलूस की ओर देखा और फिर बडबडाने लगा— आज तो कोई बडा ही शिकार फँसा है। वह लालटेन के उजाले मे सिपाहियों के चेहरे गौर से देखने लगा—तभी एक घुडसवार ने आगे बढकर कहा — चौकीदार! यह फरमान किलेदार तक पहुँचा दो!

—चौकीदार ने फरमान हाथ में लेते हुए धीमे से पूछा— कौन है?'

— औरत है।'

—औरत और यहाँ? यहाँ औरतो का क्या काम है? ड्योढ़ी मे जगह की कमी पड गई क्या?'

— बाईजी है।'

— बाइजी और किले मे?

— रसकपूर बाई!'

—वह काँप उठा, उसके हाथ से फरमान का कागज गिर गया और उसने कम्पित स्वर मे कहा-- रानीजी! ओह! मुझे माफ करना अभी आता हूँ कह कर वह भीतर की ओर गया।

—उसे क्या मालूम था कि जिसके नाम से दुनियाँ डरती है वह नाम अब हवा मे जिन्दा नही रहा है। रात का अँधेरा सब कुछ पी गया है अब कोई रानी नही सिर्फ भिखारिन है अपने देवता के दर्शन के लिए दर-दर भीख माग रही है। पराये के मुह से रानी शब्द सुनकर उसके हृदय पर गहरा आघात लगा। अदना से अदना आदमी भी उसकी हँसी उडा रहा है। वह वक्त—केवल याद बन कर रह गया—जब छत्तीस कारखानो के दारोगा या ओहदे पर आसीन हाकिम

झुक कर सलाम किया करते थे अपने मतलब के लिए रानी साहिबा की खिदमत में बेश कीमती नजराने नजर किया करते और रसकपूर उन नजरानों की ओर नजर उठाकर भी न देखती अब तो वह वक्त आ गया था कि उस रानी को प्यास लगने पर भी दो बूँद पानी भी नसीब होना मुश्किल हो चला था। रानी पद ने ही तो मुझे आसमां से गिराकर जमीं पर भी न रहने दिया इस शब्द से चिढ़ हो चली। मुसाहिब, मुतलक नायब सदर व दारोगा आदि सभी इसी नाम से सिर झुकाते रहे लेकिन अब तो हरकारे भी शक्ल से नफरत करने लग थे। द्वारपाल के साथ आँखें मलता हुआ किलेदार बाहर आया और रिसालेदार से एकान्त में कुछ देर बतिया कर दरवाजा खोलने का हुक्म दिया गया। मैंने सुल्तानगढ़ में प्रवेश पा लिया था। एक दिन इसी तरह अँधेरी रात में आमेर के महलों के बाहर मेरी पालकी रुकी थी और उस रात सुल्तानगढ़ में सग्गड़। बस इतना ही रहा उस दिन मेरा स्वागत किया था—ड्योढ़ी की धाईयों दासियों और बांदियों ने और उस रात सुनसान माहौल में इन फैलाए हुए अँधेरे के साथ दर्द ने।

'किलेदार ने आगे बढ़कर कहा – 'उतरिये!'

—मैं उसके आदेश का पालन करती हुई सग्गड़ से उतर पड़ी और उसके हुक्म का इंतजार करने लगी। घुड़सवार लौटने लगे, सग्गड़ के बैल बिना आराम किये उसी क्षण लौट पड़े, मुझसे चुप न रहा गया। मैंने रिसालदार को बुलाकर कहा— एक काम करोगे?

—वह मेरे मुँह की ओर देखने लगा।

— अन्नदाता तक मेरी यह अर्ज भिजवा देना रसकपूर ने एक दिन आपसे यह गढ़ माँगा था, उस दिन आप न दे सके, लेकिन आज आपने जो इनायत की है, इसके लिए ता-जिन्दगी आपकी शुक्रगुजार रहूँगी। मैं इन ऊँचाइयों पर हवा से बतियाती हुई राज का हमेशा इंतजार करूँगी'— कहते हुए मेरा गला भर आया आगे कुछ न कह सकी।

—रिसालदार अपने घुड़सवारों को साथ लेकर चल पड़ा और मेरी आँखों से ओझल हो चला। किलेदार ने हुक्म दिया—"आप आगे बढ़िये!"

—किलेदार पहरेदारों के साथ आगे बढ़ चला। उसके हाथ में चाबियों का भारी गुच्छा था—जिसे वह बार बार बजाकर यह दिखाना चाहता था कि इस किले में केवल उसका राज है। मैं उस किलेदार को भली भाँति जानती हूँ, बार-त्यौहार पर हमेशा हाजिर होना था अब तो मैं उसकी हाजिरी में थी। किले के

भीतर—विशाल मैदान चारों ओर मजबूत परकोटा परकोटे पर सुन्दर कंगूरे। जिस मीर-इमारत ने इस इमारत को बनाया होगा—वह बहुत ही बुद्धिमान और दूर की बात देखने वाला शख्स रहा होगा। परकोटे के भीतर एक पूरा गाव बसने का इंतजाम। यहाँ तक कि इस पर्वत पर कुवे का इन्तजाम भी पश्चिम और उत्तर की ओर देखती हुई विशालकाय तोपें बारूद से भरी हुक्म के इन्तजार मे निशाना लगाये खडी हैं। दक्षिण-पूर्व के कोने की ओर देखता हुआ महल—शहर का वासिन्दा दूर से ही देखकर ललचाने लगे। महल के नीचे विशाल तहखाने—जिनमे रोशनदान केवल प्रकाश के लिए या श्वास लेने के लिए। किलेदार ने तहखाने का भारी किवाड खोलकर मुझे भीतर जाने का इशारा किया।

—'मुझे यहाँ रहना होगा?'

— नही तो क्या महलो मे?

— मैं यहां नहीं रह सकती।

—'हुक्म है।'

— किसका?'

—"इस किले मे अभी तो किलेदार का।'

— तुम कौन होते हो?"

— बाईजी! भूल जाओ महलो की जिंदगी, अब तो यही अंधेरा तुम्हारे भाग्य मे लिखा है।

— नही नही मैं यहा नही रह सकती।'

—'किलेदार ने पहरेदारों की ओर इशारा किया वे आगे बढ़ने लगे मुझे धक्का मार कर उस अंधेरे मे धकेलने लगे। मैं चीख पड़ी—कमीनो! शर्म नहीं आती, औरत के हाथ लगा रहे हो!'

—बाईजी! आप कहीं हैं सिर्फ कैदी। कैदी के साथ इसी कदर सलूक होता है—किलेदार ने रुआब के साथ कहा।

— मैं कैदी हूं?

— अभी भी अपने आपको महारानी समझ रही हो?—कहता हुआ वह हँसने लगा।

—उसका अट्टहास भयंकर गर्जना की तरह दहाड़ने लगा, मेरे मन की परतों पर दरारें उभर आईं। सारे शहर ने उस रौद्र गर्जना को सुना होगा, लेकिन मेरे देवता के कानों तक वह स्वर नहीं पहुँच पाया होगा वर्ना वे इतने पत्थर दिल तो नहीं हैं कि अपनी रस को इस कदर ‥ ‥। छोड़िये उनके दिल की बात। मुझे जबरन उस अंधेरे में धकेल दिया गया और मैं विवशता के साथ उस कोठरी में बन्द हो गई, आखिर कर भी क्या सकती थी? एक बन्दी जो थी।

—मैं बन्दी कब न थी? जब महल के दरवाजे के भीतर कदम रखा—उसी दिन से तो सजा शुरू हो चुकी थी दीवारों के भीतर ही तो रह रही थी—फर्क दर्जे का रहा पहले विशेष दर्जा मिला हुआ था और अब गुनहगारों की तरह कठोर से कठोर सजा भुगतनी थी। तब अन्नदाता मेरे साथ थे उमंगें थीं और जिन्दगी जीने का एक विशेष लुत्फ अब वे साथ नहीं तो क्या? उनकी यादें मेरे साथ थीं, दर्द था और घुटन भरी श्वासें! लेकिन फिर भी मरने की इच्छा न थी। एक बार मेरे हुजूर के कदमों में गिर कर यह पूछना चाहती हूँ कि इस पातुर का क्या गुनाह है? वह कौन सी खता हो गई—जिसकी वजह से आप मुझसे रूठ गये और मांगने भान से भी कतराने लगे। जहाँ तक मुझे याद है कि इस जन्म में ऐसी कोई जफा न हुई होगी कि मेरे राज मुझसे नफरत करने लगे। गर मुझसे जाने अनजाने में कोई गलती हो गई या मेरे लिए दिल में शक ने गुंजाइश पाली हो तो कम से कम आगाह तो करते! मेरे हमराज मुझे एक बार तो मौका देते—ताकि मैं संभल सकती। मेरा जन्म ही जुल्म सहने के लिए हुआ है इस बात से मैं कभी इन्कार नहीं करूँगी लेकिन मेरे सरताज! आपके कदमों की धूल यह वेश्या पातुर जुल्म बर्दाश्त करना भी अपना फर्ज समझती लेकिन आप अपने मुँह से कुछ कहते तो सही।

—कालकोठरी के अंधेरे में घास बिछी हुई थी —उस पर मेरे कदम तीखी सी चुभन जीने लगे। मेरे राज यह भी भूल गये कि जो कदम संगमरमरी आंगन पर रेशमी गलीचों पर भी सुर्ख हो उठते थे उन्हें कांटों की चुभन क्यों दे रहा हूँ। कुछ समय के लिए यह स्वीकार लूँ कि महाराजा मुझसे नहीं, मेरी देह से लगाव रखते रहे हैं —तब भी उन्हें ख्याल नहीं आया कि ‥ ‥ ‥ ‥
खैर, छोड़िये! यह देह तो नष्ट होनी ही है इसका क्या गुमान?

—वह रात बदकिस्मत थी—सिर्फ मेरे लिए। हवाएँ गुम और आंधियाँ चुप थीं। मैं आसमान का स्पर्श करते हुए महल के तहखाने में अपनी घुटन लिए एक कोने में खड़ी पथराये जा रही थी। पर बेजान हो चले तो लड़खड़ाकर घास

पर गिर गई। मुझे यह भी ध्यान न था कि किमा कोने म पानी का इन्तजाम भी है या नहीं ? कदरतान म सुविधाग्रो का क्या वास्ता ? जहाँ इन्सान को जिन्दा रखने का इरादा ही नहीं—वहाँ हवा ग्रौर पानी का किसे खयाल ? ग्र धकार में चिडियाग्रो की तरह कई जानवर मरे इद गिद उड रहे थे—लेकिन मैं पहचान नहीं पा रही थी। भयानक ग्रावाज सुनकर मैंने यह ग्रन्दाज लगा लिया था कि इस कालकोठरी म चमचडो की लम्बी जमात है। ग्रापको ग्रचरज तो नहीं होना चाहिये—लेकिन मेरी कमजोरी रही है कि चमचड क नाम से ही मेरे रोंगटे खडे हो जाते हैं—लेकिन ग्रब नहीं। उस रात चमचडो के शोरगुल म मैंने ग्रपना डर खो दिया। खुदा ने डरावनी शक्ल भद्दा रग ग्रौर भटकना जिनकी जिन्दगी म लिख दिया हो—उनसे सभी डरते है व भी डरती हैं तभी तो दिन भर किसी को ग्रपनी शक्ल तक नही दिखाती हैं ग्रौर रात भर चन नही लेतीं। इनकी जिन्दगी भी हमारी ही तरह है। तवायफ के कोठे पर दिन को ग्र धेरा ग्रौर रात म उजाला दिन भर सन्नाटा ग्रौर रात म कह कहे लगते ही रहते हैं। हम भी दिन म किसी को शक्ल दिखाना पसन्द नहीं करतीं छिप कर रहती हैं ग्रौर रात म चाँदनी की तरह बिखरना हमारी ग्रादत रही है।

—कोठरी के भीतर चमचेडें ग्रौर मच्छरो का साया ग्रौर बाहर गीदडो क रोने की डरावनी ग्रावाज —जिसे सुनकर मदजात के मुँह म चीख निकल जाये। मैं समझ नहीं पा रही हूँ कि मुझम ऐसी ताकत कहाँ स ग्रा गई थी कि उस वातावरण का जीने की ग्रादी बन गई—जसे मेरे लिए कुछ भी नया न हो। वह रात ! जिसकी कभी कल्पना भी न की थी—एक लम्बी रात थी मेरी जिन्दगी की सरहद थी। महलो का रानी किसी क दिल की मलका ग्रब सिफ दरिन्दा बन कर रह गई।

—उस रात मैं उस भयानकता या ग्रकेलेपन की घुटन से गमगीन न थी गम तो कुछ ग्रौर ही था दद भी था—जिसका इजहार करने स फायदा भी क्या ?

—कल तक नदी की धारा की तरह उनके साथ बह रही थी मुझमे कल कल की मधुर ध्वनि ग्रौर कदमो म बिजली की तरह गति थी। मेरे राज के ग्रल्फाज याद ग्रा रहे थे— रस ! ग्राज हमने तुम्हारे कदमो म बिजली के फूल मुस्कुराते देखे।

—मेरे राज की बातें झूठी थी। नही नही ऐसा नही हो सकता वे झूँठ नही हो सकते हैं मैं उनके साथ वर्षों रही हू, उन्होंने कभी झूँठ का सहारा नही

किया । फिर विचारती हूँ कि वे फूल मुरझा गये हैं उनकी चमक, उनकी हँसी
जननफरोश चुपचाप चुरा ले गया है इसमें अन्नदाता का क्या अपराध ? मैं भी तो
दरिया न रह सकी किनारा बन कर खड़ी रह गई अब तो चुपचाप दरिया का
बहना देखना चाहती हूँ लेकिन दरिया तो नाम रह गया है—सिर्फ रेत ही रेत
है—और उस रेत पर भी अंधेरे की चादर गिरी हुई है वर्ना सूरज की रोशनी
छेड़छाड़ करती हुई वहम पर वहम पैदा करती और मैं प्यासी हिरणी की तरह
आकाश को नापती हुई इस जलते रेतीले समुन्दर पर भटकती रहती । अब एक
ही विश्वास है कि इस दरिया का पानी सूख चुका है यही विचार कर प्यास मर
गई है फिर भी शिकायत है ।

—मेरे अन्नदाता मुझे कभी अपने दिल से अलग नहीं करना चाहते थे
पल भर भी मुझसे दूर रहना उन्हें पसन्द न था रसकपूर की मुस्कुराहट उनके लिए
जिन्दगी और उदासी मौत का पैगाम बन जाती थी । मेरी जिद के खातिर तो वे
हर घड़ी कुर्बानी देने में गर्व का अनुभव करते अचानक उनके दिल में नफरत के
काँटों का पैदा होना एक अचम्भे की बात है । काश ! वे खुद चाहते तो मुझे
कोई दुःख न होता अपना अहोभाग्य समझती अपने फर्ज पर गर्व का अनुभव करती
लेकिन मेरे राज उन आस्तीन के सांपों के जाल में फँस गये—जो मुझे इस तरह
चाहते रहे हैं । जिन्होंने मेरी हर मुस्कुराहट पर अपने आपको समर्पित किया—वे
मुझसे कभी नफरत नहीं कर सकते हैं । जबकि मैंने कोई गुनाह नहीं किया मैं
अपराधिनी नहीं हूँ, तब भी उनके दिल में शक हो जाय ! यह मानना आसान नहीं
है । खैर ! कुछ भी हुआ हो । जनानी ड्योढ़ी के फन्दों से बाहर आ गई थी—ऐसी
जगह—जहाँ मेरा कोई दुश्मन न था जो थे वे सभी दोस्त । हाँ रतना का न
सुना पाई थी सभी वक्त के साथ बदल गये थे, लेकिन वह न बदल पाई थी, लेकिन
मैं जानती हूँ कि मेरे आने के बाद उस पर भी बिजली गिरी होगी । उसे भी
यातनायें दी जा रही होंगी । या खुदा ! परवरदिगार ! अल्ला ताला ! उस
बिचारी का कोई गुनाह नहीं है उस पर तो रहम करना जो कुछ सजा देनी है,
मैं भोग लूँगी, सभी जुल्म हँसते हुए जी लूँगी, लेकिन अब किसी और पर गाज न
गिरे यही इल्तजा है ।—मैं ईश्वर के आगे हाथ जोड़कर उन सभी के लिए भीख
माँगने लगी—जिन्होंने मेरे लिए हमेशा पलक-पाँवड़े बिछाये । मैं उनके अहसानों
को भुलाना नहीं चाहती ।

—मेरे दुश्मनों का खयाल था कि मैं जहन्नुम में धकेल दी गई लेकिन मेरे
लिए तो वह भी जन्नत ही था । पति का नाम जहाँ भी हो, वह स्वर्ग ही है । मेरे

पास एक ही चि तन रह गया था--ग्रपना प्रियतम, इमके अतिरिक्त कुछ भी तो न रहा था। खयालो म डूबत तिरते वह ग्र धे री रात बीत गइ ग्रौर सुबह के सूरज की किरणें रोशनदान से तहखान तक ग्रा गिरी--मेरी ग्राखा पर प्रकाश की हल्की परतें नगमगा उठी, मैंन ग्रन्न ग्र नदाता का नाम लेते हुए प्रकाश को नमस्कार किया, तभी तहखाने का दरवाजा खुला। किलदार के साथ मुसाहिब पधारे थे। मैंने एक बार निगाह उठाकर देखा, लेकिन कह कुछ भी न सकी।

— बाईजी! बाहर ग्राईये!'

— ग्रभी तो उजाला है!"

— तहखाने से बाहर ग्राग्रो!

— क्यो मुसाहिब साहेब! यह जगह ग्रच्छी नही है क्या?"

— मैंने ग्रापके लिए खुली जगह म इ तजाम करवा दिया है।'

— 'ग्राप यह तकलीफ क्यो उठा रहे हैं? मैं यहा भी सुखी हूँ, मुझे कोई तकलीफ नही है। ग्राप भीतर तो पधारिये! ग्राप तो खुद यहा रह चुके हैं ग्रौर न जाने कब ग्राना हो जाये? ग्रच्छा! ग्राप भीतर नहीं पधारेंगे क्योंकि मैं तवायफ हूँ न जाने क्या दाग लग जाय?'

— मैं चाहता हूँ कि ग्राप ग्रपनी जिद छोड दें ग्रौर किलदार के हुकम के मुताबिक यहा रहे। जब तक ग्रापके मुकदमे का फसला नही हो जाता है तब तक ग्रापको यहाँ भी सुविधायें मिलती रहेंगी?

— मुझे मेरे दवता से मिला सकते हो?'

—मुसाहिब जड व त रहा।

— क्या तुम्हारे कानून की किताब मे इसके लिए कोई रियायत नहीं है।

— मुकदमे का फसला होने के बाद ही मिल सकेंगी।'

— मुलजिम की गर मौजूदगी म मुकदमे की सुनवाइ होगी मुलजिम को सफाइ के लिए मौका भी नही मिल सकगा?'

— ग्रन्नदाता की मर्जी पर है।

— ग्रापकी नीयत तो ठीक है?

— मैं मैं क्या कर सकता हू?

– आप मुसाहिब हैं लेकिन कौन से   ? आप कुर्सी का सौदा कर सकते हैं, किसी को कत्ल करवा सकते हैं किसी पर अहसान कर सकते हैं सोचिए मत, मैं आपसे कुछ भी न चाहूँगी।

–"आपको शक हो गया है।"

–"अन्नदाता को भी। कैसी दुनिया है? हर इन्सान वहम में जा रहा है, मैं भी और अन्नदाता भी, आप जैसे सौदागर वक्त का फायदा उठा रहे हैं।'

–'बाईजी! आप यह क्यों भूल रही हैं कि आप बागी हैं। आप रियासत की कुर्सी को हड़पने के लिए हमेशा लालायित रहीं। आपकी शह पाकर मीर ने हमला किया। आपने महाराजा को खबर भिजवाना भी उचित न समझा, ताकि मीर फतह पाकर आपको गद्दी सौंप दे और आप महाराजा जगतसिंह को कैद करके अपना गुलाम बनाये रखें। माजी साहिबा न होतीं तो इस सिंहासन पर पठानों की हुकूमत कायम हो जाती।'

–मैंने अपने दोनों हाथ कानों पर रखते हुए आकाश की ओर देखा। सुना करती हूँ कि ऊँचाइयों में कहीं भगवान रहता है वह सच झूँठ का निर्णय करता है। सरासर सफेद झूँठ! लेकिन न बादल गरजे और न बिजली ही कड़की, शायद उस पहाड़ी का एक पत्थर भी न लुढ़क सका। मैंने सहजता के साथ पूछा— और भी इल्जाम हैं?"

—'गुनहगारों के लिए इल्जाम क्या मायने रखता है? आपने महाराजा को अपने वश में कर खजाने को खाली करवा दिया। खजांची और भंडारी आपके इशारों पर दौलत लुटाते रहे। प्रजा गरीब हो चली दो वक्त की रोटियाँ मिलना मुश्किल हो गया लेकिन आपकी महफिलों की शान में कोई कमी न आई।

–'अब तो इस रियासत में मजलिस न जमेगी और महफिलें फिर न जुड़ेंगी?'

– आपने क्या नहीं किया?'

–'धोखा!"

– क्यों खुद को झुँठला रहे हो?'

– आखिर कहना क्या चाहते हो मुसाहिब? अपने दिल का दर्द उंडेल दो ताकि आराम की नींद सो सको! मुझे कुछ नहीं होने वाला है मेरी नींद तो पराई हो चुकी है।

– तभी तो याद आते होंगे ?"

—'जो अपने है वे तो हमेशा याद आते ही रहेंगे। महाराजा तुम लोगों की साजिश के शिकार हो गये लेकिन यह सच है कि वे मुझे कभी नहीं भुला सकते।"

—'महाराजा तो शायद आपका नाम लेना भी पसन्द नहीं करते कौन भला आदमी ऐसी पापिन का नाम लेना चाहेगा--जो उसकी जान की दुश्मन बन कर गैरों से इश्क फरमाये!

—"मुसाहिब! मुँह सभाल कर बात करो! जानते हो किससे बात कर रहे हो? वह रसकपूर मर सकती है—जो तुम्हारी रियासत की मलका रही हो लेकिन वह हमेशा अमर रहेगी—जिसने अपने प्रिय से पवित्र प्रेम किया है। तुम रसकपूर के आँचल पर कीचड के दाग नहीं देख सकते हो मन ही खून के घूँटे मिल सकते हैं। मेरे पवित्र प्रेम की तोहीन करने का तुम्हें हक नहीं है। मुझ पर कुछ भी तोहमत लगाओ बागी बताओ या गुनहगार कहो! मुझे हर सजा मजूर होगी लेकिन मेरे पाक दामन पर कीचड उछाला तो न जाने कहते कहते क्या रुक गई, आवाज धीमी हो चली फिर भी मैंने सभलते हुए कहा—'कहो! तुम भी कहो! रसकपूर बदचलन है! मैं अब कभी यह भी प्रतिवाद न करूँगी। जाओ! और सारे शहर में इश्तिहार लगवा दो। पर्चे बटवाओ। ढिंढोरा पिटवादो कि रसकपूर भगतण बदचलन है। तुम भूल गये कि एक पातुर बदचलन न होगी तो क्या होगी? रंडी का कोठा पाक दामन भले ही रहे लेकिन बदनामी की धूल तो जन्म के साथ ही रहती है। बदनाम को और क्या बदनाम करोगे? —कहती हुई मैं हस पड़ी।

—मुसाहिब किलेदार के कान में कुछ कह कर वहां से चल दिया। मैं मुकदमे के फसले तक उनका इन्तजार करती रही।

———

□ पन्द्रह

—न्याय तराजू में तुलता है लेकिन बिकता नहीं। राजमहलों में भी सोने की न्यायतुला आगन की शोभा बढ़ाती रहती है। हर शासक अपने आपको न्याय प्रिय घोषित करने के लिए यथासम्भव प्रयास करता है। हिन्दुस्तान के जहाँपनाह महान् अकबर भी न्यायतुला के प्रतीक रहे लेकिन उनकी तराजू भी पक्षपात कर बैठी। सलीम के गुनाह माफ कर दिये गये और अनारकली को सजा-ए-मौत! वाह रे इन्साफ! इन्सानियत के बन्दे! खुद का खुदा के पैगम्बर कहने वाले बादशाहों को इन्सानियत का नमूना! एक ओर पत्थर की प्रतिमाओं में जीवन्त कला के पक्षपाती और दूसरी ओर जीवन्त कला को नष्ट करने का संकल्प! राजनीति की दोहरी स्थिति! क्या ये शासक इन्सानियत का बाना पहिनते और उतारते रहते हैं? इन्हें समझना बहुत ही मुश्किल है। इन पर विश्वास किया जा सकता है लेकिन ये किसी पर भी विश्वास नहीं करते। सभी इनके पास पहुँच कर इन्साफ के लिए झोली फैलाते हैं और ये भगवान उन्हें न्याय की भीख अपनी कृपा पर बाँटते हैं। जिस पर कृपा हो गई—वह खुशनसीब और जिस पर नजर टेढ़ी उसे सजा-ए-मौत! कहीं भी सुनवाई नहीं आखिरी फैसला। कहते हैं—भगवान सब को देखता है सबकी सुनता है लेकिन मैं यह मानने को तैयार नहीं

हूँ। मैंने उनके दीदार के लिए क्या नहीं किया परवरदिगार के आगे हाथ फैलाकर एक ही चीज मांगा मिन्नतें की लेकिन कुछ न मिला भगवान की प्रतिमा के सामने हाथ जोड़े व्रत किये उपवास रखे लेकिन दूरियाँ बढ़ती ही गई। उन्होंने किसी को भेजकर अपनी रस की खबर भी न जाननी चाहा—जैसे कभी उनका कोई रिश्ता ही न रहा हो!

मेरे राज इस कदर बदल हो सकते हैं? यह तो मैंने कल्पना भी न की थी। वे मेरे क्या नहीं हैं? सब कुछ तो हैं मैंने उनके लिए क्या न किया? अपना शरीर मन औलाद का सुख और अपनी आकांक्षाओं को समर्पित कर दिया, अपना कुछ भी नहीं है जो कुछ था जो कुछ है वह सभी मेरे राज का। उनके नाम के सिवा किसी का नाम अधर पर न आया फिर भी अविश्वास के छन्न और शकभरी नजरें! मैं यहां कह सकती हूं कि दुनियाँ के मर्द महज मतलबी होते हैं और औरतों पर हमेशा शक की नजरें रखते हैं। मर्द पर अविश्वास या शक करने का हक औरत को नहीं है उसका जन्म तो सिर्फ फर्ज निभाने के लिए ही होता है।

—काश! एक बार वे मुझसे मिलते तो सही उन्हें वहाँ तक पधारने का वक्त नहीं था तो इस बाँदी को अपनी अदालत में हाजिर होने का ही मौका देते मैं मुजरिम की हैसियत से राज के दरबार में पहुंचती वे जो कहते उन सभी गुनाहों को मंजूर कर लेती इल्जाम खुद व खुद मंजूर कर लेती लेकिन इस बहाने उनके दीदार तो हो जाते। मैंने बहुत तदबीरें की लेकिन हर कोशिश नाकामयाब हुई। मुझ पर नाहक तोहमत लगाई गई जिन्हें कभी भी मैंने तसलीम नहीं किया। वे अन्नदाता हैं, उन्हें हक है उन्होंने नाहक बदनाम किया और मैं चुप रही चुप रहना मेरी मजबूरी थी। मेरे साथ जो बेअदबी हुई उसका कोई खास गम नहीं है क्योंकि तवायफ की जिन्दगी की शुरूआत ही बेअदबी से होती है। मेरे हुजूर एक मामूली औरत की तरह मुझे हाजिर होने का हुक्म फरमाते वे चाहते तो मुझे रोने का हक न देते क्योंकि उन्हें रोने से सख्त चिढ़ रही है। आप से सच कहती हूं कि मैं हंसती केवल हंसती अपनी तकदीर पर और मुस्कुराते हुए उनके द्वारा दी हुई सजा को गले से लगाती। उनके मन में मेरे लिए विश्वास तक न रहा वे मुझसे खौफ खाने लगे मुझे आफत समझकर दूर से ही टालने लगे। वक्त की बात है! फूल काँटा बन कर चुभने लगे!

—वे मुझे काँटा समझ कर दूर करने लगे लेकिन मैं आज भी अपने राज को नहीं भुला सकी हूँ। दिन भर मुझे खुली हवा में जीने का हक मिल गया था,

उनकी बहुत बडी मेहरबानी रही इसके खातिर उन्हें शुक्रिया अर्ज किये बिना नहीं रह सकती हूँ। उनके दिल में मेरा स्थान था लेकिन मेरी जगह खाली न रह सकी वह भर चुकी है उन्हें मेरी याद सताये यह मुमकिन न था। मेरे अन्नदाता नतकियों के बीच घिरे तारों की महफिल में चाँद की तरह राग रचा रहे थे, और मैं उनकी राधा दीदार के खातिर भी तरस रही थी लेकिन मेरी तड़फन से उन्हें कोई मतलब न था। मुझे इस विकल्पना में भी आनन्द का अनुभव हो रहा था। मैं एक ही खयाल में डूबी हुई हूँ कि आखिर कभी न कभी तो इधर भी नजर उठाकर देखेंगे।

— मेरे मुकदमे का फैसला हुआ इकतरफा। न्याय की तराजू हिल भी न सकी—और मेरे दुश्मनों ने गवाहों की एक फौज बनाकर पेश कर यह साबित कर दिया कि रसकपूर महाराजा जगतसिंह के सिंहासन पर अधिकार कर उन्हें कैद कर लेना चाहती रही है।

—आदमी को सिंहासन से बहुत बडा मोह है! वह ताज अपनी कुर्सी या ताल को नहीं छोड सकता है ताज पहिनने पर जो मद आता है, उसे छोड देना उसके वश की बात नहीं है। ताज मैंने भी पहिना था सिंहासन का सुख भी भोगा, लेकिन मेरे लिए इन सब का कोई अस्तित्व न था मैं तो उनके दिल के सिंहासन पर हमेशा ताजपोशी चाहती रही हूँ। मेरे राज को यह भी खयाल न आया कि मेरी इन नम कलाईयों में वह ताकत कहाँ से आयेगा— जिससे इस सत्ता की बागडोर संभाल सकती। उन्होंने एतबार कर लिया कि रसकपूर ने जरूर ही ऐसा इरादा किया होगा। इससे बढकर मेरे लिए कोई दुख की बात नहीं हो सकता है।

—इतिहास मुझे गुनाहगार कहेगा, आने वाला युग अपराधी पढेगा रियासत की नजर बागी समझेगी दुनियाँ के लिए नजीर बन गई हर सिंहासन तवायफ कौम से कतरायेगा नफरत करेगा। मुझ पर दाग लगा यह कोई वदना नहीं है लेकिन तवायफ की कौम बदनाम हो चली इस दर्द को मैं मर कर ही कभी भुला सकूँगी। जनानी ड्योढी के शरीर पर हजारों दाग हैं वहाँ साजिश की बू है, कत्ल के इरादे हैं खून के दाग हैं, लेकिन वह ईमानदारी का बाना पहिन,चुकी और वफादार साबित हुई उन पर कभी शक नहीं हो सकता, क्योंकि राजघराने की मुहर लगी हुई है। मैं अभागिन बदचलन, बदनाम, बदकिस्मत बागी साबित हो गई।

—अन्नदाता ने मुझे सजाए मौत का हुक्म दिया। मेरी इजलास में बावन कचेडियों और छत्तीस कारखानों के लोग मौजूद थे, रियासत से ताजीमी

सरदार और सामन्त सुनते रहे। जनानी ड्योढी में खुशी की लहर छा गई। जलधारी जब जल से भरी झारी लेकर आया तो उसने बताया कि आपके साथ न्याय नहीं हुआ। मैं उसे क्या जवाब देती?

मेरे देवता को अकबर का फैसला याद आ गया, जो सजा अनारकली को मिली थी—वही मुझे दी गई थी।

शहंशाह अकबर ने सजा दी थी कि उनके शहजादे को अनारकली ने बहकाया मोहब्बत का सब्जबाग दिखाकर एक मामूली औरत ने हिन्दुस्तान की मलका बनने की साजिश की। सलीम सिंहासन के आगे बदल गया अपने वायदे और दिल की तपिश! एक अभागिन औरत को जिन्दा दीवार में चुनने का हुक्म हुआ।

मेरे हुजूर ने भी इतिहास को दुहराया। नजीर को ध्यान में रखते हुए मुझे भी जिन्दा चुने जाने की सजा मिली। मौत भी मिली तो आराम की नहीं रोंगटे खड़े हो गये मन में दहशत भर गई आँखों के सामने अन्धेरा छा गया। कल सुबह ही गोलमदार के द्वारा तोप दागे जाने के साथ ही यह रस्म पूरी होनी थी। एक घड़ी के लिए तो रोना आ गया मुँह से चीख निकल गई लेकिन धीरे धीरे खुद को समझाया, बाँदियों को तसल्ली दी। मैंने अनारकली के बारे में पढ़ा या सुना था—उसी से दिल में दर्द पैदा हो जाता था लेकिन जब यह खबर मिली कि अन्नदाता के हुक्म से कल सुबह बेजारे मुझे पत्थर के बीच चुन देंगे। मुझे यह पूछने का भी हक न होगा कि मेरे साथ यह सलूक क्यों किया जा रहा है? उस घड़ी मेरी क्या स्थिति हुई? आपको क्या नहीं कर सकती हूँ। आप खुद ही अन्दाज लगा सकते हैं कि इस दौर से गुजरना हो तो दिल पर क्या बीतती?

काश! मेरे हुजूर मेरे दिल को नश्तर से चीर कर लहू के कतरे कतरे को परखते और हासिल की जानकारी प्राप्त करते फिर कहते कि इस कतरे में इंकलाब की बू है! मैं कब बागी रही कब मैंने विद्रोह का स्वर छेड़ा? आखिर मुझे भी कुछ बनाते तो सही, मेरे अन्तर मुझे एक बार तो मौका देते।

मेरे दिल में तूफान तो बहुत हैं, पर सभी खामोश हुए बैठे हैं ख्वाहिश भी सो गई है अब यादें ताना भी सताने का नाम न लेंगी। मैं तो खुद अपनी जिन्दगी से परेशान हूँ किसी से क्या कहती? मौत दबे कदम बदल कर नजदीक चली आ रही थी।

साँझ का वक्त। सूरज महल में नीचे लुढ़क चुका था—और सिन्दूरी सिमिट कर

काजल की झील म डूबत जा रही थी—उस वक्त किशोर मेरे पास आकर गुमसुम सा खड़ा हो गया।

– तुम उदास क्यों हो?"

– बाईजी! विश्वास नहीं हो रहा है।"

– विश्वास तो मुझे भी न था।'

–'अन्नदाता ने अपने हृदय पर पत्थर रख लिया।

– न, न ऐसे न कहो पत्थर नहीं रंग बिरंगी तितलियों का बोझ जरूर आ गिरा होगा।'

–' इतनी कठोर सजा ?'

— यह सजा नहीं नजराना है! मैंने उनसे प्रेम किया हर घड़ी हर पल राज मेरी भावनाओं की कद्र करते रहे। जब उन्होंने देखा कि यह जमाना रसकपूर को उनकी नजरों से दूर कर देना चाहता है तो वे लाचार हो गये। रसकपूर भी यह तो कभी नहीं चाहती कि एक पातुर के लिए आमेर के महाराजा सिंहासन छोड़ कर भिखारी बन जाय! अपने प्रेम के लिए मैं कभी बलिदान न चाहती थी, लेकिन मेरे हुजूर ने बहुत बड़ा त्याग किया है बलिदान किया है जिसे कोई नहीं समझ पायेगा। मैं जानती हूं कि महाराजा मुझे कितना प्रेम करते हैं? मेरे लिए उन्होंने क्या नहीं किया? सभी कुछ तो छोड़ दिया था यहाँ तक कि अपना ताज भी मेरे सिर पर रख दिया और ठाकुरों से बर मान ले बैठे! जब राज्य का सवाल पैदा हो गया तो निर्णय जरूरी था कि वे इस मोह को तोड़ दें। मैं नहीं जानती कि टूटा या नहीं लेकिन इतना अवश्य कह सकती हूँ जिस सोने की कलम से महाराजा ने यह परवाना लिखा होगा उसे उसी समय अपने हाथों से तोड़ फेंका होगा।

मैंने अपने अपवित्र हाथों से हजारों लोगों को जीवन से मुक्त किया है, लेकिन इस रियासत के इतिहास में यह पहली घटना होगी कि किसी औरत को इतनी बड़ी दर्दनाक सजा!

—औरत! सुन्दरता की मूर्ति है न? मेरे देवता सुन्दरता के उपासक रहे हैं वे कभी अपमान नहीं कर सकते! रसकपूर को अपनी निगाहों से कभी दूर नहीं कर सकते। मेरी देह को दीवार में इसी खातिर चुनवा रहे हैं ताकि जब कभी वे चाहें मुझसे आकर बतिया सकें। यह तो मेरा सौभाग्य है कि इन्हीं महलों में रहूँगी और मुझसे नफरत करने वाले मेरे लोग मुझे मौके बे मौके पर याद करते रहेंगे।

— आपकी आखिरी इच्छा ! —कहता हुआ किलेदार रुक गया।

— अब कोई इच्छा रही हो नहीं। मेरे देवता के दर्शन करना चाहती थी लेकिन अब मैं यह इलजा न करूँगी। वे मेरी प्रार्थना स्वीकार कर के यहाँ आ भी पहुँचे तो अपनी रूप का यह हाल देखकर अपने हृदय पर काबू न रख सकेंगे। दर्द के उफनते सागर को उन्होंने बड़ी मुश्किल से बाधा होगा मुझे देखकर दीवार टह जाने का खतरा है। मैं नहीं चाहूँगी कि मेरे देवता दर्द के समुंदर में डूब जायें! ईश्वर उन्हें हजार साल की उम्र दे! मेरी जैसी नर्तकियां के कदमों में बिजलियाँ जन्म लेती रहें और मेरे अन्नदाता इस चकाचौंध में रस की मुस्कुराहट को याद करते रहें।

– आप कुछ कहें तो मैं अन्नदाता तक आपका पैगाम पहुंचा दूँ

— नहीं अब कुछ नहीं कहना है रसकपूर इस देह से जुदा होने जा रही है न कि देवता के हृदय से। किलेदार ! तुम नहीं समझ सकते हो ! मुझे उन्होंने अपने पास बुला लिया है यह सब तो दिखावा है दिखावा ! तुम लोग मुझे नहीं देख सकोगे लेकिन मैं तुम सभी को देखती रहूगी। अब अन्नदाता इस किले में किसी को न भेजेंगे। यह किला मेरे देवता ने मुझे दे दिया है मेरी मजार रहेगी यहाँ यहाँ की हवाओं में मेरा सुर गूँजेगा और यहाँ का कण कण कदमों की थिरकन जीयेगा। मेरे राज यहाँ आयेंगे यहाँ के पत्थर पत्थर में उन्हें रसकपूर की देह की मदभरी गन्ध मिलेगी। तुम नहीं जानते ! वे इस किले को मंदिर बना देना चाहते हैं ! शहंशाह शाहजहाँ की तरह वे भी ताजमहल का निर्माण करना चाहते हैं यह किला मेरा ताजमहल होगा। ताजमहल ! प्रेम का दिव्य प्रतीक ! मेरे देवता ने मुझे अमर बना दिया !"
कहते हुए मैं अट्टहास करने लगी।

—किलेदार सहमा सहमा सा मुझसे दूर होने लगा वह विस्फारित आँखों से मुझे घूर रहा था। मैंने अपनी मुक्त हँसी को रोकते हुए कहा —'सुनो ! कल यहाँ महाराजा आयेंगे ! तुम उनसे कुछ भी न कहना।

—वह चुपचाप खड़ा रहा।

—'और देखो उनका साथ एक पल भी न छोड़ना साये की तरह उनके पीछे लगे रहना। महाराजा यहाँ आयेंगे मेरी मजार पर अपनी अंजुरी में फूल बरसायेंगे। मैं जानती हूँ वे बहुत कमजोर हैं उनका हृदय बर्फ की तरह पिघलता है वे फूलों के साथ आँसू भी ढुलकायेंगे। उस वक्त तुम चुप न रहना।

अन्नदाता से अर्ज करना की इस किले की रानी का हुक्म है कि यहां कोई आँख से आँसू नहीं ढुलका सकता। व तुम्हारी ओर देखेंगे, लेकिन तुम हिम्मत न हारना। मैं तुम्हारे साथ रहूँगा तुम अन्नदाता को सहारा देकर किले से बाहर तक ले जाना उन्हें यहां अधिक देर न ठहरने देना।"

— "रानी साहिबा" —उसके मुँह से अचानक चीख निकल गई।

— 'तुम क्यों डर रहे हो ? तुमसे कभी कुछ न कहूँगी, तुम्हारे इस किले की रक्षा करूँगी यहाँ मौत का खूनी नाच कभी न होने दूँगी अब किसी मुसाहिब के गले मे फाँसी का फन्दा न भूलेगा यह इमारत ये। महल। अब किसी राजा के नहीं केवल मेरे हैं यहां केवल मेरा हुक्म चलेगा। कोई महाराजा यहाँ नहीं रह सकेगा न किसी को यहाँ मौत से गले लगना होगा। मेरी अपनी रियासत है, यहाँ की रियासत अमन के साथ जिन्दगी जीयेगी। किलेदार तुम मेरी आखिरी इच्छा पूरी करोगे ?'

— रानी साहिबा का हुक्म।

— नई ओढ़नी और लहंगा मंगवा दो साथ मे घुँघरू भी। घुँघरुओं को मैं नहीं भुला सकती हूँ ये ही तो मेरी जिन्दगी के हमराज रहे हैं। मुझे हर कोई छोड़ सकता है भुला सकता है, लेकिन मैं घुँघरुओं को कैसे भुला दूँ ?"

—किलेदार चला गया। मैंने उस रात स्नान किया अपने खुले बालों को कन्धों पर इस तरह लहराने लगी जैसे कोई बिजली अपनी देह से बादलों को कभी बाँधना चाहे और कभी मानने का मौका दे। आँखों मे काजल आँजा माँग में कुंकुम भरा। रतना न थी वर्ना हाथो मे मेंहदी की कल्पना और पैरों मे महावर लगाये बिना नहीं रहता। मैंने लाल रंग की चूनरी और लहंगा पहिन कर कदमों मे घुँघरू बाँध और उस घड़ी जुदाई के नगमे या दर्द के गीत न गाकर प्रिय मिलन का अनुराग मुझे गजल गाने को प्रेरित करने लगा। उस रात मैंने जी भर नृत्य किया, मुझे मालूम नहीं कि मेरे कदमों से कब रक्त बहने लगा, मैं तो बेसुध थी उन्होंने न रोका और न टोका हो। मुझे ऐसा लग रहा था कि मेरे राजा मेरे साथ मौजूद थे। मैं अपनी समस्त चेतना समर्पित कर चुकी थी —अपने आनन्द को। जीवन मे नृत्य ही मेरा महावर रहा जब कभी टूटने लगती वह मेरे कदमों मे एक नई शक्ति बाँध देता और मैं भूल जाता दुःख दर्द को भीगी हुई कथा को। मेरे कदम ठहर न पाये थे कि तब तक मेरे कानों मे किसी परिचित का स्वर गूँज उठा—रानी साहिबा।'

—मैं चौंक पडी। मैंने दरवान की ओर देख कर आगंतुक को पहचानने का यत्न करते हुए कहा—„तुम!

— हां रानी साहिबा!

— तुम यहां कैसे!

— अन्नदाता का हुक्म!'

—'क्या तुम्हें भी बन्दी बना लिया गया?'

— नहीं रानी साहिबा!'

— भगवान! तुम सभी पर मेहरबानी रखे!

— अन्नदाता बहुत दुखी हैं लेकिन मजबूर हैं अन्नदाता के हुक्म से मैं यहाँ आया हूँ आप अभी यहाँ से निकल चलिये!'

— नही नहीं यह सौभाग्य मुझसे मत छीनो!

— महाराजा का आदेश है आपके बिना उनकी क्या दशा हो रही है? मैं कुछ भी नहीं कह सकता हूं।

— अब मोह को फिर से न जन्म दो! मै सब कुछ भुला चुकी हू, अमर हो जाना चाहती हू भगवान! यह सब कुछ क्या होने जा रहा है?

— रानी साहिबा! राज्य की स्थिति डांवाडोल हो रही है ठाकुर-सामन्तो की मार जगी, ड्योढी में आग दुश्मनों द्वारा हमले और लूट मार की धमकी। कपटद्वारा चाला हो चला है चारो ओर त्राहि-त्राहि मचा हुई है ऐसी दशा में महाराजा के लिए लाजिमी हो चला था कि वे सामन्तों को खश करने के लिए यह नाटक खेलें! आपको दुख हुआ होगा लेकिन अन्नदाता को गलत न समझिये!

—मै कुछ न कह सकी और भावावेश में उसके साथ हो चली। उस घडी भूल गई कि सुन्दरगढ मेरा है और मै इसकी अधीश्वरी हूँ। वह मुख्य द्वार से न जाकर पीछे की ओर से उतरना चाहता था। मैंने जिज्ञासावश सवाल किया—इधर से क्यों?'

— किसी को कुछ भी न मालूम हो। यह राज राज ही रहे!—अन्नदाता का हुक्म है।

—मैं अपने राजद्वार की आज्ञा का उल्लंघन कैसे कर सकती थी? पीछे की ओर एक तंग रास्ता पहाडी पर खुलता है, वहां हम लोग पहुँच गये, कुछ सैनिक

हमारी इन्तजार कर रहे थे। पहाड़ी पर से रस्सा लटक रहा था, जिसके सहारे उतरना था। मौत से भी बढ़कर डरावना दृश्य! हाथ छूटे या कदम फिसले कि कहां ठिकाना ही न मिल सके लेकिन उससे मिलने की तीव्र लालसा मे मौत का भय भी न टिक सका और मैं रस्से के सहारे पत्थरों से टकराती हुई नीचे की ओर उतरने लगी। ऊपर की ओर मेरा अपना सुदर्शनगढ़ अपनी अधीश्वरी का इस तरह भागते हुए देखकर भी चुपचाप खड़ा था।

—हम सभी नीचे आ पहुँचे थे। वहाँ मेरे लिए पालकी तैयार थी। सिपाहियों की वेश भूषा देखकर मुझे शक हुआ लेकिन मैंने यही समझा कि मेरे राज ने इसे राज रखने के लिए यह सब कुछ किया होगा। मैंने आतिश के हाकिम से सवाल किया—' इधर कहाँ चल रहे हो ?"

— परकोटे से बाहर।'

—'क्यों ?"

—'आपको खुशी नहीं है ?'

—'मैं तो खुशी और गम दोनों को भुला चुकी हूं।'

—' आपका मैन सुकून जो कराया है।'

— तुमने ?'

—'हाँ, किलेदार को खबर तक भी नहीं है सब गहरी नींद में खर्राटे भर रहे हैं।

— क्या अन्नदाता के हुक्म से —— ——' —
कहते हुए मैं उसकी ओर शंकित नजर से देखने लगी।

—' वह अट्टहास करने लगा। उसकी आँखों में अविश्वास उफन रहा था।"

— मैंने उससे कहा—तुमने मेरे साथ ही नहीं रियासत के साथ धोखा किया है जानते हो! इसकी तुम्हें कड़ी सजा मिलेगी।'

—'बाईजी! मैंने अपना मुख अवश्य देखा है, लेकिन आपका यह सुन्दर शरीर दीवारों में चुनने के लिए नहीं है जिसके चर्चे हिन्दुस्तान में दूर दूर तक फैल रहे हैं उसे इस तरह नष्ट होते हुए मैं नहीं देख सकता हूं।'

— तुम कौन होते हो मेरे बारे में खयाल रखने वाले ?

— सुन्दरता का कौन पुजारी नहीं होता है ?

— क्या बक रहे हो ?'

—'आम आदमी के हृदय में सौन्दर्य के प्रति आकर्षण है रूप के प्रति सम्मोहन है। आपको तो कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिये कि आपका जीवन दान दिया है, आपको नारकीय यातनाओं से निकाल कर स्वर्ग की ऊँचाइयों की ओर ले जा रहा हूँ।'

—मैं समझ गई थी कि वह अन्नदाता के हुक्म से नहीं, अपनी स्वार्थपरता के कारण मुझे वहाँ से भगाकर लाया था। मैं भी कितनी मूर्ख और कितनी भावुक औरत हूँ कि अन्नदाता का नाम सुनते ही अपने सकल्प भुला बैठी और वहाँ से चली आई? हाय रे दुर्भाग्य! तुमसे मेरी कुर्बानी भी न देखी गई!

—परकोटे से बाहर निकल कर कुछ दूर ही आगे बढ़े होंगे कि मैंने उससे पूछा—'तुम मुझे कहाँ ले चल रहे हो?'

— अब आपसे क्या छिपाना? आपने आज तक जो कुछ जिया है वह तुच्छ है! मैं आपको वहाँ पहुंचा रहा हूं जहाँ आपका स्वागत स्वयं कुबेर करेगा। जिसने हिन्दुस्तान के हर शहर में तहलका मचा रखा है जिसका नाम सुनकर बड़े बड़े महाराजा और बादशाह थर्रा रहे हैं दिन में ही शहरों के दरवाजे बन्द हो जाते हैं जिसके पास भव्य महल और हीरे जवाहरात का खजाना भंडार है जो आपके रूप की चर्चा सुनकर शलभ की तरह आपको पाने के लिए विकल हो रहा है उस मराठा सरदार के इशारे से ही आपको मुक्त कराया गया है और आपको वहीं चलना है।'

—मेरे मुख से चीख निकल गई—'नहीं नहीं यह कभी नहीं हो सकता। गाड़ीवान! गाड़ी रोको! वर्ना मैं कूद पड़ूंगी!

— बैलों की गति धीमी पड़ गई मैं झटके के साथ सग्गड़ से उतर पड़ी थी। मैंने उस की ओर क्रोध भरी दृष्टि से देखते हुए कहा कमीने! नीच! तुम्हारी यह हिम्मत! मुझे दुश्मन के महल में पहुंचा रहे हो। भूल गये कल तक मैं यहाँ की महारानी थी और आज भी हूं। यदि मेरे देवता मुझसे नाराज हैं तो इसका यह मतलब नहीं कि तुम मेरा सौदा करने को आमादा हो जाओ।

— बाईजी! पीछे की ओर मुड़ कर मत देखो! वहाँ जिन्दगी नहीं मौत इन्तजार कर रही है।'

—'मुझे इस मौत से बेहद प्यार है!"

— मैंने कोई गुनाह नहीं किया, आपके भले के लिए ही तो सब कुछ किया है।

—"मुझे कहीं नहीं जाना है मुझे अपने किले में ही लौटना है।

—'बाईजी ! यह नामुमकिन है।'

— तुम मेरा सौदा नहीं कर सकते हो !

—'मैंने वचन दिया है।"

—'मन तो नहीं। तुम जैसे लोगों के कारण ही मेरी रियासत गरीब होती रही है आज अन्नदाता के सामने जो मुसीबत खड़ी हुई हैं, तुम जैसे कमीने कुत्तों की ललचाई जीभ का नतीजा है।"

— बाईजी ! समय नष्ट न करो ! अपना अहित करने क्यों जा रही हो ?"

—'कमीने ! मैं बाईजी अवश्य रही, लेकिन अब किसी के नाम का कुंकुम मेरी मांग में भरा हुआ है। इस देह पर मेरा अधिकार नहीं है, इस मन पर मेरा हक नहीं है। मैं किसी की धरोहर हूँ।'

— सुबह होने का वक्त आ रहा है, आप जिद न कीजिए।'

—"सुबह ! अब सुबह कहाँ है ? जिन्दगी में ऐसा अंधेरा आ गया है कि बरसों बीत जायेंगी लेकिन कभी सुबह न आ सकेगा।"

— सिपाहियों ! यह एसे नहीं मानेगी, इसे उठाकर सगरड में डाल दो और रस्सियों से बाँध दो।' —उसने आवेश के साथ सैनिकों को हुक्म दिया।

—'खबरदार ! किसी ने एक कदम भी आगे बढ़ाया तो !'

— 'अरे ! खड़े क्या देख रहे हो ?'

—एक सैनिक साहस के साथ आगे बढ़ा वह मुझ तक आकर पहुँचे उससे पूर्व मैं दूसरे सैनिक तक पहुँच गई और उसकी कमर में लटकती म्यान से तलवार खींचकर उस कमीने की गरदन पर इस कदर मारी कि उसके मुँह से चीख निकल गई और मैं खून से भीग गई। पलक झपकते ही सैनिक और गाड़ीवान भाग छूटे। वह कराह कर जमीं पर गिर पड़ा। मैं उस क्षण क्रोध में तिलमिला रही थी भूल गई थी कि मेरा अस्तित्व क्या है ? मुझे तो उस घड़ी खयाल आया—जब मेरे कानों में तोप की आवाज गूंज उठी।

—यह वह आवाज थी—जिसके साथ ही प्राण बाण की मंगलमय बेला

के शुभ मुहुर्त में रसकपूर को नीवार में चुना जाना था। पत्थर चूना चुनने वाले सभी इन्तजार कर रहे होंगे।

मैं भागने लगी—उस किले की ओर! भागती रही थक गई लेकिन विश्राम नहीं लिया पैरों में छाले पड़ गये श्वांस भर आई लेकिन मैंने ठहरने का नाम न लिया, हाय री किस्मत! मेरे दुर्भाग्य! दुश्मन फिर बाजी मार गये! रसकपूर रास्ता भटक गई और उस दिन किले तक न पहुँच सकी।

—मुहुर्त टल गया। दिन ढल गया फिर वही अंधेरा! और गुमसुम सी रात में भयानक सन्नाटा!

—मैं उस दुष्ट से तो खुद को बचाने में कामयाब हो गई लेकिन मंजिल को न पा सकी। तभी से भटक रही हूँ मेरे कदमों की हिम्मत कोई चुरा कर ले गया है, मैं गुनहगार की तरह जी रही हूँ, अपने कानों से ही अपनी बदनामी के चर्चे सुनकर जिन्दा हूँ। एक तवायफ की किस्मत में सजा-ए मौत भी नहीं लिखी थी वह भी मुझसे नफरत करती रही है।

—आपको भी हक है कि मुझसे नफरत करें, मुझ पर कीचड़ उछालें! लेकिन मेरा यह हक न छीनें कि मैं उनके नाम की अमर कुंकुम भी अपनी मांग में न भर सकूँ।

—खुदा आप सभी को सुखी रखे। मुझे अपनी जलन में जीने के लिए हजार साल की उम्र दे ताकि मैं अब किसी जन्म में तवायफ के घर न जन्म ले सकूँ।